पुस्तक-वर्गीकरण कला

द्वारकाप्रसाद शास्त्री
पुस्तकालयाध्यक्ष
हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग
उपाध्यक्ष उत्तर प्रदेश लाइब्रेरी एसोसिएशन

भूमिका-लेखक
डॉ० जगदीशशरण शर्मा
एम ए, पी-एच डी (मिशिगन)
पुस्तकालयाध्यक्ष एवं पुस्तकालय-विज्ञान प्रशिक्षण अधिकारी
हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी



हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी–१

लेखक की अन्य पुस्तकें

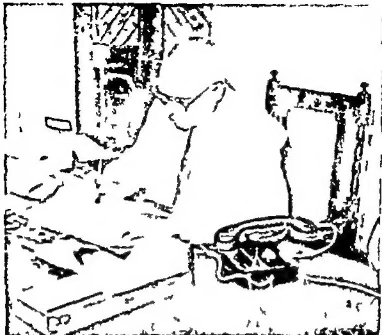
पुस्तकालय संगठन और संचालन
पुस्तकालय-विज्ञान
भारत में पुस्तकालयों का उद्भव और विकास

*

जुलाई : १९६२
[११००]
मूल्य : पाँच रुपये मात्र

*

प्रकाशक हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय
पो० बक्स नं० ७० ज्ञानवापी वाराणसी-१
मुद्रक 'दुर्गा' प्रेस
[illegible] वाराणसी [illegible]-२
आवरण [illegible]



श्री एल० कोरहीन एम० ए० [illegible]
अध्यक्ष
पुरातत्त्वमानविज्ञान विभाग
[illegible] विश्वविद्यालय

भूमिका

स्वाधीनता के बाद से देश का चतुर्मुखी विकास हो रहा है। पुस्तकालयों के व्यापक प्रसार के लिए भी उच्च स्तर पर योजना कार्यान्वित की गई है। भारत सरकार के शिक्षामंत्री माननीय डा० श्रीमाली के दिनांक १५ ५८ के वक्तव्य से इसकी पुष्टि होती है जो कि उन्होंने स्वतंत्र सदस्य श्री एस० एन० दास द्वारा प्रस्तुत पुस्तकालय फंड की व्यवस्था से सम्बन्धित एक प्रस्ताव पर टिप्पणी करते हुए लोकसभा में दिया था। डा० श्रीमाली ने बताया कि भारत सरकार ने देश में पुस्तकालय-विकास के सम्बन्ध में एक लाइब्रेरी एडवाइजरी कमेटी बनाई था। उसकी रिपोर्ट मिल गई है उसमें दी गई सिफारिशों पर विचार किया जायगा। एक दूसरी कमेटी प्रदेशीय सरकारों के पथ प्रदर्शन के लिए माडल लाइब्रेरी एक्ट' तैयार कर रही है। सीमित साधनों के कारण यद्यपि प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत पुस्तकालय-विकास में बहुत सफलता नहीं मिल सकी है फिर भी सरकार इसके लिए निरन्तर प्रयत्न कर रही है कि देश में समन्वित पुस्तकालय प्रणाली की व्यवस्था हो जाय।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत होने वाले पुस्तकालय-विस्तार की सफलता के लिए लाखों प्रशिक्षित पुस्तकालय-कर्मचारियों की आवश्यकता है जिनके लिए पुस्तकालय-विज्ञान-प्रशिक्षण केन्द्रों का तथा भारतीय भाषाओं में लिखित पुस्तकालय-विज्ञान सम्बन्धी समृद्ध साहित्य का होना आवश्यक है। हिन्दी भाषा को सभी विषयों की शिक्षा का माध्यम तभी बनाया जा सकता है जब कि पाठ्य-पुस्तकें हिन्दी में हों। पुस्तकालय विज्ञान की शिक्षा का हिन्दी माध्यम अभी इसी लिए नहीं हो सका है। इस ओर हमें प्रयत्न करना होगा जिससे निकट भविष्य में हिन्दी में पुस्तकों का अभाव न रहे।

इसके अतिरिक्त पुस्तकालय-विज्ञान को एक विज्ञान का वास्तविक रूप देने के लिए भी हिन्दी में भारतीय दृष्टिकोण से लिखित पुस्तकालय-विज्ञान सम्बन्धी साहित्य की आवश्यकता है। अमेरिका और ब्रिटेन आदि देशों में विद्वानों ने पुस्तकालय-विज्ञान का साहित्य समृद्ध करके ही इसकी प्रतिष्ठा विज्ञान के रूप में की है।

अतः द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पुस्तकालयों के विकास की सफलता के लिए पुस्तकालय-विज्ञान की हिन्दी माध्यम से शिक्षा देने के लिए एवं इसे

विज्ञान की श्रेणी में स्थापित करने के लिए विशेष रूप से हिन्दी भाषा में इस विषय की पुस्तकों का होना आवश्यक है।

हिन्दी भाषा में ऐसा साहित्य प्रस्तुत करने के लिए कुछ लेखक प्रयत्नशील हैं। उनमें श्री द्वारकाप्रसाद जी शास्त्री का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इस दिशा में उनकी यह चतुर्थ पुस्तक है। यह पुस्तकालय-विज्ञान की एक प्रमुख शाखा 'पुस्तक-वर्गीकरण' पर लिखी गई है। इसमें विषय के सिद्धान्त और प्रयोग दोनों पक्षों का सरल भाषा में सुन्दर विवेचन किया गया है। सिद्धान्त पक्ष को प्रस्तुत करते समय लेखक ने भारतीय पुस्तकालय-आन्दोलन के जनक डा॰ रंगनाथन जी के वर्गीकरण-सिद्धान्तों का विशेष रूप से विस्तारपूर्वक प्रतिपादन किया है। वर्गीकरण-सम्बन्धी पाश्चात्य तर्कशास्त्र के सिद्धान्तों को अधिक स्पष्ट करने के लिए अनेक अच्छे एवं सरल उदाहरण दिए गए हैं। वर्गीकरण का ऐतिहासिक विकासक्रम बताते हुए प्रमुख ६ अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त वर्गीकरण पद्धतियों का परिचय दिया गया है जिनमें दशमलव और कोलन-पद्धतियाँ अधिक विस्तारपूर्वक समझाई गई हैं। अन्तिम अध्याय में पुस्तक-वर्गीकरण सम्बन्धी प्रयोगात्मक कठिनाइयों के सम्बन्ध में नियम दिए गए हैं। पुस्तक की सम्पूर्ण सामग्री अंग्रेजी भाषा में लिखित इस विषय के प्रामाणिक ग्रन्थों पर आधारित है किन्तु लेखक की मजी हुई विषय प्रतिपादन शैली ने सामग्री को एक नए साँचे में ढाल दिया है। पारिभाषिक पदावली का चुनाव अंग्रेजी पदों के अनुरूप है।

हिन्दी भाषा में पुस्तकालय विज्ञान के एक प्रमुख अङ्ग पर इस पुस्तक को प्रस्तुत करने के लिए श्री शास्त्री जी स्वभावतः हम सबों की बधाई के पात्र हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि उनकी अन्य पुस्तकों की भाँति इस पुस्तक का भी भारतीय पुस्तकालय-जगत् गहरा स्वागत करेगा।

हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी
१४ ५ १९५८

(डॉ०) जगदीशशरण शर्मा
पुस्तकालयाध्यक्ष
तथा
पुस्तकालय-विज्ञान प्रशिक्षण-अधिकारी

दो शब्द

पुस्तकालय विज्ञान का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। भारतीय दृष्टिकोण से हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में लिखित इस विषय का साहित्य समुद्र में एक बूँद के समान है। अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित पुस्तकालय विज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें तथा अन्य अध्ययन-सामग्री को देख कर विस्मय होता है और एक व्यथा सी होती है कि हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी में ऐसा समृद्ध साहित्य कब आ सकेगा। मैं अपनी सीमित सामर्थ्य के अनुसार कुछ वर्षों से इस दिशा में प्रयास करता रहा हूँ। इस कार्य में मुझे शिक्षा एवं शासन की ओर से कुछ प्रोत्साहन भी मिलता रहा है और मेरी पुस्तकों का समादर भी हुआ है परन्तु यह कार्य एक व्यक्ति के वश की बात नहीं है। इस विषय के साहित्य के विभिन्न अंगों पर प्रामाणिक एवं स्थायी महत्त्व के ग्रंथों को प्रस्तुत करने के लिए एक सुव्यवस्थित योजना के अनुसार कार्य करने की आवश्यकता है। इसके लिए इस क्षेत्र के कुछ उत्साही नवयुवक लेखकों के एक दल का संगठन होना चाहिए जिनको कि विभिन्न अंगों पर पुस्तकें लिखने में श्री डा० एस० आर० रंगनाथन, श्री बी० एस० केशवन, श्री डा० डी० वाकनीस, श्री एस० बशीरुद्दीन, सरदार सोहन सिंह, श्री एन० एम० केसकर, श्री डा० आर० कालिया, श्री पी० सी० बोस, श्री एस० दास गुप्त, एवं डा० जगदीशशरण शर्मा प्रभृति विद्वान् एवं अनुभवी पुस्तकालयाध्यक्षों का पथ प्रदर्शन प्राप्त हो। ऐसा करने से जल्दी ही हिन्दी में इस विषय की पर्याप्त पुस्तकें आ सकेंगी और इस विज्ञान की शिक्षा का माध्यम भी हिन्दी हो सकेगी।

प्रस्तुत पुस्तक इस दिशा में मेरा चतुर्थ प्रयास है। इस पुस्तक को लिखने में मुझे जिन सज्जनों से सहायता मिली है उन सभी पुस्तकों के लेखकों का मैं हृदय से आभारी हूँ। माननीय डा० जगदीशशरण शर्मा का मैं विशेष कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इस पुस्तक को पढ़ कर अपने विचार भूमिका के रूप में लिखने का कष्ट स्वीकार किया है। प्रिय भाई [illegible], एम० ए० ने इस पुस्तक की कापी तैयार करने, प्रूफ बहुत ही सावधानीपूर्वक पढ़ने और अनुक्रमणिका तैयार करने में मेरी बहुमूल्य सहायता की है। अतः मैं उनका आभारी हूँ।

—द्वारकाप्रसाद शास्त्री

विषय-सूची

वर्गीकरण का सिद्धान्त पक्ष

'पुस्तक-वर्गीकरण' स्वयं कोई साध्य नहीं है। यह पुस्तकालय विज्ञान के सिद्धान्तों की पूर्ति का एक प्रमुख साधन है। पुस्तकालय विज्ञान के दो सिद्धान्त इस बात पर बल देते हैं कि पुस्तकालय में पाठकों को उनकी अभीष्ट पुस्तकें सरलतापूर्वक मिलनी चाहिए और उन पाठकों का समय नष्ट न होना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनेक प्रकार की टेकनिकल विधियों का आश्रय लिया जाता है। उनमें से 'पुस्तक-वर्गीकरण' एक प्रमुख विधि है। अतएव इसे पुस्तकालय की आधार शिला कहा गया है।

वर्गीकरण का विकास मानव की विचार शक्ति के विकास के समानान्तर होता रहा है। यह वर्गीकरण मुख्यतः तर्कशास्त्र का विषय है। पुस्तक-वर्गीकरण में वर्गीकरण सम्बन्धी तार्किक नियमों का विशेष रूप से आश्रय लिया गया है। अतः सर्वप्रथम यह समझना आवश्यक है कि तर्कशास्त्र में वर्गीकरण करने की क्या पद्धति स्थापित की गई है।

परिभाषा

वर्गीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें पदार्थ का उनकी समानता और असमानता के आधार पर मानसिक दृष्टि से एकत्रित किया जाता है जिससे हमारे कुछ उद्देश्य की पूर्ति हो।

यदि हम वर्गीकरण की उपर्युक्त तार्किक परिभाषा को ध्यानपूर्वक देखें तो ज्ञात होगा कि इसमें चार बातों की ओर संकेत किया गया है —

१ वर्गीकरण पदार्थ का किया जाता है।

२ वर्गीकरण किसी प्रकार की *समानता* या *असमानता* के आधार पर किया जाता है।

३ वर्गीकरण एक *मानसिक प्रक्रिया* है।

४ वर्गीकरण किसी न किसी उद्देश्य से किया जाता है।

अब हम इन पर क्रमशः विचार करेंगे।

१. पदार्थ क्या है ?

पाश्चात्य तर्कशास्त्र के आदि प्रणेता अरस्तू महोदय का मत है कि इस सृष्टि में जितनी भी वस्तुएँ एवं विचार हैं उन सब का सामूहिक नाम पदार्थ है। उन्होंने पदार्थ की दस श्रेणियाँ स्थापित की हैं। उनके अनुसार संसार की सारी वस्तुएं एवं विचार इन दस श्रेणियों में से किसी न किसी के अन्तर्गत अवश्य आ जाते हैं।

जैसे —

१ द्रव्य	यह पत्थर है।
२ परिमाण	यह छोटा है।
३ गुण	यह मीठा है।
४ सम्बन्ध	यह सुन्दरतर है।
५ दिशा	यह दूर है।
६ काल	यह सवेरा है।
७ परिस्थिति	यह प्रसन्न है।
८ अवस्था	यह उल्टा है।
९ क्रिया	यह जाता है।
१० कर्म	यह देख लिया गया।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि दस प्रकार के पदार्थ हो सकते हैं जिनमें सृष्टि की सभी वस्तुएँ और विचार समाये हुए हैं।

१२ समानता और असमानता

पदार्थों को स्वयं जानने और दूसरों को समझाने के लिए उनके विभिन्न वर्गों के अनुसार अलग-अलग नाम रखे जाते हैं। उसके बाद उनमें वर्तमान गुणों के अनुसार कुछ विशेषण भी जोड़ दिए जाते हैं। इस प्रकार उनमें अलगाव हो कर अनेकता पैदा हो जाती है। जैसे 'छोटी काली गाय' कहने से पहले तो 'गाय' शब्द से पशुओं में से एक विशेष पशु का बोध होता है। उसके बाद 'काली' विशेषण शब्द से—जो कि रंगवाचक है—सभी रंगवाली गायों में से केवल काली रंग वाली गाय का बोध होता है। फिर जब 'छोटी' शब्द जुड़ जाता है तो उन काली रंग वाली गायों में से भी केवल छोटे आकार की गायों का बोध होता है। इस प्रकार पदार्थ में विद्यमान कुछ गुणों या विशेषताओं के आधार पर एक दूसरे में अन्तर हो जाता है। यही

अन्तर समानता और असमानता का आधार होता है। इसी आधार पर समान वस्तुएँ एक साथ रखी जाती हैं और असमान वस्तुएँ अलग।

३ मानसिक प्रक्रिया

छोटा, बड़ा, काला, गोरा आदि जो भी गुण समानता और असमानता का आधार होता है वह मन का एक *विश्लेषण* है। इसी विश्लेषण के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है। इसलिए वर्गीकरण को मानसिक प्रक्रिया कहते हैं।

४ उद्देश्य

वर्गीकरण का कोई न कोई उद्देश्य होता है। जब पदार्थों का साधारण ज्ञान प्राप्त करने के उद्देश्य से वर्गीकरण किया जाता है तब उसे स्वाभाविक या वैज्ञानिक वर्गीकरण कहते हैं। इसलिए इस प्रकार के वर्गीकरण की परिभाषा निम्नलिखित रूप में की जाती है :—

वस्तुओं की अत्यधिक समानता और असमानता के आधार पर साधारण ज्ञान की प्राप्ति के लिए किए गए मानसिक संकलन को वैज्ञानिक वर्गीकरण या साधारण वर्गीकरण कहते हैं।

जैसे —

(१) वस्त्रों का वर्गीकरण उनके मूल गुणों के अनुसार किया जाय तो ऊनी वस्त्र, सूती वस्त्र और रेशमी वस्त्र आदि होंगे। यह स्वाभाविक या साधारण वर्गीकरण कहलाएगा। लेकिन यदि स्वच्छता के आधार पर स्वच्छ वस्त्र और अस्वच्छ वस्त्र इस रूप में वर्गीकरण किया जाय तो वह स्वाभाविक वर्गीकरण न होगा।

(२) पौधों का वर्गीकरण यदि वनस्पतिशास्त्रियों के अनुसार पौधों की उत्पत्ति, उनकी प्रकृति तथा अन्य साधारण गुणों के आधार पर किया जाय तो वह स्वाभाविक वर्गीकरण होगा। लेकिन यदि उनमें विद्यमान औषधितत्त्वों या वनस्पति के तत्त्वों के आधार पर उनका वर्गीकरण किया जाय तो वह स्वाभाविक वर्गीकरण न होगा।

इस प्रकार के वैज्ञानिक वर्गीकरण के अलावा अपना व्यावहारिक सुविधा के उद्देश्य से जब भी वर्गीकरण किया जाय, उसे तार्किक लोग 'कृत्रिम वर्गीकरण' कहते हैं। इसकी परिभाषा इस प्रकार है —

वस्तुओं की सामानता के आधार पर विशेष उद्देश्य से व्यावहारिक सुलमता के लिए किए गए मानसिक संकलन को 'कृत्रिम वर्गीकरण' कहते हैं।

जैसे कि स्वच्छता के आधार पर वस्त्रों का वर्गीकरण, औषधितत्त्वों के आधार पर पौधों का वर्गीकरण आदि।

'पुस्तक वर्गीकरण' भी कृत्रिम वर्गीकरण की श्रेणी में आता है क्योंकि उपयोगकर्त्ताओं की व्यावहारिक सुविधा के उद्देश्य से पुस्तकों का वर्गीकरण किया जाता है जिससे उनको अभीष्ट अध्ययन सामग्री सरलतापूर्वक मिल सके और उनका समय नष्ट न हो। साथ ही पुस्तकों के आदान प्रदान में भी सुविधा रहे।

वर्गीकरण की दो विधियाँ

तर्कशास्त्र में दो विधियों से पदार्थ का वर्गीकरण किया जाता है। एक तो विशेष का सामान्य में और दूसरा सामान्य का विशेष में। हम मोहन को 'मनुष्य' कहते हैं। मोहन विशेष है और मनुष्य सामान्य। इसलिए मोहन को मनुष्य वर्ग में रखना वर्गीकरण की पहली विधि है। इस पहली विधि को तार्किक लोग 'वर्गीकरण' कहते हैं। यदि हम वस्त्र को रेशमी वस्त्र, ऊनी वस्त्र और सूती वस्त्र आदि वर्गों में बाँटते हैं तो इसमें 'वस्त्र' सामान्य है और रेशमी वस्त्र ऊनी वस्त्र आदि विशेष हैं। इस प्रकार यह वर्गीकरण की दूसरी विधि है। चूंकि इस दूसरी विधि में सामान्य का उसके विशेषों में विभाजन किया जाता है, इसलिए इसे 'विभाग' (विभाजन) कहते हैं। वास्तव में हम दोनों विधियों से हम एक ही लक्ष्य तक पहुँचते हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि प्रथम विधि में नीचे से ऊपर को चलना पड़ता है और दूसरी विधि में ऊपर से नीचे को।

तर्कशास्त्रियों की इन दोनों विधियों को समझने के लिए उनकी विचार धारा को समझना आवश्यक है। तर्कशास्त्रियों का कथन है कि हम वस्तुओं के बोध के लिए वाक्यों का प्रयोग करते हैं। वाक्य में तीन अंग होते हैं— (१) उद्देश्य, (२) विधेय और (३) संयोजक।

(१) 'उद्देश्य' वह है जिसके साथ सम्बन्ध स्थापित किया जाय।

(२) 'विधेय' वह है जिसका सम्बन्ध 'उद्देश्य' के साथ स्थापित किया जाय।

(३) 'संयोजक' वह क्रिया पद है जो 'उद्देश्य' और 'विधेय' के बीच के सम्बन्ध को सूचित करे।

जैसे —

सभी 'पशु' 'चतुष्पद' हैं।

इस वाक्य में 'सभी पशु' उद्देश्य है। 'चतुष्पद' विधेय है। 'हैं' संयोजक है। अंग्रेजी भाषा के वाक्यों में उद्देश्य और विधेय वाचक शब्द दोनों सिरे पर होते हैं और 'संयोजक' शब्द बीच में रहता है।

जैसे —

All men are mortal

यहाँ पर All men उद्देश्य है। Mortal विधेय है। are संयोजक शब्द है।

सिरे या छोर पर पड़ने के कारण उद्देश्य और विधेय (वाचक शब्दों) को अंग्रेजी में टर्म (Term=छोर) कहा जाता है। लेकिन चूँकि हिन्दी के वाक्यों में ये छोर पर नहीं पड़ते इसलिए इन्हें छोर न कह कर 'पद' कहा जाता है।

'पद' उस शब्द या उन शब्दों के समूह को कहते हैं जो किसी वाक्य में उद्देश्य या विधेय की भाँति प्रयोग में आ सके।•

पद-बोध

प्रत्येक 'पद' दो बातों का बोध कराता है —

(१) उस नाम से समझे जाने वाले सभी व्यक्ति।

(२) वे धर्म जिनके कारण वे सभी व्यक्ति उस 'पद' से समझे जाते हैं।

जैसे —

'मनुष्य' एक पद है। हमें 'मनुष्य' कहने से हमें संसार के सभी मनुष्यों का अर्थात् मनुष्य जाति का बोध होता है। इसके साथ ही मनुष्यों में रहने वाले 'विवेकशीलता और प्राणित्व' धर्म का भी बोध होता है जिसके आधार पर हम उन्हें मनुष्य कहते हैं।

इसी प्रकार 'पक्षी' पद से संसार के सभी पक्षियों का और 'पंख वाला होना तथा प्राणित्व' धर्म का बोध होता है।

इस प्रकार सब से पहले 'पद' से उन सभी व्यक्तियों का बोध होता है जो उस नाम से जाने जाते हैं। इस बोध को 'व्यक्ति बोध' या 'द्रव्य बोध'

• यहाँ पर इतना ध्यान रखना आवश्यक है कि सभी 'पद' शब्द हैं लेकिन हर एक शब्द पद नहीं हो सकता।

कहते हैं। इस बोध को 'पद का विस्तार' भी कहते हैं क्योंकि इससे यह मालूम होता है कि अमुक 'पद' से समझे जाने वाले व्यक्तियों या द्रव्य का विस्तार कितना है।

व्यक्तिबोध के साथ 'पद' से जो तत्सम्बन्धी द्रव्यों या वस्तुओं के धर्मों का बोध होता है उसे 'स्वभाव-बोध' कहते हैं। इस 'स्वभाव बोध' को 'पद की गहनता' भी कहते हैं।

व्यक्ति-बोध का 'पद का क्षेत्र', 'पद की परिधि' और 'पद का साम्राज्य' आदि भी कहते हैं।

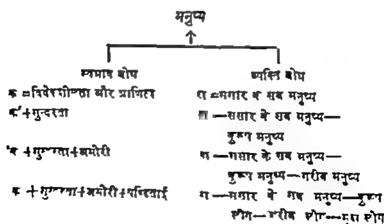
स्वभाव-बोध को 'पद का भाव' पद का पदत्व और 'पद की सामर्थ्य' आदि भी कहा जाता है।

व्यक्तिबोध और स्वभाव-बोध दोनों एक दूसरे पर आश्रित हैं। 'पद' को सुनने पर 'स्वभाव बोध' हुए बिना 'व्यक्तिबोध' नहीं हो सकता।

दोनों 'बोधों' का आपसी सम्बन्ध

पद के व्यक्ति बोध और स्वभाव बोध विपरीत दिशा में घटते-बढ़ते हैं। अर्थात् जब एक बढ़ता है तो दूसरा घट जाता है और जब दूसरा घटता है तो पहले में वृद्धि होती है।

यदि हम 'मनुष्य' पद का स्वभाव बोध 'क' मान लें और व्यक्ति बोध 'ख' तो पहले में वृद्धि होने से दूसरे में ह्रास होने का नियम निम्नलिखित तालिका से प्रकट होगा —



इस उदाहरण से प्रकट होता है कि पद के स्वभाव-बोध में 'सुन्दरता' नामक एक गुण जब बढ़ गया तो व्यक्ति बोध में 'कुरूप मनुष्य' घट गया। इसी प्रकार 'अमीरी' नामक दूसरा गुण और बढ़ जाने पर 'गरीब मनुष्य' व्यक्ति बोध में कम हो गया।

अब हम इसके विपरीत पक्ष को लेते हैं जिसमें कि व्यक्ति बोध में वृद्धि होने से स्वभाव-बोध में ह्रास होता है। उदाहरण के लिए ऊपर का पद लीजिए :—

पण्डित-अमीर सुन्दर विवेकशील प्राणी



व्यक्ति बोध	स्वभाव बोध
क = संसार के सब ऐसे मनुष्य	ख = पण्डिताई-अमीरी-सुन्दरता विवेकशीलता प्राणित्व
क + मूर्ख लोग	ख — पण्डिताई
क + मूर्ख लोग + गरीब लोग	ख — पण्डिताई-अमीरी
क + मूर्ख लोग + गरीब लोग + कुरूप लोग	ख — पण्डिताई-अमीरी-सुन्दरता

पहली तालिका को नीचे से ऊपर देखने से मालूम होगा कि जैसे जैसे पद के स्वभाव बोध में एक एक गुण लोप होते गए वैसे-वैसे व्यक्तिबोध में नए नए प्रकार के लोग भी सम्मिलित होते गए। उसी तरह दूसरी तालिका को नीचे से ऊपर देखने से पता लगता है कि जैसे जैसे पद के व्यक्ति बोध में एक एक प्रकार के लोग लुप्त होते गए वैसे वैसे स्वभाव बोध में नए नए गुण भी सम्मिलित किये जाने लगे।

अतः पद के दोनों 'बोधों' के परस्पर वृद्धि ह्रास का नियम चार प्रकार से सिद्ध हुआ :—

१ स्वभाव बोध में वृद्धि होने से व्यक्ति बोध में ह्रास होता है।
२ व्यक्ति बोध में वृद्धि होने से स्वभाव बोध का ह्रास होता है।
३ स्वभाव बोध में ह्रास होने से व्यक्ति बोध में वृद्धि होती है।
४ व्यक्ति बोध में ह्रास होने से स्वभाव बोध में वृद्धि होती है।

इस नियम को संक्षेप में इस प्रकार समझा जा सकता है कि पद जितना सीमित होता जायगा उसका स्वभाव-बोध उतना ही बढ़ता जायगा।

जैसे —

पद	स्वभाव बोध
मनुष्य	मनुष्यत्व
एशियाई	मनुष्यत्व+अमुक महादेश का होना
भारतीय	मनुष्य+अमुक महादेश का होना+अमुक देश का होना
पंजाबी	मनुष्यत्व+अमुक महादेश का होना+अमुक देश का होना+अमुक प्रांत का होना
हिम्मत सिंह	मनुष्यत्व+अमुक महादेश+देश+नगर+मुहल्ला+घर का होना+अमुक धर्म+जाति+परिवार का होना आदि ।

व्यक्ति बोध की दृष्टि से एक 'जाति' में उसकी 'उपजाति' अन्तर्गत है किन्तु स्वभाव बोध की दृष्टि से 'उपजाति' में 'जाति' अन्तर्गत है ।

जैसे —

'पशु' एक जाति है जिसकी एक उपजाति 'घोड़ा' है । व्यक्ति बोध की दृष्टि से, पशुओं में घोड़े भी सम्मिलित हैं और स्वभाव बोध की दृष्टि से घोड़ेपन में पशु भी सम्मिलित है ।

पदों का परस्पर सम्बन्ध

पदों में परस्पर ६ प्रकार से सम्बन्ध हो सकते हैं —

(क) जाति उपजाति
(ख) सजाति सजाति
(ग) आसन्न जाति आसन्न उपजाति
(घ) दूरस्थ जाति दूरस्थ उपजाति
(ङ) महाजाति
(च) अन्त्यजाति

(क) *जाति उपजाति*—जब दो पदों में परस्पर ऐसा सम्बन्ध हो कि पहले का व्यक्ति बोध दूसरे के व्यक्तिबोध को अपने अन्तर्गत कर ले तो पहला दूसरे के सम्बन्ध में 'जाति' है और दूसरा पहले के सम्बन्ध में 'उपजाति' है । जैसे, भारतीय-पंजाबी, पशु-घोड़ा, वृक्ष-आम इत्यादि पदों में यही जाति उपजाति सम्बन्ध है ।

'भारतीय' पद का व्यक्तिबोध 'पंजाबी' पद के व्यक्तिबोध को अपने अन्तर्गत कर लेता है, क्योंकि 'भारतीय' पद से समझे जाने वाले सभी व्यक्तियों में 'पंजाबी' पद से समझे जाने वाले व्यक्ति अन्तर्गत हैं। अतः 'पंजाबी' पद के सम्बन्ध में 'भारतीय' पद जाति है और 'भारतीय' पद के सम्बन्ध में 'पंजाबी' पद उपजाति है।

(ख) सजाति सजाति— यदि दो या दो से अधिक पदों में परस्पर ऐसा सम्बन्ध हो कि उनके अपने अपने व्यक्तिबोध एक ही अन्य पद के व्यक्तिबोध के अन्तर्गत हों तो वे एक-दूसरे के सम्बन्ध में 'सजाति' कहे जाएंगे। जैसे— पंजाबी-गुजराती, घोड़ा-बैल, आम जामुन, गुलाब-गेंदा, आदि पदों में परस्पर यही सम्बन्ध है।

'पंजाबी', 'गुजराती' पदों के जो अपने अपने व्यक्तिबोध हैं वे एक 'भारतीय' पद के व्यक्तिबोध के अन्तर्गत हैं। अतः वे पद एक-दूसरे से सर्वथा पृथक् होते हैं। 'पंजाबी' का व्यक्तिबोध 'गुजराती' पद के व्यक्तिबोध से सर्वथा पृथक है क्योंकि कोई पंजाबी गुजराती नहीं है और कोई गुजराती पंजाबी नहीं है।

(ग) आसन्न जाति आसन्न उपजाति—यदि 'जाति' और 'उपजाति' के बीच किसी तीसरे पद के व्यक्तिबोध आ जाने की सम्भावना न हो तो पहला दूसरे के सम्बन्ध में 'आसन्न जाति' और दूसरा पहले के सम्बन्ध में 'आसन्न उपजाति' कहा जाता है।

'भारतीय' पद 'पंजाबी' पद का 'समानन्तर जाति' है और 'पंजाबी' पद 'भारतीय' पद का समानन्तर उपजाति। हाँ, यदि इनके बीच 'उत्तर भारतीय' पद का व्यक्तिबोध उपस्थित किया जा सके तो 'भारतीय-उत्तरभारतीय पंजाबी' ऐसा हो जाने से उनमें वह सम्बन्ध नहीं समझा जायगा। तब यही सम्बन्ध 'उत्तर भारतीय' और पंजाबी' में स्थापित किया जा सकेगा।

(घ) दूरस्थ जाति-दूरस्थ उपजाति—यदि 'जाति' और 'उपजाति' के बीच अन्य पद या पदों के व्यक्तिबोध का अन्तर्भाव हो तो पहला दूसरे के सम्बन्ध में दूरस्थ जाति है और दूसरा पहले के सम्बन्ध में 'दूरस्थ उपजाति' है। जैसे 'पंजाबी' के सम्बन्ध में मनुष्य दूरस्थ जाति' है और मनुष्य के सम्बन्ध में 'पंजाबी' दूरस्थ उपजाति है क्योंकि इन दोनों के बीच में 'भारतीय' पद का व्यक्तिबोध उपस्थित है।

(ङ) *महाजाति*—उस पद को महाजाति कहते हैं जिसका व्यक्तिबोध किसी भी दूसरे पद के व्यक्तिबोध के अन्तर्गत न हो सके।

ऐसा पद 'सत्ता' है क्योंकि इसके अन्तर्गत सब कुछ आ जाता है। महाजाति की फिर कोई जाति नहीं होती।

(च) *अन्त्य जाति*—उस पद को अन्त्य जाति कहते हैं जिसका व्यक्तिबोध किसी दूसरे पद के व्यक्तिबोध को अपने अन्तर्गत न कर सके।

अन्त्य जाति की फिर कोई उपजाति नहीं होती।

लक्षण

किसी पद की जाति और असाधारण धर्म का उल्लेख कर देना 'लक्षण' कहलाता है।

जैसे —

मनुष्य विवेकशील प्राणी है।

यहाँ पर 'मनुष्य' पद की जाति है प्राणी और इसका असाधारण धर्म है विवेकशील होना, जिसके आधार वह पशु, पक्षी आदि अन्य प्राणियों से पृथक् माना जाता है। इन दोनों का उल्लेख किया गया है।

असाधारण धर्म वह गुण है जो स्वाभाविक रूप से पाया जाता है। इसी लिए इसे 'स्वभाव धर्म' भी कहते हैं। यही असाधारण धर्म पृथक करता है, अतः इसे 'व्यवच्छेदक धर्म' भी कहते हैं।

धर्म के प्रकार

धर्म (गुण) तीन प्रकार के होते हैं—

१ स्वभाव धर्म।

२ स्वभावसिद्ध धर्म।

३ आकस्मिक धर्म।

(१) उस धर्म को *स्वभाव धर्म* कहते हैं जिस कारण उस पद से उसके आने वाले व्यक्ति पैदा समझे जाते हैं।

जैसे :—

'विवेकशील प्राणी होना' मनुष्य का स्वभाव धर्म है क्योंकि इस धर्म के कारण वह मनुष्य कहलाता है।

इसी प्रकार 'अमचर प्राणी होना' मछली का और 'तीन भुजाओं से घिरा क्षेत्र होना' त्रिभुज का स्वभाव धर्म है।

(२) समानार्थसिद्ध-धर्म—यह धर्म है जो समानधर्म का कोई अंश न होते हुए भी उसी से सिद्ध होता है। 'मनुष्य में सोच सकना' मनुष्य का समानार्थसिद्ध गुण है क्योंकि उसका यह धर्म उसके ... होने से सिद्ध है। इसी प्रकार 'हवा में उड़ सकना' पक्षी का समानार्थसिद्ध धर्म है क्योंकि यह 'पंख वाला' होने से सिद्ध हो जाता है।

(३) आकस्मिक धर्म—समानधर्म और समानार्थसिद्ध धर्म इन दोनों को छोड़ कर सभी धर्मों को 'आकस्मिक धर्म' कहते हैं।

किसी वस्तु के अस्तित्व की रक्षा के लिए आकस्मिक धर्म की आवश्यकता नहीं होती। उस धर्म के न होने पर भी वह वस्तु वैसी ही समझी जा सकती है। जैसे मनुष्यों का अमुक रंग का होना, विद्वान का मनहिवाहु होना आदि। अमुक रंग के न होने पर मनुष्य-मनुष्य रह सकता है। मनहिवाहु न होकर भी विद्वान विद्वान रह सकता है, ... न होकर भी पक्षी पक्षी रह सकता है।

इन दोनों प्रकार के धर्मों में से केवल 'समानधर्म' का प्रयोग ही लक्षण में किया जाता है।

तार्किक विभाग

किसी 'जाति' को अपनी 'उपजातियों' में बाँट देना ही तार्किक विभाग है।

भिन्न भिन्न प्रकार से एक ही जाति की भिन्न-भिन्न प्रकार की उपजातियाँ बन सकती हैं।

जैसे —

मनुष्य
- मजहब के विचार से — बौद्ध, ईसाई, मुसलमान, हिन्दू, पारसी आदि
- रंग के विचार से — गोरे, काले, पीले, लाल आदि
- महादेश के विचार से — एशियाई, यूरोपियन, अमेरिकन आदि
- कद के विचार से — लम्बा, साधारण, नाटा, बौना आदि
- धन के विचार से — धनी, साधारण, गरीब आदि

इसे देख कर स्पष्ट हो जाता है कि—

(१) किसी एक ही जाति का विभाजन भिन्न भिन्न प्रकार से कर सकते हैं।

(२) प्रत्येक प्रकार के विभाजन में एक नया निर्णायक विचार (विभाग का आधार) रहता है जिसे दृष्टि में रख कर ही उपजातियाँ बनाई जाती हैं।

(ङ) *महाजाति*—उस पद को महाजाति कहते हैं जिसका व्यक्तिबोध किसी भी दूसरे पद के व्यक्तिबोध के अन्तर्गत न हो सके।

ऐसा पद 'सत्ता' है क्योंकि इसके अन्तर्गत सब कुछ आ जाता है। महाजाति की फिर कोई जाति नहीं होती।

(च) *अन्त्य जाति*—उस पद को अन्त्य जाति कहते हैं जिसका व्यक्तिबोध किसी दूसरे पद के व्यक्तिबोध को अपने अन्तर्गत न कर सके।

अन्त्य जाति की फिर कोई उपजाति नहीं होती।

लक्षण

किसी पद की जाति और असाधारण धर्म का उल्लेख कर देना 'लक्षण' कहलाता है।

जैसे —

मनुष्य विवेकशील प्राणी है।

यहाँ पर 'मनुष्य' पद की जाति है प्राणी और इसका असाधारण धर्म है विवेकशील होना, जिसके आधार पर वह पशु, पक्षी आदि अन्य प्राणियों से पृथक् माना जाता है। इन दोनों का उल्लेख किया गया है।

असाधारण धर्म वह गुण है जो स्वाभाविक रूप से पाया जाता है। इसी लिए इसे 'स्वभाव धर्म' भी कहते हैं। यही असाधारण धर्म पृथक करता है, अतः इसे 'व्यवच्छेदक धर्म' भी कहते हैं।

धर्म के प्रकार

धर्म (गुण) तीन प्रकार के होते हैं—

१ स्वभाव धर्म।

२ स्वभावसिद्ध धर्म।

३ आकस्मिक धर्म।

(१) उस धर्म को *स्वभाव धर्म* कहते हैं जिस कारण उस पद में आने वाले व्यक्ति वैसे समझे जाते हैं।

जैसे :—

'विवेकशील प्राणी होना' मनुष्य का स्वभाव धर्म है क्योंकि इस धर्म के कारण वह मनुष्य कहलाता है।

इसी प्रकार 'जलचर प्राणी होना' मछली का और 'तीन भुजाओं से घिरा क्षेत्र होना' त्रिभुज का स्वभाव धर्म है।

जैसे —

'मनुष्य' पद का महादेश के विचार से विभाग कर सकते हैं—एशियाई, यूरोपियन, अमेरिकन, आस्ट्रेलियन और अफ्रीकन। और इन सब विभागों के व्यक्तिबोध का योग विभाज्य पद 'मनुष्य' के व्यक्तिबोध के बराबर ही होगा।

(६) *तार्किक विभाजन में एक विभाग दूसरे से सर्वथा पृथक् होना चाहिए।*

'मनुष्य' पद का यदि नियम पाँच के अनुसार विभाजन करें तो हर एक विभाग एक-दूसरे से अलग होगा क्योंकि कोई एशियाई योरोपियन नहीं और कोई योरोपियन एशियाई नहीं है।

(७) *सभी विभाग विभाज्य पद की आसन्न उपजातियाँ ही होनी चाहिए, दूरस्थ नहीं।*

'मनुष्य' पद का विभाग यदि पंजाबी, गुजराती आदि करने लगें तो उचित नहीं है क्योंकि पंजाबी, गुजराती आदि मनुष्य की दूरस्थ जातियाँ हैं, आसन्न नहीं। 'मनुष्य' का पहले महादेश के विचार से, फिर देश के विचार से और तब प्रान्त के विचार से विभाग करना उचित होता है।

भावाभावात्मक विभाग

तार्किक विभाजन का यह प्रधान नियम है कि भिन्न भिन्न विभाग परस्पर व्याप्त न हों और सभी विभागों का योग विभाज्य पद के बराबर हो।

तर्कशास्त्र प्रधानतः 'रूप विषयक' है, 'विषय विषयक' नहीं। विश्व के ज्ञान का अन्वेषण करना तर्कशास्त्र का काम नहीं है। अतः कुछ तर्कशास्त्रियों ने विभाजन की प्रक्रिया का एक 'रूप' बनाया है जिसके लिए विषय के ज्ञान की वैसी आवश्यकता नहीं होती। इस 'रूप' में प्रत्येक पद के दो विभाग होते हैं जो परस्पर विरुद्ध रूप से रखे जाते हैं। इस तरह उनके परस्पर व्याप्त होने का भय नहीं रहता और उन दोनों का योग निश्चय रूप से विभाज्य पद के बराबर रहता है। इस प्रक्रिया को अंग्रेजी में 'डिकाटोमी' कहते हैं, जिसका अर्थ है 'दो टुकड़े करना'। इसको हम भावात्मक विभाग कह सकते हैं, क्योंकि इसका एक भाग भाव (विधि) के रूप में रहता है और दूसरा अभाव (निषेध) के रूप में। इस प्रक्रिया में 'अ' अक्षर जोड़ कर उसका विरुद्ध रूप बनाया जाता है। जहाँ तक रूप का सम्बन्ध है यह विभाजन प्रक्रिया बहुत अच्छी है। इसमें तार्किक विभाजन ८ नियमों का

ऊपर 'मनुष्य' पद से भिन्न भिन्न प्रकार के जो विभाग किए गए हैं उनमें क्रमशः मजहब, रंग, महादेश, कद, और धन 'विभाजक धर्म' हैं।

तार्किक विभाग के नियम

(१) *शास्त्रीय विभाजन किसी एक वर्ग का होता है किसी एक व्यक्ति का नहीं।*

मनुष्य पद चूंकि एक वर्ग (=जाति) है तो उसका तार्किक विभाजन हो सकेगा।

(२) *एक बार एक ही 'विभाजक धर्म' के अनुसार विभाग किए जायगे।*

जैसे —

'मनुष्य' पद का विभाजन मजहब के अनुसार करते समय यदि उसी समय रंग, कद, आदि के अनुसार भी विभाजन करना शुरू कर दें तो हिन्दू, मोटे, लम्बे, दुबले, सुन्दर, मूल, मारी आदि हो जायँगे, ऐसे विभाग से कोई उद्देश्य सिद्ध नहीं हो सकता।

(३) *एक विभाजक धर्म के अनुसार पद के जितने भी विभाग हो सकते हैं सभी का अवश्य उल्लेख हो जाना चाहिए।*

जैसे —

धर्म के विचार से मनुष्य के केवल दो ही वर्ग हिन्दू और मुसलमान न बनाए जाय, नहीं तो अन्य बौद्ध ईसाई, पारसी आदि छूट जायँगे।

(४) *किसी ऐसे विभाग को स्वीकार नहीं करना चाहिए जिसका पद के व्यक्ति-व्याप में कोई स्थान नहीं है।*

जैसे :—

मनुष्य का विभाग करें, एक तो हाड़ मांस से बने और दूसरे पत्थर से बने, तो यह तार्किक विभाग नहीं हो सकता, क्योंकि पत्थर की मूर्तियाँ मनुष्य के व्यक्तित्व में शामिल नहीं हैं।

(५) *सभी विभागों के व्यक्तिव्याप का योग विभाज्य पद के व्यक्ति बोध के बराबर ही होना चाहिए।*

जैसे —

'मनुष्य' पद का महादेश के विचार से विभाग कर सकते हैं—एशियाई, यूरोपियन, अमेरिकन, आस्ट्रेलियन और अफ्रीकन। और इन सब विभागों के व्यक्तिबोध का योग विभाज्य पद 'मनुष्य' के व्यक्तिबोध के बराबर ही होगा।

(६) तार्किक विभाजन में एक विभाग दूसरे से सर्वथा पृथक् होना चाहिए।

'मनुष्य' पद का यदि नियम पाँच के अनुसार विभाजन करें तो हर एक विभाग एक-दूसरे से अलग होगा क्योंकि कोई एशियाई योरोपियन नहीं और कोई योरोपियन एशियाई नहीं है।

(७) सभी विभाग विभाज्य पद की आसन्न उपजातियाँ ही होनी चाहिए, दूरस्थ नहीं।

'मनुष्य' पद का विभाग यदि पंजाबी, गुजराती आदि करने लगें तो उचित नहीं है क्योंकि पंजाबी, गुजराती आदि मनुष्य की दूरस्थ जातियाँ हैं, आसन्न नहीं। 'मनुष्य' का पहले महादेश के विचार से, फिर देश के विचार से और तब प्रान्त के विचार से विभाग करना उचित होता है।

भावाभावात्मक विभाग

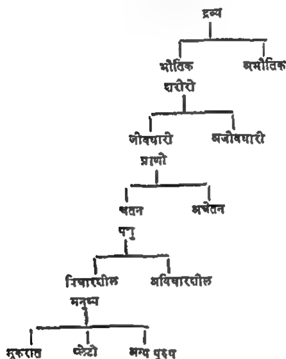
तार्किक विभाजन का यह प्रधान नियम है कि भिन्न भिन्न विभाग परस्पर व्याप्त न हों और सभी विभागों का योग विभाज्य पद के बराबर हो।

तर्कशास्त्र प्रधानतः 'रूप विषयक' है, 'विषय विषयक' नहीं। विषय के ज्ञान का अन्वेषण करना तर्कशास्त्र का काम नहीं है। अतः कुछ तर्कशास्त्रियों ने विभाजन की प्रक्रिया का एक 'रूप' बनाया है जिसके लिए विषय के ज्ञान की वैसी आवश्यकता नहीं होती। इस 'रूप' में प्रत्येक पद के दो विभाग होते हैं जो परस्पर विरुद्ध रूप से रखे जाते हैं। इस तरह उनके परस्पर व्याप्त होने का भय नहीं रहता और उन दोनों का योग निश्चय रूप से विभाज्य पद के बराबर रहता है। इस प्रक्रिया को अंग्रेजी में 'डिकाटोमी' कहते हैं, जिसका अर्थ है 'दो टुकड़े करना'। इसको हम भावात्मक विभाग कह सकते हैं, क्योंकि इसका एक भाग भाव (विधि) के रूप में रहता है और दूसरा अभाव (निषेध) के रूप में। इस प्रक्रिया में 'अ' अक्षर जोड़ कर उसका विरुद्ध रूप बनाया जाता है। जहाँ तक रूप का सम्बन्ध है यह विभाजन प्रक्रिया बहुत अच्छी है। इसमें तार्किक विभाजन के नियमों का

पालन पूर्ण रूप से हो जाता है और 'विषय' के पूरे ज्ञान की अपेक्षा भी नहीं रहती। लेकिन इसका अभावात्मक विभाग बिलकुल अस्पष्ट रहता है, यही इस प्रक्रिया में एक बड़ा दोष है।

पारफिरी का जाति विषयक वृक्ष इसका अच्छा उदाहरण है।

पारफिरी का जाति-विषयक वृक्ष



इस वृक्ष को देखने से पता लगता है कि इसमें मूल द्रव्य को महाजाति मान कर उसका विभाग भावाभावात्मक विधि से दो भागों में किया गया है। इस प्रकार धीरे धीरे महाजाति से अन्त्य जाति (सुकरात, प्लेटो आदि व्यक्ति) तक पहुँच कर विभाजन क्रिया समाप्त हो जाता है। यदि इसी वृक्ष के नीचे की ओर से चलें तो विशेषों का सामान्य में वर्ग बनता जाता है और अन्त में 'महाजाति तक पहुँच कर यह वर्गीकरण की परम्परा समाप्त हो जाती है क्योंकि महाजाति के फिर आगे कोई जाति नहीं होती। इसमें

अन्तर्गत सभी वस्तुएँ आ जाती हैं। इस प्रकार इस वृक्ष से विकास की एक परम्परा स्पष्ट प्रकट होती है —

द्रव्य
अभौतिक
भौतिक
शरीरी
अजीवधारी
जीवधारी
प्राणी
अचेतन
चेतन
पशु
अविचारशील
विचारशील
मनुष्य
सुकरात
प्लेटो
अन्य मनुष्य

सारांश

अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि तर्कशास्त्र में 'वर्गीकरण' शब्द का प्रयोग एक पद्धति के लिए होता है जिसमें एक एक चीज को अनुकूल क्रम में रखा जाता है। इन एक एक वस्तुओं एवं भावों का उनकी समानता के आधार पर समूह बनाया जाता है। उनके बाद उन समूहों को उनकी अपेक्षा बड़े समूह में रखा जाता है। इस प्रकार क्रमशः बड़े समूह बनाते हुए यह विधि तब पूरी हो जाती है जब कि एक ऐसा समूह बन जाता है जिसके अन्तर्गत सभी व्यक्ति या भाव समा जाते हैं।

'विभाजन' शब्द का प्रयोग ऊपर की विधि से बिल्कुल उल्टी विधि के लिए किया जाता है। इसमें एक समूह कुछ छोटे उपसमूहों में बाँटा जाता है। इस बाँटने का आधार कोई गुण या विशेषता होती है। इस प्रकार जो उपसमूह बन जाते हैं उनका फिर उनसे छोटा समूह उसी प्रकार बनाया जाता है। इस प्रकार यह विधि तब तक चलती है जब तक कि विभाजन करना असम्भव न हो जाय या उसकी जरूरत न समझी जाय।

इस प्रकार साधारण रूप से यह कहा जा सकता है कि 'वर्गीकरण' की ये दोनों विधियाँ हैं। अतः हम कह सकते हैं कि वर्गीकरण एक ऐसी विधि है जो कि अलग करने वाली और साथ ही समूह बनाने वाली है। यह समान वस्तुओं को एकत्र करती है और असमान को अलग कर देता है।

वर्गीकरण से लाभ

हम देखते हैं कि प्रकृति एक प्रकार से एकताओं और अनेकताओं का सम्मिश्रण है। इसलिए यदि हम प्रकृति के इन पदार्थों में कोई क्रम ढूढ़ना चाहें तो हमें वर्गीकरण का सहारा लेना पड़ेगा क्योंकि वर्गीकरण ही सबसे सरल विधि है जिससे हम प्रकृति में क्रम की खोज कर सकते हैं। ऊपर कहा गया है कि वर्गीकरण एक छाँटने का तरीका है। इस विधि से वस्तु या भाव समूहों में इकट्ठे हो जाते हैं। ये समूह गुणों को प्रकट करते हैं जो कि इस समूह के सदस्यों में पाया जाता है। इसलिए प्रत्येक विज्ञान के इतिहास में 'वर्गीकरण' एक ऐसी विधि है जिसका कि अधिक से अधिक प्रयोग किया जा सकता है। विज्ञान तो वस्तुओं एवं विचारों की परीक्षा करके उनको अलग अलग नाम दे देता है। उसके बाद वर्गीकरण का यह काम है कि वह उनको समानता और असमानता के आधार पर समूह बना कर एकत्र रक्खे। ऐसा करके 'वर्गीकरण' विज्ञान और तर्क को सहायता पहुँचाता है। जब हम कोई वर्ग बनाते हैं तो अनेकता का एकता में बदल देते हैं और उस एकता में भी अनेकता रहती है। इस प्रकार वर्गीकरण एक-एक वस्तु एवं विचार का समूह बना कर स्मरणशक्ति को सहायता पहुँचाता है। एक-एक की अपेक्षा हमें समूह के नाम याद रखने में सुविधा होती है। इतना ही नहीं, वर्गीकरण वस्तुओं एवं भावों के पारस्परिक सम्बन्ध को भी प्रकट करता है और उसके नियमों की खोज की ओर ले जाता है। इससे स्मृतिशक्ति और तर्कशक्ति को बहुत सहायता मिलती है। वर्गीकरण के बिना तो किसी वस्तु की भलीभाँति पहचान भी नहीं हो सकती। वर्गीकरण के द्वारा ही मस्तिष्क को यह सुविधा मिलती है कि वह स्मृति में वस्तुओं के गुणों एवं विशेषताओं का धारण कर सके और उन्हें स्थायित्व प्रदान कर सके।

अतः संक्षेप में वर्गीकरण से निम्नलिखित लाभ होते हैं —

(१) इससे वस्तुओं का ज्ञान स्पष्ट रूप से हो जाता है। इसमें प्रत्यक्ष वस्तु (Phenomena) अथवा तत् परिवर्तन सन्निहित रहते हैं। यदि

वर्गीकरण न हो तो प्रत्येक वस्तु के स्पष्टीकरण के लिए उसकी व्याख्या करनी पड़ती है।

(२) इससे वस्तुओं के स्मरण रखने में सहायता मिलती है क्योंकि वर्गगत वस्तुओं को स्मरण रखना एक एक वस्तु के स्मरण रखने की अपेक्षा सरल होता है।

(३) इससे स्मृति गत वस्तुओं के ऊपर एक प्रकार का अधिकार-सा रहता है और जरूरत पड़ने पर वे स्मृति से प्राप्त भी की जा सकती हैं।

(४) इससे वस्तुओं का आपसी सम्बन्ध तथा उनका स्पष्टीकरण सरलता पूर्वक हो जाता है।

(५) वर्गीकृत वस्तुओं में आवश्यक समानता होने के कारण उनमें पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट रहता है। अतः वर्गीकृत पदार्थों एवं विषयों के ज्ञान का यह पूरा लेखा वास्तविक और सत्य ज्ञान की खोज में भी सहायक होता है।

सेयर्स के सिद्धान्त*

इन तार्किक नियमों के आधार पर आचार्य श्री बरविक सेयर्स महोदय ने वर्गीकरण के निम्नलिखित ६ सिद्धान्त स्थिर किये हैं :—

(१) विभाजन पद के व्यापक विस्तार और कम परिधि से कम विस्तार और अधिक परिधि की ओर बढ़ता है।

(२) यह विधि क्रमशः होनी चाहिए, प्रत्येक पद अपने आगे आने वाले पद में उतार रखता हो और सब आपस में सम्बद्ध हों।

(३) विभाजन के आधार के रूप में चुने हुए गुण या विभाजक धर्म वर्गीकरण के उद्देश्य के लिए आवश्यक हों।

(४) प्रयुक्त पद आरम्भ में एक-दूसरे से अलग हों।

(५) गुण अविरुद्ध एक-से होने चाहिए।

(६) भागों के परिगणन पूर्ण होने चाहिए।

चूंकि ये सिद्धान्त डा० एस० आर० रंगनाथन महोदय द्वारा प्रतिपादित वर्गीकरण के सामान्य १८ सिद्धान्तों के अन्तर्गत आ जाते हैं, अतः यहाँ

---

* डब्ल्यू सी बरविक सेयर्स—ऐन इन्ट्रोडक्शन टु लाइब्रेरी क्लासीफिकेशन, पृष्ठ १५।

इनका विस्तृत विवेचन अनावश्यक प्रतीत होता है। इनका विवेचन आगे अध्याय ४ में मिल सकेगा।

व्यावहारिक वर्गीकरण

इस प्रकार हम देखते हैं कि तर्कशास्त्र हमें एक दृष्टिकोण प्रदान करता है जिससे पुस्तकों का वर्गीकरण करने के लिए सहायता ली जा सकती है। यद्यपि यह स्पष्ट है कि तर्कशास्त्र के भावाभावात्मक-विभाग विधि का पूर्णत पालन पुस्तकों के वर्गीकरण में नहीं किया जा सकता क्योंकि ऐसा करने से व्यावहारिक सुलभता नहीं मिल सकती और उसके बिना तो तार्किक विधि से किया गया पुस्तक वर्गीकरण हास्यास्पद हो जायगा।

वर्गीकरण के तार्किक नियमों को देखने से पता लगता है कि तर्कशास्त्र में विभाजक धर्मों की किसी सम्बद्ध योजना द्वारा वर्गीकरण नहीं किया जाता। दूसरे यह कि इसमें शारीरिक विभाग और अभिधार्मिक विभाग मान्य नहीं हैं।

(१) शारीरिक *विभाग*—किसी श्रेणी को उसके भिन्न अंगों में बाँट कर रखना शारीरिक विभाग कहलाता है।

जैसे —

'मनुष्य' के शारीरिक विभाग होंगे : हाथ, पैर, सिर इत्यादि।

'वृक्ष' के शारीरिक विभाग होंगे—जड़, धड़, शाखाएँ, टहनियाँ, पत्तियाँ आदि।

(२) *अभिधार्मिक विभाग*—किसी धर्मी का उसके भिन्न भिन्न धर्मों में बाँट कर रखने को अभिधार्मिक विभाग कहते हैं।

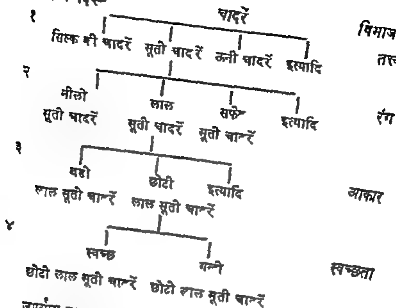
जैसे —

मनुष्य—रूप, चेतना, ज्ञान, क्रियाशक्ति, मोटाई, लम्बाई, रंग, वजन, दयालुता, क्रोध आदि।

पुस्तक—मोटाई, चौड़ाई, लम्बाई, रूप, रंग, उपयोगिता आदि।

वृक्ष—ऊँचाई, फैलाव सघनता, रंग आदि।

व्यावहारिक सुलभता के लिए यह आवश्यक है कि अपने उद्देश्य के अनुसार किसी भी गुण को विभाजक धर्म मान कर उसके अनुसार वर्गीकरण किया जाय। तीसरे यह कि अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनेक विभाजक धर्मों की सम्बद्ध योजना द्वारा वर्गीकरण किया जाय। चौथे यह कि आवश्यकता पड़ने पर शारीरिक और अभिधार्मिक विभाग भी किया जाय।



उपर्युक्त उदाहरण में चादरों का एक समूह है जिसका वर्गीकरण एक वस्त्र-व्यापारी को करना है। वह अपनी तथा अपने ग्राहकों की सुविधा के उद्देश्य से वर्गीकरण के निमित्त चार विभाजक धर्मों को चुनता है। ये सभी उसके उद्देश्य के लिए आवश्यक और अनुकूल हैं। पहले वह 'तत्त्व' के अनुसार चादरों के वर्ग बनाता है। फलत तीन वर्ग बनते हैं। फिर वह उनमें से एक वर्ग को लेकर 'रंग' नामक दूसरे विभाजक धर्म के अनुसार तीन उपवर्ग बनाता है। तीसरे क्रम में वह एक उपवर्ग सूती लाल चादरों का 'आकार' के अनुसार विभाग करता है। अंत में वह चौथे विभाजक धर्म 'स्वच्छता' के आधार पर एक विभाग के प्रविभाग करता है। इस प्रक्रिया में वर्ग, उपवर्ग, विभाग, प्रविभाग को क्रमश: क्लास, डिवीजन, सेक्शन और सबसेक्शन भी कहा जाता है।

अब हम देखते हैं कि चादरों के इस प्रकार के वर्गीकरण में तार्किक नियमों का पालन कहाँ किया तक गया है।

तार्किक विभाजन के प्रथम नियम के अनुसार विभाज्य पद 'जाति' होना चाहिए, एक नहीं। तदनुसार यहाँ 'चादरें' पद एक जाति है। द्वितीय नियम के अनुसार विभाजन के चारों क्रमों में प्रत्येक बार अलग-अलग एक 'विभाजक धर्म' के अनुसार विभाजन किया गया है। एक साथ दो विभाजक

धर्मों का उपयोग नहीं किया गया। तीसरे नियम के अनुसार एक-एक विभाजक धर्म के अनुसार जितने विभाग सम्भव हैं उन सभी का उल्लेख किया गया है। साथ ही 'इत्यादि' नामक एक अलग वर्ग रख कर यह गुञ्जाइश रखी गई है कि यदि अन्य किसी प्रकार की चादरें हों तो उनको भी रखने की व्यवस्था है। चौथे नियम के अनुसार 'चादर' पद के व्यक्तिबोध से वास्तविक सम्बन्ध रखने वाले विभाग ही बनाए गए हैं। किसी ऐसे विभाग को स्वीकार नहीं किया गया है जो व्यक्तिबोध से बाहर का हो। नियम पाँच के अनुसार विभाजन के प्रत्येक क्रम में विभाजित सभी विभागों के व्यक्तिबोध का योग विभाज्य पद के व्यक्तिबोध के बराबर है, जैसे, सिल्कन + सूती + ऊनी चादरें = चादरें। नियम [illegible] के अनुसार प्रत्येक विभाग एक-दूसरे से सर्वथा पृथक् है। फलतः ऐसी संभावना नहीं है कि एक प्रकार की चादरें दूसरे प्रकार की चादरों के साथ रखी जा सकें। अंत में सातवें नियम के अनुसार सभी विभाग विभाज्य पद की आसन्न उपजातियाँ हैं, दूरस्थ नहीं। चादरें एक 'जाति' पद हैं तो तत्त्व अनुसार सूती चादरें, सिल्कन चादरें, एवं ऊनी चादरें उसकी आसन्न उपजातियाँ हैं। इसी प्रकार 'सूती चादरें' जाति हैं तो रंग के अनुसार नीली सूती चादरें, लाल सूती चादरें एवं सफेद सूती चादरें उसकी आसन्न उपजातियाँ हैं।

'चादरें' उद्देश्य पद है। सूती चादरें, सिल्कन चादरें एवं ऊनी चादरें विधेय पद हैं। तत्त्व व्यवच्छेदक धर्म या विभाजक धर्म है। इसी प्रकार 'सूती चादरें' उद्देश्य पद है तो लाल सूती चादरें उसका विधेय पद है। रंग विभाजक धर्म है। इसी प्रकार आगे पदों में उद्देश्य, विधेय और विभाजक धर्म हैं।

अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि —

कृत्रिम या व्यावहारिक वर्गीकरण में अपने उद्देश्य और आवश्यकता के अनुसार तीनों प्रकार के धर्मों में से किसी भी प्रकार के धर्म को 'विभाजक धर्म' के रूप में अपनाया जा सकता है। दूसरे यह कि व्यावहारिक वर्गीकरण विभाजक धर्मों की एक सम्बद्ध योजना के अनुसार अपनी आवश्यकता के अनुरूप कई क्रमों तक किया जा सकता है। तीसरे यह कि व्यावहारिक वर्गीकरण में आवश्यकतानुसार शारीरिक, अभिधानिक विभाग विधि भी अपनाई जा सकती है।

पुस्तक-वर्गीकरण

पुस्तकालय-क्षेत्र में किसी पुस्तकालयाध्यक्ष के लिए वर्गीकरण के निम्न लिखित दो अर्थ होते हैं —

(१) किसी पद्धति की छपी हुई वे सारणियाँ जिनके द्वारा पुस्तकें और सूची में पत्रक एक सुव्यवस्थित क्रम में रखे जा सकें।

(२) इन सारणियों के अनुसार पुस्तकों का 'स्थान निर्धारण' करना और सारणियों के क्रमानुसार पत्रकों एवं पुस्तकों को व्यवस्थित करना।

ज्ञान और पुस्तक-वर्गीकरण

ज्ञान वर्गीकरण को मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है —

१ तार्किक
२ दार्शनिक
३ वैज्ञानिक

इनमें से *तार्किक वर्गीकरण* का विशुद्ध प्रयोग केवल तर्क में हो सकता है क्योंकि इसका आधार विभाजन प्रणाली है जैसा कि पारफिरी के वृक्ष में दिखाया गया है।

दार्शनिक वर्गीकरण वह आधारभूत योजना है जिस पर कि दार्शनिक अपनी खोजों को अन्तिम तथ्य के रूप में संगठित करता है और जिसके द्वारा अन्त में वह अपनी मान्यताओं और विश्व के अर्थ को वह दूसरों को बताता है।

वैज्ञानिक वर्गीकरण एक ऐसी पद्धति के आविष्कार का अन्वेषण करना है जिसकी श्रेणियाँ सम्बन्धित चीजों के अत्यावश्यक गुणों पर और उनके वास्तविक पारस्परिक सम्बन्धों पर आधारित हों।

ज्ञान और पुस्तक-वर्गीकरण में सब से बड़ा अन्तर यह है कि ज्ञान अपने आप को स्वयं क्रमबद्ध करता है। किन्तु पुस्तक-वर्गीकरण ज्ञान-सम्बन्धी विचारों और मान्यताओं को क्रमबद्ध करता है जो कि लिखित रूप में या अन्य रूप में होती हैं। इसलिए ज्ञान-वर्गीकरण एक भाव है क्योंकि इसमें केवल विचारों को क्रमबद्ध किया जाता है। लेकिन पुस्तक-वर्गीकरण ठोस होता है क्योंकि यह विचारों के लिखित प्रतिनिधित्व से सम्बन्धित होता है जो कि विचारों से कहीं अधिक कठिन है। दूसरी बात है कि ज्ञान-वर्गीकरण पूर्व धारणा से युक्त विचारों पर आधारित होता है। यह रूढ़िगत या चालू वर्तमान सिद्धान्तों पर निर्भर करता है जिसको कि नया सिद्धान्त उलट-पलट भी सकता है। चूँकि पुस्तकें विचारों की वास्तविक प्रतीक हैं अतः उनके विभिन्न रूप और उद्देश्य—मनोरंजन, शिक्षा और साहित्यिक—माँग करते हैं कि पुस्तकालय की आलमारियों में किसी भी सुव्यवस्थित पद्धति के अनुसार उनका क्रमबद्ध व्यवस्थापन हो। अब यहाँ पर एक बड़ा अन्तर स्पष्ट दिखाई देने लगता है। मस्तिष्क में विचारों को क्रमबद्ध रखने की अपेक्षा यह पुस्तकों का व्यवस्थापन एक विशेष शक्ति की अपेक्षा करता है। वास्तविक चीजें जो एक साथ उपयोग में आ सकती हैं उनको एक स्थान पर इकट्ठा करना जिससे कि वे आवश्यकता पड़ने पर सरलतापूर्वक मिल सकें। इस प्रकार ज्ञान-वर्गीकरण और पुस्तक-वर्गीकरण के उद्देश्यों के अनुसार इन दोनों में बहुत अन्तर है।

अब तक पुस्तकों को क्रमबद्ध रखने के लिए अनेक सिद्धान्त अपनाए गए हैं जिनमें से निम्नलिखित मुख्य हैं —

१ आकार
२ परम्परा
३ जिल्दबंदी का रंग
४ मूल्य
५. साहित्यिक मूल्य
६. प्राप्तिक्रमांक
७. कालक्रम, प्रकाशन काल
८ समय विभाग के अनुसार कालक्रम
९. प्रसिद्धि, रुचि
१० मुद्रक-प्रकाशक
११ लेखक और संपादक
१२ भाषा
१ प्रकाशन का भौगोलिक स्थान
१४ प्रतिपाद्य विषय का भौगोलिक स्थान
१५. विषय, अकारादि क्रम
१६ विषय, क्रमबद्ध

पुस्तक-वर्गीकरण का महत्त्व

पुस्तकालय इस लिए होते हैं कि वे पाठकों के लिए पुस्तकों की व्यवस्था करें। अतः पुस्तकालयों का समूह इस प्रकार से क्रमबद्ध और सुव्यवस्थित होना चाहिए कि अधिक से अधिक तत्परतापूर्वक प्रभावशाली ढंग से पुस्तकालय सेवा उपलब्ध हो सके। पुस्तकें इस लिए पढ़ी जाती हैं कि उनका प्रतिपाद्य विषय रुचिकर होता है, वे सूचना प्रदान करती हैं या उनसे मनोरंजन होता है। इन पुस्तकों में से साहित्य को छोड़ कर अधिकांश पुस्तकें अपने प्रतिपाद्य विषय के अनुसार माँगी जाती हैं न कि आकार, नाम या लेखक के नाम से। यद्यपि बहुत से पाठक अपने अध्ययन में विषय के साथ विशेष लेखक या पुस्तक को भी शामिल कर लेते हैं।

जब आकार के अनुसार पुस्तकें रखी जाती थीं तो स्पष्ट था कि उस आकार से विषय का ज्ञान नहीं हो सकता था क्योंकि पुस्तक के आकार और उसके विषय का आपस में कोई सम्बन्ध नहीं होता। अतः उससे पाठकों की माँग पूरी करने में बहुत कठिनाई होती थी। फिर लेखक के क्रम से जब पुस्तकें व्यवस्थित की जाने लगीं तो निःसन्देह यह क्रम आकार के क्रम की अपेक्षा अच्छा सिद्ध हुआ। लेकिन किसी विशेष विषय की पुस्तकें चाहने वाले पाठकों को इसमें कठिनाई होती थी क्योंकि पुस्तकें एक साथ न मिल पाती थीं। उन्हें बहुत सी पुस्तकें व्यर्थ ही उलटनी पड़ती थीं। इस प्रकार विषय के अनुसार पुस्तकों का क्रमबद्ध करने की माँग हुई। इस प्रकार की व्यवस्था से पाठकों को सुविधा होने लगी यह क्रम आर्थिक दृष्टिकोण से भी लाभकर सिद्ध हुआ। धीरे धीरे अब आधुनिक पुस्तक-वर्गीकरण में पुस्तकें पहले विषयानुसार क्रमबद्ध की जाती हैं और फिर आलमारियों में व्यवस्थित करते समय विषयों के अन्तर्गत पुस्तकों को लेखक और शीर्षक क्रम से भी विशेष रूप से क्रमबद्ध कर दिया जाता है।

'वर्गीकरण पुस्तकालय-कला की आधारशिला है' इस कथन की पुष्टि वैज्ञानिक पुस्तक-वर्गीकरण से होती है। वैज्ञानिक विधि से 'पुस्तक वर्गीकरण' इस लिए आवश्यक है,[1] क्योंकि—

१—यह पुस्तकों को एक ऐसे क्रम से व्यवस्थित कर देता है जिससे

---

१ केले जी० ओ० द क्लैसिफिकेशन आफ बुक्स—१९३७ पृ० १७ के आधार पर।

उपयोगकर्ताओं और पुस्तकालय कर्मचारियों को अध्ययन सामग्री के आदान प्रदान और रख रखाव में सुविधा होती है।

२—यह पुस्तकों के चुनाव, संग्रह की जाँच और संग्रह से पुस्तकें वापस निकालने और छाँटने आदि में सहायक होता है।

३—इससे सुसंगठित समूहों में पुस्तकों का समावेश करने में सुविधा होती है। और यह एक सरल साधन है जिसके द्वारा पुस्तकों को अपने सारणित स्थानों पर वापस रखने में भी सुविधा होती है।

४—यह सूची के माध्यम से उपयोगकर्ताओं के लिए पुस्तकों के प्रतिपाद्य विषय का विश्लेषण करता है और उनको शीघ्रतापूर्वक सूची से पुस्तक की ओर जाने का हवाला देता है। साथ ही यह एक ऐसा साधन है जिससे संग्रह को अच्छे ढङ्ग से प्रदर्शित किया जा सकता है।

५—किसी विशेष उद्देश्य से यदि मुख्य संग्रह में से कुछ निश्चित पुस्तकों को वापस लेना हो या प्रदर्शित करना हो तो इससे सुविधा होती है। इसकी सहायता से पुस्तकालयाध्यक्ष अपने केन्द्रीय पुस्तकालय से शाखा पुस्तकालयों तथा लेन देन विभाग एवं वितरण-केन्द्रों को समुचित पुस्तकें सरलतापूर्वक दे सकता है।

६—इसके सहारे पुस्तकों के आगत निगत का लेखा रखने में सुविधा होती है। इससे अनेक प्रकार के आँकड़े तैयार करने में मदद मिलती है। इस प्रकार अपने संग्रह के विभिन्न उपविभागों की स्थिति का सही पता लगता रहता है और माँग प्रस्तुत की जा सकती है।

७—इसके द्वारा आलमारियों के खानों और स्टाक रजिस्टर के माध्यम से पूरे संग्रह की जाँच करने में भी सहायता मिलती है।

८—विविध प्रकार की वाङ्मय सूचियों, पुस्तक सूचियों, सूचीकरण आदि में एवं शोध कार्य में भी इससे सहायता मिलती है।

इस प्रकार पुस्तकालय कर्मचारियों और उपयोगकर्ताओं के समय की बचत होती है।

इसी लिए 'पुस्तक-वर्गीकरण' को पुस्तकालय शास्त्र की सारभूत शाखा माना गया है और बहुत अंश तक पुस्तकालय की सफलता और असफलता इसी पर निर्भर करती है।

चूँकि 'पुस्तक-वर्गीकरण' का मुख्य लक्ष्य है ऐसी व्यवस्था करना जिससे पुस्तकों का उपयोग सब प्रकार से भलीभाँति सुविधापूर्वक किया जा सके, अतः पुस्तकों का वर्गीकरण उनके वास्तविक प्रतिपाद्य विषय पर आधारित

होना चाहिए और ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि जिन पुस्तकों का उपयोग एक साथ हो वे आलमारियों में या एकत्र हो रखी जायें।

वह पुस्तक वर्गीकरण सफल हो सकता है जो पुस्तकों के समूह बनाने में व्यावहारिक सुविधा प्रदान कर सके। पुस्तकें इस ढंग से व्यवस्थित की जायें कि अनजान पाठक को भी कठिनाई न हो। यदि किसी पाठक में किसी विषय के प्रति सहसा उत्कंठा जागृत हुई तो उसको इस सम्बन्ध में सूचना अवश्य प्राप्त होनी चाहिए। यह आवश्यक नहीं है कि वह भविष्य में उस विषय को विस्तार पूर्वक पढ़े ही। 'प्रत्येक पाठक को अभीष्ट अध्ययन सामग्री मिल सके और उसका समय नष्ट न हो' इस आदर्श तक पहुँचने में पुस्तक वर्गीकरण को सहायक होना चाहिए न कि बाधक।

सारणी का आधार

पुस्तक-वर्गीकरण की सारणी का आधार है ज्ञान-वर्गीकरण। ज्ञान का क्षेत्र व्यापक एवं अनन्त है। इसको किसी भौगोलिक चित्र की भाँति नहीं दिया जा सकता। किन्तु यह बात स्वीकार कर ली गई है कि पुस्तक वर्गीकरण ज्ञान वर्गीकरण की सारणी पर आधारित होना चाहिए। साथ ही उसमें पुस्तकों के शारीरिक रूप का समावेश भी होना चाहिए। ज्ञान की इस सारणी का क्रम ऐतिहासिक, विकासात्मक या अन्य किसी वैज्ञानिक युक्तिसंगत आधार पर होना चाहिए।

पुस्तकों का विषय-वर्गीकरण 'स्वाभाविक' होना चाहिए और उसे विज्ञानों के क्रम का अनुकरण करना चाहिए। स्वाभाविक वर्गीकरण का पूर्ण रूप से पालन प्राणिविज्ञान के वर्गीकरण में विकासात्मक पद्धति पर होना आवश्यक है। ऐसा करने से बनावट के अनुसार प्राणि-जगत् का क्रमबद्ध व्यवस्थापन हो जाता है। वनस्पति विज्ञान में भी ऐसी ही व्यवस्था उचित है जहाँ पर वनस्पतियों के प्रकार एवं प्रकृति के अनुसार उनका वर्गीकरण संगत प्रतीत होता है। ज्ञान का अधिकांश भाग जो पुस्तकों में उपलब्ध है वह मानवकृत है। अतः राजनीति, शिल्प, दर्शन आदि सभी विषयों में विकास-क्रम की खोज पुस्तक-वर्गीकरण के उद्देश्य से करना असंगत होगा। अतः प्राणिविज्ञान एवं वनस्पति विज्ञान का वर्गीकरण 'स्वाभाविक' पद्धति पर तथा शेष विषयों का वर्गीकरण 'कृत्रिम' पद्धति पर किया जाना चाहिए और ज्ञान-वर्गीकरण की सारणी का निर्माण इसी सिद्धान्त पर होना चाहिए।

सारणी का सगठन (निर्माण)

श्री रिचर्डसन महोदय का यह कथन है कि 'पुस्तकें उपयोग के लिए एकत्र की जाती हैं, उनकी व्यवस्था उपयोग के लिए की जाती है और यह उपयोग ही है जो कि वर्गीकरण का उद्देश्य है'।[१] 'पुस्तक वर्गीकरण का प्रारम्भिक उद्देश्य है पुस्तकालय कर्मचारियों और पाठकों के लिए किसी सुविधाजनक क्रम में पुस्तकों को व्यवस्थित करना या पुस्तकों में विद्यमान ज्ञान को केवल प्रदर्शित करना'।[२] अतः यह बात साफ मालूम होती है यदि पुस्तक-वर्गीकरण की कोई सारणी का निर्माण करना हो तो यह उद्देश्य दिमाग में जरूर होना चाहिए।

पुस्तकों का वर्गीकरण पुस्तकों के वास्तविक प्रतिपाद्य विषय पर आधारित होना चाहिए न कि सार्वभौम सृष्टिक्रम के आदर्श सिद्धान्तों पर। पुस्तकें आवश्यकताओं का उत्तर देने के लिए लिखी जाती हैं और उनका उद्देश्य है विचारों को प्रस्तुत करना। लेखक द्वारा पुस्तकों में प्रतिपादित विचारों के अनुसार पुस्तकें स्वभावतः अपने को उपयोगार्ह समूहों में छाँट लेती हैं। विषय के अनुसार पुस्तकों को क्रमबद्ध करने का जो भी तरीका हो वह इस तथ्य पर आधारित होना चाहिए और यह मापदण्ड पुस्तक वर्गीकरण में प्रमुख रूप में सब नियमों के ऊपर विद्यमान होना चाहिए। ऐसा करने से ज्ञान का प्रत्येक मुख्य समूह स्वतः स्वतन्त्र रूप से छोटे-छोटे विषयों एवं उपविषयों आदि में व्यवस्थापित [redacted] जाता है। अतः पुस्तकों को व्यवस्थित करते समय ध्यान रखना चाहिए कि पुस्तकें जिनका उपयोग एक साथ हो वे आलमारियों में एक साथ ही एकत्र रखी जाय।

मुख्य विषय के अन्तर्गत उपविभाजन उस विषय के विशेषज्ञों के मत के अनुसार होना चाहिए। इतिहास देशों के अन्तर्गत काल क्रम से विभाजित हो। कलाएँ, तत्त्वज्ञान की सम्प्रदायों के अनुसार आदि। सारणी को विज्ञान में विशेष रूप से वनस्पति विज्ञान और प्राणि विज्ञान विषयों के वर्गीकरण में वैज्ञानिक प्रणाली का अनुसरण करना चाहिए। यदि पुस्तक-वर्गीकरण बहुत सख्ती से विज्ञान के क्रम का अनुसरण करेगा तो वर्गीकरण ठीक न हो सकेगा। दूसरी बात यह है कि अति विस्तृत सूक्ष्म विभाजन पाठकों के लिए न तो व्यावहारिक ही होगा और न सुविधाजनक ही।

१ रिचार्डसन ई० सी०—क्लासीफिकेशन १९३० पृष्ठ २६।

२ सेवेज ई० ए०—मैनुअल आफ बुक क्लासिफिकेशन एण्ड डिस्प्ले १९४६ पृष्ठ ३३।

कुछ विषय ऐसे होते हैं जो तर्कपूर्ण ढंग से परस्पर सम्बन्धित नहीं होते परन्तु इतने लोक प्रसिद्ध होते हैं कि पाठक उनसे सम्बन्धित विषयांशों को सुपरिचित शीर्षक के अन्तर्गत ही देखना चाहते हैं। ऐसी दशा में क्रमबद्ध करना, व्यावहारिक सुविधा की दृष्टि से होता है। यहाँ पर उपविभाजन तथा अन्य सूक्ष्मतर विभाजन बहुधा अकारादिक्रम से होता है।

उपविभाजन करने की आदर्श रीति पुस्तकों के समूह के वास्तविक आवश्यकता पर आधारित होती है। मिस मार्गरेट मॉन का कथन है कि पुस्तकें मोटे तौर पर अपनी उपयोगिता के अनुसार अपने आप को वर्गीकृत कर लेती हैं। इस प्रकार उनके पृथक समूह आप से आप बन जाते हैं[१] —

जैसे :—

स्थापत्य सामान्य रूप
स्थापत्य विस्तार
स्थापत्य शैली
भवन के विशिष्ट प्रकार
स्थापत्य की रूपरेखा और सजावट
विविध
विशेष वर्ग के पाठकों के लिए पुस्तकें

प्रत्येक समूह पुस्तकों के स्टाक और पाठकों की आवश्यकता को देखते हुए और भी सूक्ष्म रीति से विभाजित किया जा सकता है। ऐसा करने से स्थापत्य विस्तार के अन्तर्गत दरवाजे, खिड़कियाँ आदि से सम्बन्धित पुस्तकें अलग समूहों में का जा सकती हैं और उनमें भी लोहे के दरवाजे, लकड़ी के दरवाजे, शीशे के दरवाजे आदि के सूक्ष्मतर भेद प्रभेद किए जा सकते हैं।

सारणी में प्रत्येक वर्ग, विशिष्ट विषय और प्रत्येक विषय की विभिन्न अवस्थाओं की व्याख्या और तत्सम्बन्धी पुस्तकों का पृथक् पृथक् स्थान निर्धारण होना चाहिए। नतीजा यह होगा कि ऐसी सारणी विषय के एक विशेष वर्गीकरण के रूप में हो जायगी। यदि वर्गीकरण इतना सूक्ष्म हो जाय कि प्रभेद करते करते बहुत थोड़ी पुस्तकें किसी विशेष विषय पर रह जायें तो यह अति विस्तृत हो जायगा, अतः व्यावहारिक न होगा[२]।

---

१ मॉन, एम०—कैटलॉगिंग एण्ड क्लैसीफिकेशन—१९४३, पृ० ३१ ३१।
२ कोले जे० ओ०, ? क्लैसीफिकेशन आफ बुक्स १९३७, पृ० २०।

इसलिए अधिक ध्यान इस बात की ओर दिया जाना चाहिए कि वर्गीकरण में पुस्तकों के समूह कुछ बड़े हों, स्पष्ट रूप से एक-दूसरे से सम्बन्धित हों और ऐसे समूह विषयों के ठोस समूह के रूप में है। ऐसा वर्गीकरण अधिक विश्वसनीय होगा और अधिकांश लोगों की सेवा कर सकेगा।

संक्षेप में श्री ई० विथम ह्यूम महोदय का मत है कि—

१ पुस्तक हमारे ज्ञान के संग्रह का एक ठोस भाग या भागों के रूप में होती है। इसलिए इन्हें दार्शनिक वर्गीकरण क्रम से नहीं रखा जाना चाहिए क्योंकि ऐसा क्रम केवल विचारों के पारस्परिक सम्बन्ध को प्रकट करने के लिए अपनाया जाता है।

२ पुस्तक वर्गीकरण का प्रारम्भिक उद्देश्य है पुस्तकों के ऐसे सुविधाजनक समूह बना कर रखना जिन समूहों में जनता उन पुस्तकों को पाने की आशा रखती हो।

३ यह ध्यान रखना चाहिए कि पुस्तक-वर्गीकरण स्वयं कोई साध्य नहीं है। यह समय को बचानेवाली एक विधि है जिसके द्वारा पुस्तकों में प्राप्त तथ्यों की खोज की जा सके और उन्हें प्रस्तुत किया जा सके।

४ पुस्तक वर्गीकरण बहुत सीमा तक कृत्रिम होना चाहिये तार्किक या दार्शनिक नहीं।

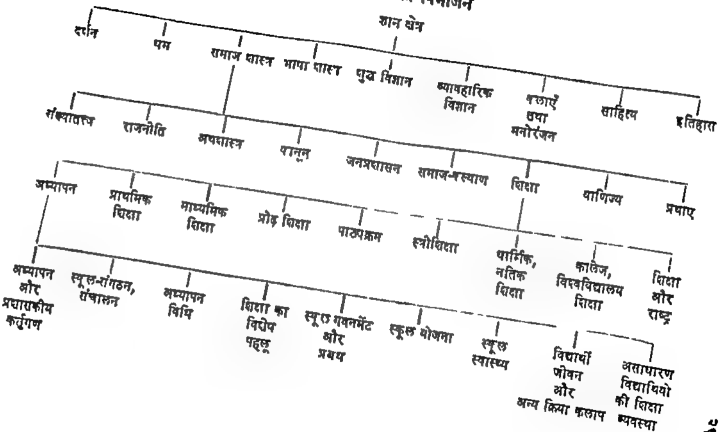
मिस्टर चार्लेस मारटेल का कथन है कि प्रारम्भिक अध्ययन, परामर्श और सारणी का प्रारूप तैयार करना एक सिद्धान्तमूत योजना होती है। यह थोड़ी-बहुत असंतोषजनक और असुविधाप्रद होती है जब तक कि व्यावहारिक रूप में इसमें सुधार न किया जाय।[२]

अतः यह आवश्यक है कि एक आदर्श वर्गीकरण अलग विशेष विषय की सारणियों के रूप में तैयार किया जाय और फिर उसका विकास उस विषय के विशेषज्ञों के द्वारा पुस्तकों के समूह के उपयोग की वर्तमान और भावी जरूरतों को ध्यान में रख कर किया जाय।

---

१ लाइब्रेरी एसोसिएशन रेकार्ड भाग १२ १४ सन् १९११ १२।

२ लाइब्रेरी आफ कांग्रेस की वार्षिक रिपोर्ट १९११ पृष्ठ ६१।


ज्ञान क्षेत्र का विभाजन
ज्ञान क्षेत्र
दर्शन
धर्म
समाज शास्त्र
भाषा शास्त्र
शुद्ध विज्ञान
व्यावहारिक विज्ञान
कलाएँ तथा मनोरंजन
साहित्य
इतिहास
संख्याशास्त्र
राजनीति
अर्थशास्त्र
कानून
जनप्रशासन
समाज-कल्याण
शिक्षा
वाणिज्य
प्रथाएं
अध्यापन
प्राथमिक शिक्षा
माध्यमिक शिक्षा
प्रौढ़ शिक्षा
पाठ्यक्रम
स्त्रीशिक्षा
धार्मिक, नैतिक शिक्षा
कालेज, विश्वविद्यालय शिक्षा
शिक्षा और राष्ट्र
अध्यापन और प्रशासकीय कर्तृगण
स्कूल-संगठन, संचालन
अध्यापन विधि
शिक्षा का विशेष पहलू
स्कूल गवर्नमेंट और प्रबंध
स्कूल योजना
स्कूल स्वास्थ्य
विद्यार्थी जीवन और अन्य क्रिया कलाप
असाधारण विद्यार्थियों की शिक्षा व्यवस्था

पुस्तक-वर्गीकरण के विशेष तत्त्व

ज्ञान वर्गीकरण की किसी सारिणी को 'पुस्तक-वर्गीकरण' संज्ञा प्रदान करने के लिये यह आवश्यक है कि उसके साथ पुस्तकों के शारीरिक रूप के बताने वाले कुछ विशेष तत्त्व जोड़ दिए जायँ। मुख्यत ये तत्त्व तीन होते हैं :—

(१) सामान्य वर्ग
(२) रूप वर्ग
(३) रूप विभाजन

इनके अतिरिक्त दो और सहायक तत्त्वों की आवश्यकता पड़ती है।

(४) प्रतीक
(५) अनुक्रमणिका

सामान्य वर्ग

जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, यह वर्ग सामान्य कृतियों के लिए होता है। इसमें ऐसी पुस्तकें रखी जाती हैं जो कि ज्ञान को सामान्य रूप में आत्मसात् करती हैं, जैसे विश्वकोश, कोश, समाचार पत्र-पत्रिकाएं आदि। तात्पर्य यह है कि ऐसी अध्ययन सामग्री जिसको सारणी में किसी भी मुख्य शीर्षक के अंतर्गत रखना सम्भव नहीं है, उसे इस सामान्य वर्ग में रखा जाता है। पुस्तक-वर्गीकरण के लिए यह एक आवश्यक वर्ग है और इससे व्यवस्था में बहुत सुविधा मिलती है। इस सामान्य वर्ग को भी एक वर्ग ही मानना चाहिए क्योंकि वह सब सामग्री जो इसके अन्तर्गत रखी जाती हैं, ज्ञान क्षेत्र के अन्तर्गत ही आती है।

ड्युई महोदय की पुस्तक वर्गीकरण पद्धति (जिसका परिचय आगे दिया जायगा) में सामान्य वर्ग निम्नलिखित रूप में रखे गए हैं :—

००० सामान्य कृतियाँ
०१० वाङ्मय सूची विज्ञान और उसकी कला
०२० पुस्तकालय विज्ञान
०३० सामान्य विश्वकोश



०४० सामान्य संगृहीत निबंध
०५० सामान्य पत्रिकाएँ
०६० सामान्य समासमितियाँ, संग्रहालय
०७० पत्रकारिता
०८० संगृहीत कृतियाँ
०९० पुस्तकीय दुष्प्राप्यताएँ

रूप वर्ग

ये वर्ग मुख्य रूप से ऐसी कृतियों के लिए होते हैं जैसे पद्य, नाटक, उपन्यास, निबन्ध आदि। यहाँ पर वे सब पुस्तकें रखी जाती हैं जिनका महत्त्व उनके उस रूप में रहता है जिसमें कि वे लिखी जाती हैं न कि उनमें प्रतिपादित विषय का। वे विषय के दृष्टिकोण से नहीं बल्कि अपने रूप के दृष्टिकोण से पढ़ी जाती हैं। ये वर्ग, विषय वर्गों के विभाग होते हैं। साहित्यिक समीक्षा सहित सभी रूपों को पुस्तकों के लिए सारणी के कुछ विभागों में स्थान दे दिया जाता है। विभिन्न वर्गीकरण पद्धतियों में इस वर्ग का स्थान निर्धारण पद्धतियों के आविष्कारक अपने ढंग से करते हैं।

ड्युई महोदय ने अपनी वर्गीकरण पद्धति में इस रूप वर्ग (साहित्य) का पहले भाषानुसार, उसके बाद रूप के अनुसार और अन्त में काल क्रम से विभाजन किया है।

जैसे —

८०० साहित्य सामान्य
८१० अमेरिकन साहित्य
८२० अंग्रेजी साहित्य
८३० जर्मन और अन्य जर्मनिक साहित्य
८४० फ्रेंच, प्रोवेंकल कैटेलन, साहित्य
८५० इटैलियन, रोमानियन, रोमांस साहित्य
८६० स्पेनिश और पुर्तगाली साहित्य
८७० लैटिन तथा अन्य इटैलिक साहित्य
८८० ग्रीक और हेलेनिक साहित्य
८९० अन्य भाषाओं का साहित्य

८२० अंग्रेजी साहित्य
८२१ काव्य
८२२ नाटक
८२३ कथा साहित्य
८२४ निबंध
८२५ पत्र साहित्य
८२६ वक्तृता
८२७ हास्य, व्यङ्ग्य
८२८ विविध
८२९ ऐंग्लो-सैक्सन साहित्य

कालक्रम का उदाहरण ड्युई की वर्गीकरण पद्धति के परिचय के प्रसङ्ग में इसी पुस्तक में दिया गया है।

रूप विभाजन

किसी भी विषय पर पुस्तकें अनेक ढंग की हो सकती हैं। विभिन्न दृष्टिकोण से और विभिन्न रूप में। कोई पुस्तक उस विषय का विश्वकोश हो सकती है तो कोई उस विषय का इतिहास, तो कोई उस विषय का निबंध आदि। इस प्रकार की पुस्तकों के लिए प्रत्येक वर्गीकरण-पद्धति का आविष्कारक अपनी पद्धति में व्यवस्था जिस तत्त्व से करता है उसे 'रूप विभाजन' कहते हैं। इस प्रकार के रूप विभाजन में बहुत से ऐसे शब्द आते हैं जो कि सारणी में विशेष विषयों के लिए भी आए रहते हैं लेकिन इन दोनों में अन्तर होता है। मुख्य सारणी में वे शब्द ज्ञान के क्षेत्र के किसी विशेष विषय का प्रतिनिधित्व करते हैं। अतः वहाँ पर प्रतिपाद्य विषय और उपयोग के अनुसार पुस्तकों को रखने का स्थान बनाया रहता है। वैसा ही शब्द यदि 'रूप विभाजन' के अन्तर्गत आता है तो वह दो बातों को प्रकट करता है, एक तो विशेष—प्रकार जिसमें कि पुस्तक लिखी गई हो या दूसरे वह दृष्टिकोण जिससे पुस्तक लिखी गई हो। इस प्रकार रूप विभाजन, पुस्तक वर्गीकरण का आवश्यक तत्त्व है। 'रूप विभाजन' को किसी विशेष वर्ग या शीर्षक के सामान्य विभाजन के रूप में भी समझा जा सकता है। व्यावहारिक रूप में ये बहुत उपयोगी होते हैं और इनसे विस्तृत और सुविधाजनक रीति से पुस्तकों का वर्गीकरण किया जा सकता है। बहुत-सी वर्गीकरण पद्धतियों में इनको 'सामान्य विभाजन' के रूप में बदल दिया जाता है। फिर तो इनका प्रयोग पूरी सारणी के किसी भी विषय की विशेषता को प्रकट करने के लिए किया जाता है।

डयुई महोदय ने अपनी वर्गीकरण-पद्धति में सामान्य विभाजन के रूप में निम्नलिखित विधि से 'रूप विभाजन' स्थिर किया है —

- ०१ दर्शन, सिद्धान्त
- ०२ रूपरेखा
- ०३ कोश
- ०४ निबन्ध, व्याख्यान आदि
- ०५ पत्रिकाएं
- ०६ सभा-समितियाँ
- ०७ शिक्षा, अध्ययन, परिषद् आदि
- ०८ संग्रह, ग्रंथावली
- ०९ इतिहास

प्रतीक

पुस्तकों का प्रतीक या नोटेशन संकेतसूचक एक लड़ी होती है जो कि किसी वर्ग, या उसके उपवर्ग, विभाग या उपविभाग के स्थान पर आती है और उसका प्रतिनिधित्व करती है। इससे वर्गीकृत पुस्तकों को व्यवस्थित करने में सुविधा होती है।

पुस्तकों के व्यावहारिक वर्गीकरण के लिए यह बहुत ही आवश्यक होता है। यदि प्रतीक न हों तो पुस्तकों पर व्यावहारिक रूप में वर्गीकरण पद्धति को लागू नहीं किया जा सकता। चूँकि वर्गीकरण पुस्तकालय शास्त्र की आधार शिला है, इसलिए यह कहा जा सकता है कि ये प्रतीक व्यावहारिक पुस्तक-वर्गीकरण के आधार हैं।

संक्षेप में प्रतीकों की उपयोगिता इस प्रकार है —

१—यह वर्गीकरण के पदों (टर्म्स) के स्थान पर आता है और इस प्रतीक से उन पदों का हवाला देने में सुविधा होती है। जैसे १५०= मनोविज्ञान।

२—यह सारणी की क्रम-व्यवस्था को बताने में सहायक होता है और सारणी में प्रत्येक का स्थान और परस्पर सम्बन्ध भी बताता है। सारणी में यदि केवल विषयों के नाम-मात्र लिखे रहें तो उनमें उन विषयों का परस्पर सम्बन्ध स्थिर और प्रकट नहीं हो सकता। उदाहरणार्थ, दशमलव वर्गीकरण में केवल 'मनोविज्ञान' लिखने से सारणी में इसका कोई सम्बन्ध नहीं प्रकट होता। किन्तु जब इसका प्रतीक १५० आता है तो वह प्रकट करता है कि वर्ग १०० का यह पाँचवाँ उपवर्ग है।

३—यह अनुक्रमणिका के उपयोग को सम्भव बनाता है। अनुक्रमणिका के साथ जो प्रतीक लगाये जाते हैं उन्हीं के द्वारा वहाँ सारणी में विषयों के स्थान का हवाला जल्दी से मिल सकता है।

४—पुस्तक के प्रत्येक भाग में संक्षिप्त प्रतीक लिखने में सरलता पड़ती है। पुस्तक की पीठ पर, वर्गीकरण में, पुस्तकों के लेबुल पर, और आगत निर्गत कार्डों पर संक्षिप्त प्रतीक लिखने से आलमारियों में पुस्तकों को व्यवस्थित करने में और लेन देन का लेखा रखने में बहुत सुविधा होती है।

५—यह पुस्तक-सूची के कार्य को भी सुसाध्य बनाता है। और यह पाठकों को संकेतों से पुस्तकों तक आने का यथाशीघ्र हवाला देता है।

६—इससे पुस्तकालय की क्रम-व्यवस्था और पथ प्रदर्शन में बहुत सहायता मिलती है।

७—यह स्मरण रखने की आदत का भी विकास करता है।

इस प्रकार प्रतीक सारणी का एक आवश्यक अंग है। यह एक ऐसे यंत्र के समान है जिसके बिना पुस्तक-वर्गीकरण कार्य नहीं हो सकता। यहाँ यह भी जानना आवश्यक है कि सारणी के बिना प्रतीक बेकार होता है, जैसे केवल १५० का कोई अर्थ नहीं है जब तक कि उसके साथ 'मनोविज्ञान' पद न हों।

प्रतीक के प्रकार

प्रतीक अनेक प्रकार से बनाया जा सकता है जैसे अक्षर, गिनती या अन्य चिह्न जो कि सारणी के पदों (टर्म्स) का प्रतिनिधित्व कर सकें। इनमें से दो प्रकार के प्रतीक प्रसिद्ध हैं —

(१) मिश्रित और (२) शुद्ध।

(१) मिश्रित—वह प्रतीक जो दो या दो से अधिक प्रकार के संकेतों से मिल कर बनता है। ब्राउन महोदय ने अपनी वर्गीकरण पद्धति में अक्षरों और अंकों के मिश्रित प्रतीकों का प्रयोग किया है।

जैसे —

L सामाजिक और राजनीति विज्ञान
२०० राजनीति विज्ञान
२०१ सरकार सामान्य
२०२ राज्य
२०३ नगर-राज्य

(२) शुद्ध—वह प्रतीक जो केवल एक प्रकार के ही संकेत से बना हो। केवल अंकों के प्रतीक का प्रयोग ड्युई महोदय ने अपनी वर्गीकरण पद्धति में इस प्रकार किया है —

३०० समाज-शास्त्र
३१० संख्याशास्त्र
३२ राजनीति विज्ञान
३३० अर्थशास्त्र आदि

अच्छे प्रतीक के गुण

सारणी में विषय के लिए जो प्रतीक हों उनमें निम्नलिखित गुण होने चाहिए —

(१) वह क्रम को स्वतः और स्पष्टतया प्रस्तुत कर सके।

(२) वह जहाँ तक सम्भव हो सरल और संक्षिप्त हो ।

(३) वह कहने, लिखने और याद करने में सरल हो ।

(४) वह लोचदार हो जिससे कि जहाँ जरूरी हो क्रम को भङ्ग किए बिना उसमें समावेश किया जा सके ।

इन गुणों के आधार पर विवेचना करते हुए रिचर्डसन तथा ब्लिस जैसे विद्वानों ने मिश्रित प्रतीक को उपयोगी माना है । रिचर्डसन महोदय का मत है कि 'प्रत्येक व्यावहारिक वर्गीकरण-पद्धति देर या सबेर अवश्य ही अंक और अक्षर दोनों का प्रयोग करती है' ।[१]

लोचदार होना प्रतीक का एक आवश्यक गुण है । प्रत्येक सारणी में कुछ समय के बाद कुछ विस्तार या फैलाव की आवश्यकता पड़ती है । पुस्तक-वर्गीकरण के विषय में तो यह बात विशेष रूप से लागू होती है । पुस्तकें प्रायः ज्ञान के ताजे विकास के दृष्टिकोण से लिखी जाती हैं जिनके लिए पहले से बनी हुई सारणी में कोई स्थान नहीं भी रहता । अतः इन नये विषयों की पुस्तकों के लिए स्थान बनाना आवश्यक हो जाता है । और यहीं पर प्रतीकों के लोचदार होने का महत्त्व साफ जान पड़ता है । यदि प्रतीक किसी भी स्थान पर प्रतीकों के परिवर्द्धन की आज्ञा देता है तो उससे नया विषय सारणी में सुसम्बन्धित स्थान पर समाविष्ट हो जाता है और क्रम-व्यवस्था में कोई हेर फेर नहीं करना पड़ता । दशमलव-वर्गीकरण पद्धति के प्रतीक के लोचपन का एक नमूना इस प्रकार है —

३००	समाज शास्त्र सामान्य
३७०	शिक्षा
३७१	अध्यापक
३७१ २	स्कूल संगठन और संचालन
३७१ २१	प्रवेश, दाखिला
३७१ २२	ट्यूशन
३७१ २३	स्कूल के वर्ष का संगठन
३७१ २४	छात्र समुदाय का संगठन ।

स्मरणशीलता

प्रतीकों में स्मरणशीलता का गुण होना आवश्यक है । दशमलव वर्गीकरण पद्धति में यदि 'विभाजन के सामान्य रूप' एक बार याद हो जाते

---

१ रिचर्डसन, ई० ए०—क्लासीफिकेशन—१९३० पृ० ३९ ।

हैं तो ये आवश्यकतानुसार सभी शीर्षकों के साथ प्रयुक्त हो सकते हैं। इतिहास का वर्ग भी स्मरणशीलता के गुण से युक्त है। '९४० ९९९' को मों त देशों के अनुसार विभाजन कीजिए, ऐसे निर्देशन से बहुत सहायता मिलती है।

जैसे —

६५५.४ प्रकाशन और पुस्तक बिक्री का इतिहास

६५५ ४४२ इंगलेण्ड में प्रकाशन का इतिहास

६५५.४४३ जर्मनी में प्रकाशन का इतिहास

इन संख्याओं को बनाते समय 'इतिहास' को सूचित करने वाला ९ का अंक छोड़ दिया गया है। ९४२ इंगलैण्ड और ९४३ जर्मनी में से क्रमश ४२ ४३ ले लिया गया है।

सहायक प्रतीक-संख्याएँ

जब पुस्तकों का विषयानुसार वर्गीकरण हो जाता है तो कुछ निश्चित शीर्षकों के अन्तगत उन्हें एकत्र व्यवस्थित करने के लिए प्राय एक और संख्या की आवश्यकता बनी रह जाती है। शेल्फ में वर्गसंख्या के अन्तर्गत पुस्तकों के व्यवस्थित करने के लिए अनेक रीतियाँ अपनाई जाती हैं, उनमें से मुख्य ये हैं :—

१—प्रकाशन के वर्ष के क्रम के अनुसार

२—प्रतिपाद्य विषय के मूल्यांकन के अनुसार (उत्तम पुस्तकें पहले या उत्तम पुस्तकें अन्त में)

३—प्राप्तिसंख्या के क्रम के अनुसार

४—लेखक के अकारादि क्रम के अनुसार

इनमें से अंतिम क्रम सब से अधिक सुविधाजनक माना जाता है क्योंकि पुस्तकालय के उपयोगकर्त्ताओं को यह क्रम जल्दी समझ में आ जाता है। कम पढ़े लिखे लोगों के लिए यह क्रम अधिक उपयोगी है। इस क्रम से समय की बचत भी होती है।

शेल्फ में लेखकों के अकारादि क्रम से पुस्तकों को व्यवस्थित करने में एक लेखक की पुस्तकों को दूसरे लेखक की पुस्तकों से अलग करना और एक लेखक की पुस्तकों में से भी एक पुस्तक को दूसरी पुस्तक स अलग करना जरूरी है। लेखक चिह्न संकेत द्वारा पृथक् करने की अनेक सारणियाँ छपी हुई हैं। उनमें कुछ में केवल अंक और कुछ में अंक और अक्षर दोनों

के संयोग से ऐसे प्रतीक बनाये गए हैं जो लेखकों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये प्रतीक संख्याएँ जब वर्गसंख्या के साथ जोड़ दी जाती हैं तो उन्हें पुस्तक संख्या (बुक नम्बर) या लेखकांक भी कहा जाता है।

कटर की लेखक-सारणी (ऑथर-टेबुल)

सब से प्रसिद्ध लेखक सारणी कटर महोदय की है जिसको कि उन्होंने अपनी 'विस्तारशील वर्गीकरण पद्धति' में बताया है। यह अक्षर-क्रम से बनी एक सारणी है जिसे लेखक के नाम के प्रारम्भिक अक्षर या अक्षरों के आधार पर बनाया गया है। इसमें अंकों को बहुत वैज्ञानिक क्रम से रखा गया है।

जैसे —

(१) यदि लेखक का नाम किसी व्यंजन अक्षर से प्रारम्भ होता हो तो उसका पहला अक्षर लिया जाता है।

जैसे —

Holmes H 73
Huxley H 98
Lowell L 95

(२) यदि लेखक का नाम स्वर अक्षर से या S अक्षर से प्रारम्भ होता है तो आदि के दो अक्षर लिए जाते हैं।

जैसे —

Arne An 7
Upton Up 1
Semmes SE 5

(३) यदि लेखक का नाम Sc से प्रारम्भ हो तो आदि के तीन अक्षर लिए जाते हैं।

जैसे —

Scammon SCA 5

लेखक का यह चिह्न वर्गसंख्या के साथ जोड़ दिया जाता है।

जैसे —

G 45 B 34

इसमें G 45=इंगलैण्ड का भूगोल और B 34=Beard

यह प्रायः इस प्रकार लिखा जाता है—G 45
B 34

यद्यपि इस सारणी में बारह सौ से ऊपर चुने हुए नामों को प्रतीक संख्याएँ दी गई हैं किन्तु बहुत से ऐसे नाम आ जाते हैं जिनके लिए सोच समझ कर निकटतम नाम की प्रतीक संख्या डालनी पड़ती है। इस लेखक-सारणी का प्रयोग किसी भी वर्गीकरण पद्धति के साथ किया जा सकता है

कटर की इस लेखक सारणी का संशोधित और परिवर्धित रूप भी छपा है, जिसमें J K, Y Z, E, I O और U अक्षरों को दो अंक और Q और X को एक अंक वाला किया गया है और शेष अक्षरों में तीन अंकों का क्रम रखा गया है।

जैसे —

Rol 744
Role 745
Rolf 746 आदि

इनके अतिरिक्त श्री L Stanley Jast श्री Merril और श्री बिकिंसन की भी लेखक सारणियाँ प्रसिद्ध हैं।

श्री ब्राउन महोदय ने 'विषय वर्गीकरण-पद्धति' में और डा० रंगनाथन जी ने 'कोलन-वर्गीकरण-पद्धति' में इस उद्देश्य के लिए अपनी अलग-अलग विधियाँ अपनाई हैं।

भारतीय प्रयास

भारतीय भाषाओं की वर्णमाला अंग्रेजी वर्णमाला से भिन्न है। भारत में लेखक अपने व्यक्तिगत नामों से अधिक प्रसिद्ध होते हैं। इन दोनों कारणों से 'कटर-आयर टेबुल' भारतीय लेखकों की प्रतीक संख्या बनाने में उचित सहायक नहीं हो पाता। अत भारतीय नामों के लिए कुछ लोगों द्वारा स्वतन्त्र प्रयास किए गए हैं। इनमें श्री प्रमीलचन्द्र बसु का 'ग्रंथकार नामा' प्रसिद्ध है। यह बँगला में है और कटर महोदय की सारणी के ढाँचे पर बनाया गया है। इसके अनुसार प्रतीक संख्याएँ इस प्रकार हैं।—

ज	१०
जग	११
जग जीवन	१२
जग ज्योति	१३
जगत	१४

इसके अतिरिक्त श्री सतीशचन्द्र गुह ने भी लेखकानुक्रमिक संकेत अपनी 'प्राच्य वर्गीकरण-पद्धति' में दिये हैं।

समीक्षा

अब अधिकांश पुस्तकालय-वैज्ञानिकों का यह मत है कि किसी लेखक-सारणी का प्रयोग उचित नहीं है। व्यावहारिक रूप में उनका प्रयोग व्यर्थ है। उनका कहना है कि अंकों के सीमित घेरे में संसार की सभी भाषाओं के विभिन्न प्रकार के लेखकों के नामों को लाना असम्भव है और इससे उलझन बढ़ जाती है। इन सारणियों में जो भी प्रतीक बनाया जाता है, उसमें अलग से दूसरा और प्रतीक न जोड़ा जाय तो वह और उलझन पैदा कर देता है। इससे लेखक का असली नाम ढक जाता है। अत यदि जरूरत पड़े तो लेखक के नाम के प्रारम्भ के तीन अक्षरों का ले लेना अधिक अच्छा है। अगर अधिक विस्तार की जरूरत हो तो प्रारम्भ के चार, पाँच या छः अक्षर प्रयोग किए जा सकते हैं। यह उस रीति से तो उत्तम ही है जिसमें प्रारम्भ के एक या दो अक्षर ले कर तब अंकों के सहारे बाकी अक्षरों को अंकों में बदलना पड़ता है।

अनुक्रमणिका

अनुक्रमणिका सारणी में उल्लिखित पदों की अकारादिक्रम से बनी हुई सूची है जिसमें सामने प्रतीक भी दिया रहता है। इसमें पदों के सभी पर्याय वाची 'पद' विषय के सूक्ष्मतम भागों के साथ (यहाँ तक कि सारणी में चाहे वे न भी आ पाये हों) होना चाहिए। यह अनुक्रमणिका श्रम को बचाती है। इसकी सहायता से विषयों को ढूँढने में सुविधा होती है किन्तु इसे कभी भी वर्गीकरण का मुख्य साधन नहीं बनाना चाहिए। इसका मुख्य गुण यह विश्वास दिलाना है कि सारणी के अन्तर्गत जो विषय हैं वे अपने निर्धारित स्थान पर ही वर्गीकृत हों।

अनुक्रमणिका दो प्रकार की होती है—विशिष्ट और सापेक्ष।

विशिष्ट—जब कि सारणी में दिए गए हर टॉपिक के लिए केवल एक सकेत उसके पर्याय सहित दिया जाता है तो उसे विशिष्ट अनुक्रमणिका कहते हैं।

जैसे ब्राउन में —

Eggs F 601

सापेक्ष—जब कि सारणी में उल्लिखित विषय, उसके सब पर्याय, और एक बड़ी सीमा तक एक विषय का अन्य विषयों से सापेक्ष सम्बन्ध भी सम्मिलित कर लिया जाता है तो उसे सापेक्ष अनुक्रमणिका कहते हैं।

जैसे इण्डेक्स में :—

Eggs

anc nutrition physiol	612 39283
as food dom economy	614 12
hygiene	613 28
cookery	614 665
Easter folklore	398 33212
ornithology	598 5
painting medium	751 242
poultry farming	636 513

सापेक्ष अनुक्रमणिका की सुविधाएँ

(१) यह अकारादि-क्रम की सरलता से युक्त होती है और स्वयं व्याख्या करने में समर्थ होती है।

(२) यह प्रत्येक शीर्षक को उन अनेक रूपों में दिखलाती है जिसमें कि वह विषय व्यवहृत हो सकता हो, साथ ही उसका प्रतीक भी दे देती है।

(३) विभिन्न स्थानों में एक विषय की अवस्थाओं को रख कर वर्गकार के लिए सुविधा उत्पन्न करती है।

असुविधाएँ

(१) किसी विषय के लिए अधिक विकल्प (Alternative) देने से गलत 'निर्णय' भी हो जाता है।

(२) सभी दृष्टिकोणों को दिखलाना सम्भव नहीं होता इसलिए आलोचना का पात्र भी बन जाती है।

(३) छपाई के दृष्टिकोण से व्यय साध्य होती है।

विशिष्ट अनुक्रमणिका की सुविधाएँ

(१) सिद्धान्त रूप में वर्गीकरण के लिए 'एक स्थान' निर्धारित करने में पूर्ण होती है।

(२) सापेक्ष की अपेक्षा छोटी होने के कारण छपाई में कम व्यय पड़ता है।

(३) कम दुविधा और सन्देह पैदा करती है।

(४) सम्बन्धित विषयों को उनके नाम के अकारादि रूप के द्वारा अलग कर देती है।

इस प्रकार पद्धति में जो भी अनुक्रमणिका हो उससे केवल विषय को खोजने या अपने वर्गीकृत विषय की जाँच करने में सहायता लेना ही ठीक है। इससे अधिक अनुक्रमणिका का पूरा सहारा लेना अच्छा नहीं है। इसका कारण यह है कि वर्गीकरण का मुख्य उद्देश्य है सिद्धान्त रूप में ज्ञान क्षेत्र में समान विषय का एकत्र करना और उनको उनकी सम्बन्धित दशा में क्रमबद्ध करना जिससे कि उनका एक-दूसरे से सम्बन्ध स्पष्ट रूप से दिखाई पड़े। पुस्तक-वर्गीकरण के व्यावहारिक पक्ष में उपयोगिता और सुविधा को विशेष रूप से दृष्टि में रखना पड़ता है। इसलिए सर्वाङ्गपूर्ण पुस्तक वर्गीकरण में उपर्युक्त सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों बातें यथासाध्य एक साथ लाने की कोशिश की जाती है जहाँ तक कि यह प्रयोग में सम्भव हो।

पुस्तक-वर्गीकरण का मापदण्ड (Criteria)

१ इसका यथासम्भव परिपूर्ण होना चाहिए जिसमें ज्ञान का सम्पूर्ण क्षेत्र आ जाय।

२ यह सामान्य से विशेष की ओर क्रमबद्ध होना चाहिए।

३ इसमें प्रत्येक प्रकार की पुस्तक के लिए स्थान निर्धारित करने की उचित गुंजाइश हो।

४ उपयोग कर्ताओं की सुविधा के दृष्टिकोण से मुख्य वर्ग तथा उसके विभागों और उपविभागों का सुव्यवस्थित क्रम होना चाहिए।

५ इसमें जो टर्म प्रयोग किए जायें वे स्पष्ट हों, उनके साथ उनकी व्याख्या हो जिनमें उनका क्षेत्र वर्णित हो और आवश्यक स्थानों पर शीर्षक नोटेशन आदि से युक्त हो जिससे वर्गीकरण करने वाले को सहायता मिल सके।

६ यह योजना में और नोटेशन में विस्तारशील हो।

७ इसमें सामान्य वर्ग, रूप, भौगोलिक विभाजन, आदि उपर्युक्त सभी अंग हों और साथ में अनुक्रमणिका भी हो।

८ यह इस रूप में छपा हो जिसे सरलतापूर्वक उपयोग में लाया जा सके।

९ समय समय पर इसका संशोधन और परिवर्द्धन भी होते रहना चाहिए जिससे कि आधुनिक रहे।[1]

---

१ फिलिप्स डब्लू० एच०—ए प्राइमर आफ बुक क्लासीफिकेशन पृ० ५९-६० के आधार पर।

डा० रंगनाथन का पुस्तक वर्गीकरण सिद्धान्त

पद्मश्री विभूषित डा० एस० आर० रंगनाथन पुस्तकालय विज्ञान के भारतीय आचार्य हैं।[१] उन्होंने पुस्तकों के वर्गीकरण के लिए द्विबिन्दु प्रणाली (कोलन सिस्टम) का आविष्कार १९३३ ई० में किया था। यह पद्धति बहुत ही वैज्ञानिक और सैद्धान्तिक दृष्टि से परिपूर्ण है। यह पुस्तक वर्गीकरण सम्बन्धी २८ सिद्धान्तों पर आधारित है जो कि पुराने सिद्धान्तों को परिशुद्ध करने के साथ ही कुछ नवीन मान्यताएँ भी स्थापित करते हैं। इस पुस्तक के पिछले तीन अध्यायों में जो कुछ कहा गया है वास्तव में वह पुस्तक-वर्गीकरण के सिद्धान्त पक्ष को समझने के लिए एक सामान्य पहुँच है। वह पुस्तक-वर्गीकरण के पाश्चात्य आचार्यों के मत का संक्षिप्त विवेचन था है। लेकिन इन अध्यायों को पढ़ लेने के बाद डा० रंगनाथन के सूक्ष्म सिद्धान्तों को समझने में काफी सहायता मिलेगी। सत्य तो यह है द्विबिन्दु प्रणाली को समझना तब तक बहुत ही कठिन है जब तक कि इन सिद्धान्तों को भली भाँति न समझ लिया जाय। दूसरी बात यह है कि इन सिद्धान्तों को समझ लेने के बाद प्रत्येक वर्गकार यह निर्णय कर सकेगा कि पुस्तकालय के लिए कौन सी वर्गीकरण-पद्धति का प्रयोग स्थायी महत्त्व का होगा।

पुस्तक-वर्गीकरण सिद्धान्त

डा० रंगनाथन के मतानुसार किसी भी क्षेत्र (यूनिवर्स) का वर्गीकरण १८ सिद्धान्तों पर आधारित है। अर्थात् वर्गीकरण के १८ सामान्य सिद्धान्त होते हैं। चूँकि पुस्तकों का आधार ज्ञान क्षेत्र है अतः उसका वर्गीकरण १८ सिद्धान्तों के अनुसार होना चाहिए, साथ ही ज्ञान-वर्गीकरण के तीन विशेष सिद्धान्तों का प्रयोग भी उसमें होना चाहिए। फलतः ज्ञान का सम्यक् वर्गीकरण करने के लिए १८+३=२१ सिद्धान्तों का अनुसरण करना आवश्यक है। उसके बाद ज्ञान वर्गीकरण को पुस्तक-वर्गीकरण के योग्य बनाने के

---

१ विशेष परिचय 'द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति' के साथ इसी पुस्तक में आगे दिया गया है।

लिए सात विशेष सिद्धान्तों का प्रयोग आवश्यक है। इस प्रकार पुस्तक वर्गीकरण में २१+७=२८ सिद्धान्तों का पालन होना आवश्यक है।

वर्गीकरण के सामान्य सिद्धान्तों की पृष्ठभूमि

डा० रंगनाथन जी के वर्गीकरण के सामान्य सिद्धान्तों को समझने के लिए चार शब्दों को समझना आवश्यक है, वे शब्द हैं, सत्त्व, धर्म, विभाजक धर्म और क्षेत्र।

सत्त्व

जिन वस्तुओं एवं विचारों का अस्तित्व पाया जाता है चाहे वे मूर्त हों या अमूर्त, उन्हें सत्त्व कहते हैं। मूर्त या साकार वस्तुओं का अस्तित्व नाम एवं रूपात्मक होता है किन्तु अमूर्त या निराकार विचारों का अस्तित्व भावात्मक होता है। जैसे, बालक, वृक्ष, पक्षी आदि वस्तु जिनका नामरूपात्मक अस्तित्व है, सत्त्व हैं। अध्ययन-गोष्ठी, दर्शन का सम्प्रदाय आदि जिनका भावात्मक अस्तित्व है ये भी सत्त्व हैं।

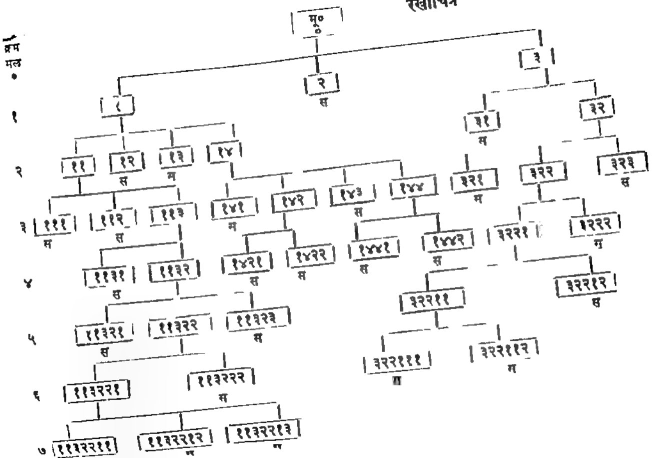
धर्म

प्रत्येक सत्त्व अपने में अनेक गुणों या विशेषताओं को धारण करता है। जैसे एक बालक गोरे रंग का है, हिन्दी भाषी है, तेज है, गरीब है। ये सब गुण उसमें विद्यमान हैं। इन गुणों को चूंकि वह अपने में धारण करता है इस लिए (धारणात् धर्म) ये सब उस बालक के धर्म हुए। इसी प्रकार अध्ययन गोष्ठी—जिसका कि भावात्मक अस्तित्व है—की स्थापना, उसका उद्देश्य आदि उसका धर्म है।

समानता और असमानता

इस प्रकार जब हमारे सामने दो सत्त्व आते हैं तो उनमें विद्यमान इन्हीं गुणों या धर्मों के आधार पर हम कहते हैं कि इन दोनों सत्त्वों में समानता है या नहीं। जैसे यदि हमारे सामने मोहन और सोहन दो बालक हों और दोनों की जन्म तिथि एक हो किन्तु मोहन काले रंग का और सोहन गोरे रंग का हो तो हम कहेंगे कि जन्मतिथि के आधार पर दोनों में समानता है किन्तु रंग के आधार पर दोनों में असमानता।

नोट—आगे पृष्ठ ४५ से पढ़िए।


रेखाचित्र
क्रम मल
०
१
२
३
४
५
६
७
मू०
१
२
३
११
१२
१३
१४
३१
३२
१११
११२
११३
१४१
१४२
१४३
१४४
३२१
३२२
३२३
११३१
११३२
१४२१
१४२२
१४४१
१४४२
३२२१
३२२२
११३२१
११३२२
११३२३
३२२११
३२२१२
११३२२१
११३२२२
३२२१११
३२२११२
११३२२११
११३२२१२
११३२२१३

विभाजक धर्म

प्रत्येक सत्त्व में अनेक गुण या धर्म पाये जाते हैं। उनमें से जब हम किसी एक धर्म को अपने उद्देश्य के अनुसार चुन लेते हैं तो उस धर्म को व्यवच्छेदक या विभाजक धर्म कहते हैं। उसी के आधार पर हम सत्त्वों को समानता और असमानता का निर्णय करते हैं। जैसे, खेल-कूद में भाग लेने के उद्देश्य से स्वस्थता और ऊँचाई दो गुणों को अध्यापक चुन लेता है और रंग, बुद्धिमत्ता तथा राष्ट्रीयता आदि अनेक गुणों को छोड़ देता है। तदनुसार वह कक्षा के बालकों में से पहले ऊँचाई फिर स्वच्छता के अनुसार कक्षा के बालकों को छाँट लेता है।

क्षेत्र

सत्त्वों के सामूहिक योगफल को क्षेत्र कहते हैं। जैसे कक्षा में अनेक बालक अलग अलग रूप में एक एक सत्त्व हैं किन्तु उनका सामूहिक योग 'कक्षा' एक क्षेत्र हुआ, जिसे हम बालक-क्षेत्र भी कह सकते हैं। सत्त्वों के समूह से छोटे क्षेत्र बनते हैं। उनसे फिर बड़े क्षेत्र बनते हैं। इस प्रकार धारे धारे वस्तुक्षेत्र और विचारक्षेत्र बन जाते हैं और अन्त में वे दोनों ही जिसके अन्तर्गत समा जाते हैं उसे हम मूलक्षेत्र, ब्रह्माण्ड या पदार्थ कह सकते हैं।

वर्गीकरण की पद्धति क्या है ?

किसी भी विभाज्य क्षेत्र में विद्यमान सत्त्वों को विभाजक धर्मों के आधार पर अलग अलग करने या छाँटने की पद्धति को संक्षेप में वर्गीकरण पद्धति कहते हैं। कल्पना कीजिए कि हमारे सामने एक मूल विभाज्य क्षेत्र है। इसमें २५ सत्त्व हैं। उनका पृथक्करण विभाजक धर्मों की सम्बद्ध योजना के अनुसार किस प्रकार होगा, इसको बायें पृष्ठ पर दिए हुए एक रेखाचित्र से समझा जा सकता है।

रेखाचित्र की व्याख्या

बायें पृष्ठ पर जो रेखाचित्र दिया हुआ है उसमें कोष्ठ रेखाओं के द्वारा वर्ग बने हुए हैं। ये कुल १० वर्ग हैं। इनके भीतर संख्याएं दी गई हैं। ये अंक वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। रेखाचित्र के देखने से ऐसा लगता है कि ये सब परस्पर सम्बन्धित हैं और शीर्षस्थ वर्ग 'मू०' से निकले हुए हैं। यहाँ पर 'मू०' अक्षर 'मूल विभाज्यक्षेत्र' का संक्षिप्त रूप है।

पूरे रेखाचित्र में २५ ऐसे वर्ग हैं जिनके नीचे 'स' लिखा गया है। 'स' अक्षर 'सत्त्व' शब्द का संकेत बोधक है। इससे यह समझना चाहिए कि ये २५ वर्ग ऐसे हैं जिनमें से प्रत्येक वर्ग केवल एक ही 'सत्त्व' वाला है। अत उनका आगे विभाजन नहीं हो सकेगा। वर्गों के भीतर जो अंक दिये गये हैं उन्हीं के द्वारा अब उनका नाम लिया जायगा।

ये अंक इस प्रकार हैं —

१११, ११२, ११३१, ११३२१, ११३२२१११, ११३२२११२, ११३२२११३, ११३२२२२, ११३२३, १२, १३, १४१, १४२१, १४२२, १४३, १४४१, १४४२, २, ३१ ३२१, ३२२१११, ३२२११२, ३२२१२, ३२२२, ३२३।

इन अंकों के क्रम में ऐसी कल्पना करनी चाहिए कि प्रत्येक अंक के बाईं ओर दशमलव का चिह्न है, जैसे १११ आदि। ऐसा कल्पना करने से यह स्पष्ट रूप से प्रकट हो जायगा कि ये पूरे अंक पूर्णरूप से दशमलव भिन्न के अनुसार सुव्यवस्थित क्रम से लिखे गये हैं।

अब इस बात पर विचार करना चाहिए कि ये सारे वर्ग जो एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं, मूल विभाज्य क्षेत्र से किस प्रकार क्रमश उद्भूत हुए।

वर्ग और अनुविन्यास

रेखाचित्र को देखने से ज्ञात होता है कि मूल विभाज्य क्षेत्र '१.०' को सब से प्रथम क्रम में तीन समूहों में विभाजित किया गया है और उनको क्रमशः १ २ और ३ अंकों से चिह्नित किया गया है। स्पष्ट है कि इस प्रकार विभाजन का कोई आधार या विभाजक-तत्त्व रहा होगा जिससे ऐसा किया गया है। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि ये वर्ग अनुक्रम से क्रमश रखे गये हैं। १, २ और ३ के क्रमिक अंक इसके प्रमाण हैं।

इस प्रकार जब किसी समूह को पृथक् कर दिया जाता है तो उसे 'वर्ग' कहते हैं। प्रथम क्रम में मूल विषय-क्षेत्र को १, २ और ३ वर्गों में छाँट दिया गया है। इसलिए १, २, ३ को 'प्रथम क्रम के वर्गों का अनुविन्यास' कहा जायगा।

रेखाचित्र में वर्ग २ एकसत्त्व वाला वर्ग है क्योंकि उसके नीचे 'स' संकेत दिया गया है। इस वर्ग में केवल एक ही सत्त्व है। अत यह 'ऐकिक सत्त्व वर्ग' हुआ और उसका आगे विभाजन नहीं हो सकता। इसके विपरीत वर्ग १ और ३ अनेक सत्त्व वाले वर्ग हैं क्योंकि इनके नीचे 'स' संकेत नहीं

किया गया है। इससे स्पष्ट है कि अब विषय-क्षेत्र के शेष २४ तत्त्वों को वे अपने में अन्तर्भूत किए हुए हैं। उनमें से वर्ग १ में १७ और वर्ग ३ में ७ तत्त्व हैं।

द्वितीय क्रम

रेखाचित्र से स्पष्ट है कि द्वितीय क्रम में वर्ग १ के उपविभाग ११, १२ १३ और १४ इन चार वर्गों में किए गए हैं। इनको 'द्वितीय क्रम के वर्गों का अनुविन्यास' कह सकते हैं। इसी प्रकार वर्ग ३ का उपविभाजन ३१ और ३२ इन दो वर्गों में किया गया है।

इन दोनों वर्गों से एक, दूसरा अनुविन्यास अब बनता है जिसको 'द्वितीय क्रम का द्वितीय अनुविन्यास' कहा जायगा।

अब इस प्रकार ११, १२, १३, १४, ३१, ३२ इन ६ वर्गों में १२, १३ और ३१ वर्ग ऐकिक तत्त्व वाले वर्ग हैं। उनके नीचे 'स' अंकित है। शेष ११, १४, ३२ बहुतत्त्वीय वर्ग हैं। वे २१ तत्त्वों को अन्तर्भूत किए हुए हैं, जिनमें से वर्ग ११ के अन्तर्गत ९ तत्त्व, वर्ग १४ के अन्तर्गत ६ तत्त्व और वर्ग ३२ के अन्तर्गत ६ तत्त्व हैं।

तृतीय क्रम

विभाजन के तृतीय क्रम में वर्ग ११ का उपविभाग वर्ग १११, ११२ और ११३ इन तीन वर्गों में किया गया है। इसी प्रकार वर्ग १४ का उपविभाजन वर्ग १४१, १४२, १४३, १४४ इन चार वर्गों में किया गया है। इसी भाँति वर्ग ३२ भी तृतीयक्रम में वर्ग ३२१, ३२२ और ३२३ इन तीन वर्गों में उपविभाजित किया गया है। इन वर्गों से तीन अनुविन्यास हो गए हैं। वर्ग १११, ११२ और ११३ प्रथम अनुविन्यास, १४१, १४२, १४३ और १४४ द्वितीय अनुविन्यास और ३२१, ३२२, ३२३ तृतीय अनुविन्यास। ये क्रमशः तृतीय क्रम के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय अनुविन्यास कहलायेंगे।

तृतीय क्रम के इन दस वर्गों में से १११, ११२, १४१, १४३ ३२१ और ३२३ ये छः वर्ग ऐकिक तत्त्व वर्ग हैं। इनके नीचे 'स' अंकित है। ११३, १४२, १४४ और ३२२ बहुतत्त्वीय वर्ग हैं। उनमें शेष १५ ... अन्तर्भूत हैं। जिनमें से वर्ग ११३ में ७ तत्त्व, वर्ग १४२ में २ ... १४४ में २ तत्त्व और ३२२ में ४ तत्त्व अन्तर्भूत हैं।

इसी प्रकार चौथे, पाँचवें, छठे और सातवें क्रम में क्रमशः विभाजन होते होते अन्त में सभी तत्त्व पृथक् हो जाते हैं जैसा कि रेखाचित्र में दिखाया गया है और अंतिम वर्गों के नीचे '०' चिह्न अङ्कित कर दिया गया है।

अब रेखाचित्र से स्पष्ट प्रकट होता है कि मूल विभाज्य क्षेत्र को छोड़ कर शेष १४ बहुतत्त्वीय वर्ग बनाए गए हैं जब कि मूल विभाज्य क्षेत्र से २५ तत्त्वों को पूर्ण विभाजित करके अलग अलग छाँट दिया गया है।

वर्गों की क्रमबद्धता

यदि इस रेखाचित्र के सम्पूर्ण ४० वर्गों को (उन वर्गों में स्थित अङ्कों को दशमलव भिन्न के अङ्कों की भाँति मान कर) गुरुत्व क्रम से व्यवस्थित करना चाहें तो इनका क्रम इस प्रकार होगा :—

०, १, ११, १११, ११२, ११३, ११३१, ११३२, ११३२१, ११३२२, ११३२२१, ११३२२११, ११३२२१२, ११३२२१३, ११३२२२, ११३२३, १२ १३, १४, १४१, १४२, १४२१, १४२२, १४३, १४४, १४४१, १४४२, २, ३, ३१, ३२, ३२१, ३२२, ३२२१, ३२२११, ३२२१११, ३२२११२, ३२२१२, ३२२२, ३२३।

यह क्रमबद्धता एक विशेष प्रकार की है जिसमें मूल विभाज्य क्षेत्र सहित १५ वर्ग और मूल विभाज्य क्षेत्र के २५ तत्त्व एक साथ रखे गये हैं। इस प्रकार के क्रम को 'शुद्ध क्रमबद्धता' या वाचिक क्रम कह सकते हैं।

वर्गीकरण पद्धति

यदि दिए हुए रेखाचित्र में से एक तत्त्वीय पच्चीस वर्गों को छोड़ कर हम केवल शेष १५ वर्गों को क्रमबद्ध करें तो उनका क्रम निम्नलिखित होगा —

०, १, ११, ११३, ११३२ ११३२२, ११३२२१, १४, १४२, १४४, ३, ३२, ३२२, ३२२१, ३२२११।

केवल वर्गों के इस गुरुत्व क्रम को प्रदर्शित करने वाली पद्धति को वर्गीकरण पद्धति कहेंगे।

वर्गों की शृंखला

ऊपर के पन्द्रह वर्गों को यदि हम ध्यान से देखें तो ज्ञात होगा कि ३, ३२, ३२२, ३२२१ वर्गों का परस्पर एकगोत्रीय सम्बन्ध-सा है। ये वर्ग आपस में एक दूसरे से कड़ी की तरह मिले हुए हैं। ऐसे वर्गों को 'वर्गों की शृंखला' कहते हैं। इस शृंखला की पहली कड़ी ३ है और आखिरी कड़ी ३२२१ है।

प्रारम्भिक शृंखला

ऐसी शृङ्खला जिसकी पहली कड़ी मूल विभाज्य क्षेत्र हो उसे प्रारम्भिक शृङ्खला या आदि शृङ्खला कहते हैं। जैसे, ०, १, १२, १२२, १२२१।

भग्न शृंखला

ऐसी शृङ्खला जिसकी अन्तिम कड़ी कोई ऐकिक वर्ग हो उसे भंग शृंखला या टूटी कड़ी कहा जाता है। जैसे, १२, १२२, १२२१, १२२१२।

पूर्ण शृंखला

ऐसी शृंखला जो मूल विभाज्य पद से जुड़ी हुई हो और जिसके अन्त में एक-तत्त्वीय वर्ग हो उसे पूर्ण शृंखला कहते हैं। जैसे, ०, १, १२२, १२२१, १२२१२।

सामान्य सिद्धान्तों का विभाजन

वर्गीकरण के सामान्य १८ सिद्धान्तों को पाँच समूहों में रखा गया है। यह विभाजन इस प्रकार है —

(क) विभाजक धर्म	७
(ख) अनुविन्यास	४
(ग) शृंखला	२
(घ) पारिभाषिक पदावली	४
(ङ) प्रतीक	१
	१८

इन सिद्धान्तों के नाम पृष्ठ ५० पर दिए गए हैं। अब इन पर क्रमशः विचार किया जायगा।

(क) विभाजन धर्म-सम्बन्धी सिद्धान्त

विभाजकधर्म को सुगमता के लिए विभाजन का सिद्धान्त (प्रिंसिपुल्स आफ डिवीजन) भी कह सकते हैं। इससे सम्बन्धित निम्नलिखित सात सिद्धान्त होते हैं :—

(१) पृथक्करण का सिद्धान्त
(२) सहगामिता का सिद्धान्त

नोट—आगे पृ० ५१ से पढ़िये

वर्गीकरण के सिद्धान्त (Canons of Classification)

	सिद्धान्त	
१	पृथक्करण का सिद्धान्त (Differentiation)	विभाजक धर्म (Characteristics)
२	सहगामिता का सिद्धान्त (Concomitance)	
३	सुसंगति का सिद्धान्त (Relevance)	
४	सुनिश्चितता का सिद्धान्त (Ascertainability)	
५	स्थायित्व का सिद्धान्त (Permanence)	
६	सम्बद्ध अनुक्रम का सिद्धान्त (Relevant Sequence)	
७	अविरोध का सिद्धान्त (Consistency)	
८	निःशेषता का सिद्धान्त (Exhaustiveness)	अनुविन्यास (Arrays)
९	ऐकान्तिकता का सिद्धान्त (Exclusiveness)	
१०	अनुकूल क्रम का सिद्धान्त (Helpful Order)	
११	अविरुद्ध क्रम (Consistent Order)	
१२	सामान्याभिधान का सिद्धान्त (Intension)	शृंखला (Chains)
१३	समावेशकता का सिद्धान्त (Modulation)	
१४	प्रचलन का सिद्धान्त (Currency)	पारिभाषिक पदावली (Terminology)
१५	परिगणन का सिद्धान्त (Enumeration)	
१६	प्रसंग का सिद्धान्त (Context)	
१७	संयतता का सिद्धान्त (Reticence)	
१८	सापेक्षता का सिद्धान्त (Relativity)	प्रतीक (Notation)
१९	अनुविन्यास में ग्राह्यता (Hospitality in Array)	ज्ञान वर्गीकरण के विशेष सिद्धान्त
२०	शृंखला में ग्राह्यता (Hospitality in chain)	
२१	स्मरणशीलता (Mnemonics)	
२२	आंशिक समवबोध का सिद्धान्त (Partial comprehension)	पुस्तक-वर्गीकरण के विशेष सिद्धान्त (Canons of Book Classification)
२३	स्थानीय भेद का सिद्धान्त (Local Variation)	
२४	दृष्टिकोण का सिद्धान्त (Viewpoint)	
२५	श्रेण्य ग्रंथ व्यवस्था का सिद्धान्त (Classics)	
२६	सामान्य उपभेद का सिद्धान्त (Common Subdivisions)	
२७	व्यवच्छेदकता का सिद्धान्त (Distinctiveness)	
२८	व्यष्टिकरण का सिद्धान्त (Individualisation)	

(३) सुसंगति का सिद्धान्त
(४) सुनिश्चितता का सिद्धान्त
(५) स्थायित्व का सिद्धान्त
(६) सम्बद्ध अनुक्रम का सिद्धान्त
(७) अविरोध का सिद्धान्त

(१) पृथक्करण का सिद्धान्त

प्रत्येक प्रयुक्त विभाजक धर्म ऐसा होना चाहिए जो पृथक्करण कर सके। अर्थात् विभाज्य को कम से कम दो भागों में अवश्य विभाजित कर सके।

इसे पृथक्करण का सिद्धान्त कहते हैं।

उदाहरण :—

यदि विद्यालय की कक्षा में स्थित बालकों को विभाजित करने के लिए 'ऊंचाई' को विभाजक धर्म के रूप में चुना जाय तो ऊँचाई के आधार पर तदनुसार बालकों का पृथक्करण हो सकेगा और कई वर्ग बन सकेंगे।

लेकिन यदि कई बालकों का ऐसा समूह है जो एक समान ऊंचाई के हैं तो वहाँ 'ऊँचाई' विभाजक धर्म नहीं हो सकती, क्योंकि उसके आधार पर एक से अधिक वर्ग बन ही नहीं सकता। ऐसी दशा में वहाँ कोई दूसरा विभाजक धर्म चुनना पड़ेगा।

डा० रंगनाथन महोदय ने अपनी द्विबिन्दु वर्गीकरण-पद्धति में प्रत्येक वर्ग के विभाजन में उपयुक्त विभाजक धर्मों का उल्लेख कर दिया है। ऐसा केवल वहाँ नहीं किया है जहाँ कि विभाजक धर्मों की सहायता से विभाजन न हो कर आप्त क्रम के अनुसार विभाजन किया गया है।

उदाहरण —

राजनीति शास्त्र के विभाजन के लिए दो विभाजक धर्म आधार माने गये हैं, राज्य के प्रकार और उसकी समस्याएँ।

'राज्य के प्रकार' नामक पहले विभाजक धर्म के आधार पर किए गये विभाजन में राज्य के निम्नलिखित प्रकार सारणीबद्ध किए गये हैं —

अराजकतावाद
पुरातनवाद
सामन्तशाही

राजतन्त्र
अल्प व्यक्तियों का सत्तायुक्त राज्य
जनतन्त्र
रामराज्य
विश्वराज्य

दूसरे विभाजक धर्म के आधार पर निम्नलिखित विभाग किये गये हैं —

(१) निर्वाचन पद्धति
(२) शासकीय संगठन के भाग
(३) शासन के कार्य
(४) राज्य के विभिन्न जन समूहों से सम्बन्ध
(५) नागरिक अधिकार और कर्त्तव्य, इत्यादि

अब यदि 'जनतन्त्र में निर्वाचन' विषय किसी पुस्तक का वर्गीकरण करना है तो सब से पहले इस पुस्तक का मुख्य विषय हुआ राजनीति। राजनीति विषय का प्रतीक कोलन प्रणाली में 'W' है।

उसके बाद 'राज्य के प्रकार' विभाजक धर्म के आधार पर गठित सारणी में से 'जनतन्त्र' का प्रतीक है ६ और 'राज्य की समस्याएँ' विभाजक धर्म पर गठित विभागों में से 'निर्वाचन पद्धति' का प्रतीक है १। इस लिए 'जनतन्त्र में निर्वाचन' विषय की वर्ग संख्या हुई— W ६ १

कोलनचिह्न : संयोजक है।

२ सहगामिता का सिद्धान्त

दो विभाजक धर्म सहगामी न होने चाहिए।
इसको सहगामिता का सिद्धान्त कहते हैं।

उदाहरण —

यदि विभाजक धर्म दो हों किन्तु ऐसे हों जिनके आधार पर बनने वाले (परिणामत) वर्ग एक ही बनते हों तो इस प्रकार के सहगामी धर्मों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। जैसे यदि कक्षा के बालकों का विभाजन 'आयु और जन्मतिथि' इन विभाजक धर्मों से किया जाय तो दोनों उद्भूत वर्ग बिल्कुल एक ही होंगे। इसलिए इनमें से एक स्थान पर केवल एक ही का प्रयोग किया जा सकता है, दोनों का नहीं।

परन्तु कक्षा में बालकों का विभाजन 'आयु' और 'ऊँचाई' इन दो विभाजक धर्मों से किया जा सकता है क्योंकि ये दोनों दो स्वतन्त्र विभाजक धर्म हैं। इनके प्रयोग से दो भिन्न उपवर्ग उद्भूत होंगे।

३ सुसंगति का सिद्धान्त

प्रत्येक विभाजक धर्म वर्गीकरण के उद्देश्य के अनुकूल (सुसंगत होना चाहिए। इसको सुसंगति का सिद्धान्त कहते हैं।

उदाहरण —

(क) यदि कक्षा में स्थित बालकों का विभाजन *शिक्षा के उद्देश्य से* करना हो तो मातृभाषा, बुद्धिमत्ता और ज्ञान का स्तर, विभाजक धर्म के लिए सुसंगत होंगे। लेकिन ऊंचाई, रंग, वेषभूषा आदि विभाजक धर्म असंगत होंगे।

(ख) इसी प्रकार शारीरिक खेल कूद के उद्देश्य से यदि कक्षा के बालकों का विभाजन करना हो तो ऊँचाई, शारीरिक शक्ति और आयु विभाजक धर्म के रूप में संगत होंगे लेकिन रंग, ज्ञान का स्तर, वेषभूषा आदि विभाजक धर्म के रूप में असंगत होंगे।

(ग) इसी प्रकार पुस्तकों के क्षेत्र में वर्गीकरण का उद्देश्य पुस्तकालय में पाठकों को सुविधा देना है तो पुस्तकों का प्रतिपाद्य विषय, भाषा, प्रकाशनवर्ष और लेखक विभाजक धर्म के रूप में संगत होंगे।

लेकिन ऊपर विभाजक धर्म मुद्रक की आवश्यकताओं के अनुकूल न होंगे। वहाँ पर टाइप, हाशिया, चित्रण और कागज आदि विभाजक धर्म के रूप में संगत होंगे।

४ सुनिश्चितता का सिद्धान्त

प्रत्येक विभाजक धर्म ठीक तौर पर सुनिश्चित या निर्धार्य होना चाहिए। इसे सुनिश्चितता का सिद्धान्त कहते हैं।

जब तक कि विभाजक धर्म इस कसौटी पर खरा न सिद्ध हो उसको विभाजक धर्म के रूप में प्रयुक्त करना बहुत ही कठिन होगा। उदाहरणार्थ, 'मृत्युतिथि' एक धर्म है जिसे किसी समूह में व्यक्तियों के विभाजक धर्म के रूप में प्रयुक्त करना है, क्योंकि उन सभी व्यक्तियों के लिए ऐसी सम्भावना नहीं है कि वे सब एक ही तिथि को मर जायगे। इसलिए यह ठीक तौर से निर्धार्य धर्म नहीं है, अतः इसका 'विभाजक धर्म' के रूप में प्रयोग नहीं

किया जा सकता। परन्तु जब तक कि किसी 'धर्म' की सुनिश्चितता सिद्ध न हो जाय, उसे विभाजक धर्म के रूप में स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। पुस्तक वर्गीकरण के क्षेत्र में साहित्यिक पुस्तकों का वर्गीकरण करने के लिए दशमलव वर्गीकरण पद्धति में 'उच्चलेखक' तथा 'निम्नकोटि के लेखक' इन दो धर्मों को विभाजक धर्म के रूप में लिया गया है। लेकिन यह निर्णय एवं सुनिश्चित नहीं है।

इसके प्रतिकूल डा० रंगनाथन महोदय ने उक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए लेखक की 'जन्म तिथि' को विभाजक धर्म के रूप में लिया है। क्योंकि यह निर्णय एवं सुनिश्चित है। इसके परिणामस्वरूप पुस्तकों का वर्गीकरण दशमलव वर्गीकरण की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक हो गया है।

जैसे :—

दशमलव वर्गीकरण में	द्विबिन्दु वर्गीकरण में
ऑस्कर वाइल्ड के उपन्यासों की वर्ग संख्या ८२३·८	द १११ ३ ड ५६
यहाँ पर ८२३·८ का अर्थ है विक्टोरियाकालीन अंग्रेजी कथा साहित्य (उपन्यास)	यहाँ पर द १११ ३ ड ५६ का अर्थ है, आस्कर वाइल्ड का अंग्रेजी साहित्य का कथा साहित्य (उपन्यास)
८०० साहित्य ८२३ अंग्रेजी उपन्यास ·८ विक्टोरियाकालीन (१८३८ १९००) ई० तक	द १११=अंग्रेजी साहित्य ३=कथा साहित्य ड ५६=ऑस्कर वाइल्ड (जन्म तिथि के अनुसार)
इस प्रकार इसमें 'लेखक' का कोई निर्णय विभाजक धर्म नहीं है।	इस प्रकार (भाषा), (रूप) (लेखक) (काव्य) इनको निर्णय विभाजक धर्मों के रूपमें प्रयुक्त किया गया है।

(५) स्थायित्व का सिद्धान्त

प्रत्येक विभाजक धर्म पारिमाप्य होना चाहिए, और जब तक कि वर्गीकरण के उद्देश्य में कोई परिवर्तन न हो उस विभाजक धर्म को स्थायी (अपरिवर्तनीय) होना चाहिए। उसको बदलना नहीं चाहिए।

इसको स्थायित्व का सिद्धान्त कहते हैं।

यदि इस सिद्धान्त का पालन न किया जाय तो विभाजक धर्म में परिवर्तन कर देने से वर्गों में परिवर्तन हो जायगा। फलतः अव्यवस्था हो जायगा।

उदाहरण :—

(क) राजनीतिज्ञों का वर्गीकरण यदि उनके राजनीतिक दल के आधार पर किया जाय तो उसके परिणामस्वरूप उद्भूत वर्ग स्थायी न होंगे क्योंकि राजनीतिज्ञों की विचारधारा बदल सकती है। इस प्रकार वर्गों का स्थायित्व न रह सकेगा।

(ख) पुस्तकों के क्षेत्र में भी पत्रिकाओं का वर्गीकरण यदि 'विद्वत् परिषद्' के आधार पर किया जाय तो दो वर्ग होंगे—(१) विद्वत्परिषद् द्वारा प्रकाशित पत्रिकाएँ, (२) अन्य (जो विद्वत्परिषद् द्वारा प्रकाशित नहीं होतीं)। लेकिन वर्गीकरण का यह विभाजक धर्म स्थायी नहीं रह सकता क्योंकि पत्रिकाओं के प्रकाशन में परिवर्तन होने की सम्भावना रहती है। उदाहरणार्थ, 'इण्डियन जनल आफ बोटेनी' नामक अंग्रेजी भाषा की पत्रिका का प्रकाशन पहले एक स्वतन्त्र संस्था द्वारा १९१९ ई० में मद्रास से प्रारम्भ हुआ था किन्तु १९२० ई० में 'बाटेनिकल सोसाइटी' स्थापित होने पर उक्त पत्रिका का प्रकाशन तृतीय वर्ष के द्वितीय अंक से सोसाइटी द्वारा होने लगा जो कि एक विद्वत्-परिषद् है। जिन पुस्तकालयों ने 'विद्वत्परिषत् द्वारा प्रकाशित पत्रिकाएँ' तथा 'अन्य'—इस आधार पर इस पत्रिका का वर्गीकरण किया था, उनके यहाँ एक अव्यवस्था पैदा हो गई क्योंकि विभाजक धर्म में स्थायित्व नहीं रह गया। इससे द्विबिन्दु-वर्गीकरण पद्धति में पत्रिकाओं के वर्गीकरण के लिए ऐसे विभाजक धर्म को स्वीकार न करके एक ही वर्ग में रखने का निर्देश किया गया है जिससे स्थायित्व कायम रह सके।

६ सम्बद्ध अनुक्रम का सिद्धान्त

वर्गीकरण पद्धति में प्रयुक्त होने वाले अनेक विभाजक धर्मों का अनुक्रम भी वर्गीकरण के उद्देश्य से सम्बद्ध एवं अनुकूल होने चाहिए।

इसको सम्बद्ध अनुक्रम का सिद्धान्त कहते हैं।

उदाहरण —

पुस्तकों के वर्गीकरण में जीवशास्त्र और चिकित्साशास्त्र इन दोनों विषयों में 'अंग' और 'समस्या' इन दोनों विभाजक धर्मों के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है किन्तु दोनों विभाजक धर्मों का अनुक्रम निर्धारित है। जीवशास्त्र में पहले 'समस्या' फिर 'अंग' तथा चिकित्साशास्त्र में पहले

'अंग' फिर 'समस्या'। इन क्रमों म जो भेद है वह दोनों वर्गों के वर्गीकरण के उद्देश्य क अनुकूल है।

साहित्य वग के वर्गीकरण में 'भाषा, रूप, लेखक और ग्रन्थ' यह अनुक्रम द्विबिन्दु वर्गीकरण में निर्धारित किया गया है। दशमलव वर्गीकरण में साहित्य के वर्गीकरण के लिए 'भाषा रूप, काल और लेखक' यह अनुक्रम रखा गया है। अपने अपने दृष्टिकोण से दोनों में अनुरूपता है।

(७) अविरोध का सिद्धान्त

पद्धति के विभाजक धम और जिसमें कि उनका प्रयाग होगा, ये दोनों स्थिर हाने चाहिये और अविरोध रूप में दृढ़तापूवक उनका आद्योपान्त पालन किया जाना चाहिए।

इसको अविरोध का सिद्धान्त कहते हैं

उदाहरण —

(क) दशमलव वर्गीकरण पद्धति में इतिहास के वर्गीकरण में भौगोलिक और कालक्रम को आवश्यक विभाजक धम के रूप में चुना गया है। ये दोनों क्रम स्थिर (निर्दिष्ट) हैं और इनका उसी क्रम से आद्योपान्त दृढ़ता पूवक पालन किया गया है।

(ख) द्विबिन्दु वर्गीकरण-पद्धति में इतिहास वग के वर्गीकरण में 'भौगोलिक दृष्टिकोण एवं कालक्रम' इन तीन विभाजक धर्मों का अनुक्रम निर्दिष्ट है और उनका पालन किया गया है।

किसी भी पद्धति के निर्दिष्ट अनुक्रम को बदलना उचित नहीं है नहीं तो एकरूपता नष्ट हो जायगी।

(ख) अनुविन्यास सबधी सिद्धांत

वर्गों के अनुविन्यास सम्बन्धी निम्नलिखित चार सिद्धान्त हैं —

१ निःशेषता का सिद्धान्त
२ ऐकान्तिकता का सिद्धान्त
३ अनुकूल क्रम का सिद्धान्त
४ अविरुद्ध क्रम का सिद्धान्त।

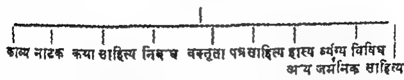
१ निःशेषता का सिद्धांत

वर्गों के प्रत्येक अनुविन्यास में विभाज्य वग अपने सामान्य अव्यवहित क्षेत्रों में पूर्ण रूप से निःशेष हो जाना चाहिये।

इसको निःशेषता का सिद्धान्त कहते हैं :—

तात्पर्य यह है विभाज्य के अनुविन्यास इस प्रकार होने चाहिए कि उनमें विभाज्य क्षेत्र के सभी तत्त्व समा सकें, कुछ शेष न रह जाय।

उदाहरण —



ऊपर के जर्मन साहित्य के वर्गों के अनुविन्यासों से स्पष्ट है कि विभाज्य क्षेत्र अपने सामान्य अव्यवहित क्षेत्रों में पूर्णरूप से निःशेष हो जाता है। अनुविन्यास के अन्त में 'अन्य' नामक वर्ग बना कर ऐसी गुंजाइश रख ली गई है कि जिससे कि निःशेषता हो सके और कोई भी अंश अवर्गीकृत न रह जाय। दशमलव वर्गीकरण पद्धति में इसी प्रकार अनेक वर्गों और विभागों, एवं उपविभागों में अवशिष्ट तत्त्वों के लिए 'अन्य' वर्ग बना कर 'निःशेषता' की व्यवस्था की गई है।

जैसे —

वर्गों में	उपवर्गों में
२६० गैर ईसाई धर्म	१९६ अन्य दार्शनिक
४६० अन्य भाषाएँ	२६६ अन्य गैर ईसाई धर्म
८९० अन्य भाषाओं का साहित्य	३६६ अन्य संगठन तथा संस्थाएं

द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में प्रायः सभी अनुविन्यास आवृत्तक विधि, विषय प्रक्रिया, आनुविधि प्रक्रिया, भौगोलिक प्रक्रिया तथा वर्णानुक्रम प्रक्रिया द्वारा इतने खुले बनाए गये हैं कि उनसे बच कर अवर्गीकृत दशा में रह जाना किसी तत्त्व के लिए सम्भव नहीं है।

(३) ऐकान्तिकता का सिद्धांत

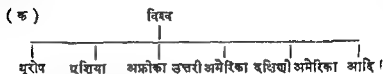
वर्गों के अनुविन्यास में सभी वर्ग आपस में एक-दूसरे के निषेधक होने चाहिए।

इसको ऐकान्तिकता का सिद्धान्त कहते हैं।

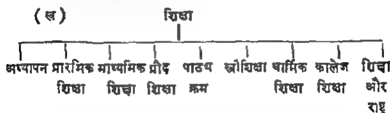
वर्गों के अनुविन्यास में प्रत्येक वर्ग ऐसा होना चाहिए कि एक वर्ग की सामग्री दूसरे वर्ग में न जा सके। इसका अर्थ यह है कि अनुविन्यास के वर्गों

में पुनरुक्ति (Overlaping) न होनी चाहिए या वर्ग समान तत्त्व वाले न होने चाहिए। ऐसा तभी सम्भव हो सकता है जब कि एक बार एक ही विभाजक धर्म के आधार पर वर्गों के अनुविन्यास बनाए जायें।

जैसे —



यहाँ पर भौगोलिक आधार पर वर्गों के अनुविन्यास किए गए हैं। ये सभी आपस में एक दूसरे के निषेधक हैं।



इस विभाजन में 'अवस्था' और 'समस्या' दो विभाजक धर्मों का एक साथ प्रयोग किया गया है। फलतः 'पाठ्यक्रम' वर्ग पुनरुक्ति दोष से ग्रस्त हो गया है क्योंकि माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम की पुस्तक (प्रोस्पेक्टस आफ सेकेण्डरी एजुकेशन) का वर्गीकरण करने में 'माध्यमिक शिक्षा' और 'पाठ्य क्रम' इन दो वर्गों में से किस वर्ग में रखी जाय, वर्गकार को यह भ्रम हो सकता है।

(४) अनुकूल क्रम का सिद्धांत

किसी भी अनुविन्यास में वर्गों का क्रम तब तक किसी अनुकूल सिद्धान्त के अनुसार ही होना चाहिए न कि मनगढ़न्त, जब तक कि उस सिद्धान्त के अनुसरण करने से अपेक्षाकृत अधिक मुख्य सिद्धान्तों का बाध न होता हो।

इसको अनुकूल क्रम का सिद्धान्त कहते हैं।

अनुकूल क्रम निम्नलिखित ६ विधियों से रखा जा सकता है —

(अ) वितति अवरोह क्रम (Decreasing extention)

(आ) मूर्तवृद्धि क्रम (Increasing Concreteness)

(इ) उद्विकासी क्रम (Evolutionary Order)

(इ) आनुतिथि क्रम (Chronological Order)
(उ) भौगोलिक क्रम (Geographical Order)
(ऊ) इयत्तात्मक क्रम (Quantitative Order)
(ए) सापेक्षिक क्रम (Relative Order)
(ऐ) आप्त क्रम (Canonical Order)
(ओ) जटिलता वृद्धि का क्रम (Increasing Complexity)

(अ) वितति अवरोह क्रम

विभाजन सामान्य से विशेष की ओर होना चाहिए क्योंकि सामान्य में विशेष अन्तर्भूत रहता है। सामान्य को वितति अधिक रहती है और विशेष की कम। इसे वितति अवरोह का क्रम कहते हैं।

जैसे :—

विज्ञान
 गणित
  अंकगणित
   अंकसिद्धान्त

यहाँ पर विज्ञान सामान्य है। उसका विभाजन क्रमशः विशेष की ओर होता गया है।

(आ) मूर्त्त वृद्धि क्रम

जब दो वर्गों में एक वर्ग कम मूर्त्त हो और दूसरा अधिक मूर्त्त हो तो कम मूर्त्त वाले वर्ग को पहले स्थान देना चाहिए और अधिक मूर्त्त वर्ग को बाद में। इसे मूर्त्त वृद्धि क्रम कहते हैं।

जैसे :—

उद्भिज शास्त्र
 उद्भिज शारीर
  पुष्पीपादप शारीर
   पुष्पी पादप

यहाँ उद्भिज शास्त्र के अन्तर्गत 'उद्भिज शारीर' कम मूर्त्त है और 'पुष्पी पादप शारीर' उसकी अपेक्षा अधिक मूर्त्त है। इसलिए 'उद्भिज शारीर' को पहले रखा गया है और 'पुष्पीपादप शारीर' को उसके बाद तथा पुष्पी पादप को उसके भी बाद। ऐसा क्रम 'वितति अवरोह क्रम' के अनुसार सम्भव नहीं है।

(६) उद्विकासी क्रम

यदि दो वर्ग विकास क्रम की दो अलग-अलग अवस्थाओं से सम्बन्ध रखते हों तो प्राथमिक अवस्था से सम्बन्ध रखने वाले वर्ग को पहले रखना चाहिए और द्वितीय अवस्था से सम्बन्ध रखनेवाले वर्ग को उसके बाद। इस क्रम को उद्विकासी क्रम कहते हैं।

जैसे :—

(क) शिक्षा

प्राथमिक शिक्षा

माध्यमिक शिक्षा

यहाँ पर प्राथमिक और माध्यमिक दोनों शिक्षा की दो अलग अलग अवस्थाएं हैं जिनमें प्राथमिक अवस्था को पहले और माध्यमिक अवस्था को बाद में रखा गया है।

प्राणिशास्त्र में जीव विकास क्रम की अवस्थाओं के अनुसार इस प्रकार उद्विकासी क्रम का पालन किया जाता है :—

५६०	प्राणिशास्त्र*
५६१	सामान्य प्राणिशास्त्र
५६२	अपृष्ठवंशिन
५६३ १	प्रजीवाः
५६३ २	मध्यजीवाः
५६३ ४	छिद्रियाः
५६३ ५	दंशाङ्गिन
५६३ ८	कंकतिवर्ग
५६३ ६	शल्यवमा
५६४	चूर्ण आवारा
५६५ १	कृमि
५६५ ३	कठिजिनः
५६५ ४	मत्स्यपाद्या

*दशमलव-वर्गीकरण पद्धति के प्राणिशास्त्र विभाग के पदों का हिन्दी रूपान्तर डा० रघुवीर के कोश के आधार पर।

५९५ ४ नखरिण
५९५ ६ अयुतपादा
५९५ ७ कीट
५९६ रज्जुमान
५९७ मत्स्यजातीय
५९७ ६ समयरेखि प्रजाति
५९८ १ रेंगने वाले प्राणी
५९८ २ चींटी
५९९ स्तनपायी

(ई) आनुतिथि क्रम

यदि दो वर्ग आपस में काल की दृष्टि से आगे-पीछे हों तो पूर्वकाल से सम्बंधित वर्ग को पहले रखना चाहिए। उसके बाद क्रमश अन्यकाल के वर्गों को स्थान देना चाहिए। इस क्रम को आनुतिथि या कालक्रम कहते हैं।

हिन्दी साहित्य
वीरगाथा काल
भक्तिकाल
रीति काल
आधुनिक काल

(उ) भौगोलिक क्रम

भौगोलिक दृष्टि से जब विभाजन किया जाय तो पारस्परिक समीपता के आधार पर वर्गों को रखना चाहिए। इसे भौगोलिक क्रम कहते हैं।

जैसे —

विश्व
एशिया
भारत
उत्तर प्रदेश
इलाहाबाद

(ऊ) इयत्तात्मक क्रम

जो वर्ग समस्त योगक्रम से सम्बन्धित हों उनकी व्यवस्था योगक्रम के विकासोन्मुख आधार पर करनी चाहिए। इसे इयत्तात्मक क्रम कहते हैं।

जैसे —

रेखागणित
 दल
  त्रिविमा
   चतुर्विमा
    पञ्चविमा

यहाँ पर वर्गों का क्रम योगक्रम के विकास-क्रम से रखा गया है।

(ए) सापेक्षिक क्रम

यदि वर्ग ऐसा हो जिसमें अन्तर्भूत वस्तुओं या क्रियाओं में कोई वरिम क्रम या नैसर्गिक क्रम हो और वे परस्पर सापेक्ष हों तो उन्हें वरिम क्रम एवं कालक्रम से रखना चाहिए। इसे सापेक्षिक क्रम कहते हैं।

जैसे —

धोबी कपड़े धोने में निम्नलिखित क्रम से गुजरता है —

चिह्न लगाना
 धोना
  माँड़ी देना
   नील देना
    सुखाना
     लोहा करना

भाषाविज्ञान में वाक्य-रचना का वर्गीकरण होगा:—

वाक्य रचना
 विश्लेषण
  कर्त्ता
   कर्त्ता का विस्तार
    इत्यादि

इनमें क्रमशः नैसर्गिक क्रम एवं वरिम क्रम दिखाया गया है।

(ऐ) आप्त क्रम

यदि किसी वर्ग में अनुकूल क्रम बनाने में कोई मापदण्ड न हो तो वहाँ पर विद्वानों द्वारा मान्य परम्परा के अनुसार व्यवस्था करने को आप्तक्रम कहते हैं।

जैसे —

दर्शनशास्त्र के वर्गीकरण के लिए द्विबिन्दु पद्धति में आप्तक्रम को अपनाया गया है—

दर्शन शास्त्र
तर्क शास्त्र
ज्ञान शास्त्र
आत्म विद्या

(ओ) यदि दो परस्पर सम्बन्धित वर्गों में से एक कम जटिल और दूसरा अधिक जटिल हो तो कम जटिल वर्ग को पहले रखना चाहिए और विशेष जटिल वर्ग को उसके बाद में।

जैसे :—

रेखागणित में द्वितीय घात के चार कम जटिल होते हैं और उनकी अपेक्षा घन (तृतीय घात) के चार अधिक जटिल होते हैं। अत वर्गीकरण की सारणी में 'द्वितीय घात' पहले आना चाहिए और 'घन' उसके बाद।

४ संगत क्रम का सिद्धान्त

जब कि विभिन्न अनुविन्यासों में वही या उसके समान वर्ग उद्धृत हों तो उनका क्रम इस प्रकार के सब अनुविन्यासों में वैसा ही या उसी भाँति होना चाहिए, जहाँ तक इस प्रकार की समानता के अनुसरण करने से अन्य किन्हीं अधिक मुख्य सिद्धान्तों का बाध न होता हो। इसको संगत क्रम का सिद्धान्त कहते हैं।

दशमलव वर्गीकरण पद्धति में भौगोलिक वर्गों एवं सामान्य विभाजन वर्गों का क्रम आद्योपान्त वैसा ही रखा गया है जहाँ कि वैसा आवश्यक समझा गया है।

जैसे —

३७६ • *अन्य देशों में स्त्री शिक्षा*

"९४०–९९९ की भाँति विभाजित कीजिए।"

जर्मनी में स्त्री शिक्षा ३७६ ९४३
इंगलैण्ड में स्त्री शिक्षा ३७६ ९४२
फ्रांस में स्त्री शिक्षा ३७६ ९४४ आदि

(ग) शृंखला सम्बन्धी सिद्धान्त

शृंखला सम्बन्धी निम्नलिखित दो सिद्धान्त होते हैं —
(१) सामान्याभिधान का सिद्धान्त
(२) समावेशकता का सिद्धान्त

(१) सामान्याभिधान का सिद्धान्त

शृंखला में प्रथम कड़ी से अंतिम कड़ी की ओर जाने में वर्गों की वितति (इक्सटेंशन) बढ़नी चाहिए और सामान्याभिधान (इन्टेंशन) घटना चाहिए।

इसको सामान्याभिधान का सिद्धांत कहते हैं।

उदाहरण :—

विश्व
एशिया
भारत
उत्तर प्रदेश

यहाँ पर 'विश्व' वर्ग से 'उत्तर प्रदेश' की ओर बढ़ने में वर्गों की वितति बढ़ती गई है और उनका सामान्याभिधान घटता गया है।

वितति गुणात्मक माप है, जिसे पद का क्षेत्र भी कहते हैं और सामान्याभिधान परिमाणात्मक माप है जिसे पद का विस्तार भी कहते हैं। अनुकूल क्रम का 'वितति अवरोध क्रम' और यह सिद्धान्त एक ही हैं।

इस सिद्धान्त का पालन केवल अधीनस्थ एवं तात्विक सम्बन्ध वाले वर्गों में ही होता है, स्वतन्त्र वर्गों में नहीं।

जैसे —

पशु
पक्षी
रेंगने वाले जीव

(२) समावेशकता का सिद्धान्त

वर्गों की शृंखला में प्रत्येक क्रम के किसी न किसी एक वर्ग को अवश्य आ जाना चाहिए, जो क्रम शृंखला की पहली कड़ी और अंतिम कड़ी के बीच पड़ते हों।

इसे समावेशकता का सिद्धान्त कहते हैं।

ऊपर वामा पामिधान के सिद्धान्त वाले उदाहरण में 'विश्व' पहली कड़ी है और 'उत्तर प्रदेश' अंतिम कड़ी। इसमें वर्गों की शृंखला में प्रत्येक क्रम का वर्ग आ गया है। 'एशिया' प्रथम क्रम, 'भारत' द्वितीय क्रम और उत्तर प्रदेश तृतीय क्रम का वर्ग है। यदि इस क्रम को उलट दिया जाय या कोई वर्ग बीच से छोड़ दिया जाय तो शृंखला में इस सिद्धान्त का पालन न होगा।

जैसे —

विश्व उत्तरप्रदेश भारत	अथवा	विश्व भारत

(घ) पारिभाषिक पदावली-सम्बन्धी सिद्धान्त

वर्गीकरण पद्धति में वर्गों को प्रकट करने के लिए जो पद प्रयुक्त किए जाते हैं उनके समूह को 'पारिभाषिक पदावली' कहते हैं। इन पदों का उपयोग वर्गाकार अपनी पद्धति में करता है और वर्गकार एवं उपयोगकर्ता उसको व्यवहार में लाते हैं। पारिभाषिक पदों के सम्बन्ध में निम्नलिखित चार सिद्धान्त होते हैं :—

(१) प्रचलन का सिद्धान्त
(२) परिगणन का सिद्धान्त
(३) प्रसंग का सिद्धान्त
(४) नम्रता का सिद्धान्त।

(१) प्रचलन का सिद्धान्त

वर्गीकरण पद्धति में वर्गों को प्रकट करने वाला प्रत्येक पद जिस क्षेत्र का हो उस क्षेत्र के विशेषज्ञों द्वारा मान्य और प्रचलित होना चाहिए।

इसे प्रचलन का सिद्धान्त कहते हैं।

जिस समय वर्गाचार्य वर्गीकरण पद्धति का निर्माण करता है उस समय वर्गों की संज्ञा के लिए जिन पदों को चुनता है, उस समय अभीष्ट अर्थ में प्रचलित और मान्य होने चाहिए। फिर भी यह कहना कठिन है कि वे सदा उसी रूप में मान्य एवं प्रचलित रहेंगे। अतः ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि जब प्रचलन के अनुसार जिन पदों का रूप बदल जाय, तदनुसार वर्गीकरण पद्धति में भी संशोधन हो जाना चाहिए। उदाहरणार्थ, दशमलव-वर्गीकरण पद्धति में ड्यूई महोदय के काल में 'गतिशील विद्युत्' पद का प्रयोग प्रचलित और मान्य था किन्तु कालान्तर में उसका प्रचलन समाप्त हो गया और उसके स्थान पर 'धाराविद्युत्' पद का प्रयोग किया जाने लगा। ड्यूई महोदय द्वारा 'गतिशील विद्युत्' पद ग्रहण करना प्रचलन की दृष्टि से उचित था और अब वर्तमान प्रचलन के दृष्टिकोण से उस पद को बदल कर 'धारा विद्युत्' कर देना उचित है। तात्पर्य यह है कि इस सिद्धान्त के पूर्णत पालन के लिए वर्गाचार्य को ऐसी व्यवस्था भी करनी चाहिए जिससे प्रचलन के दृष्टिकोण से पदों में संशोधन होता रहे और वर्गीकरण पद्धति आधुनिकतम रूप में प्रस्तुत रहे।

पुस्तक-वर्गीकरण पद्धति की कांग्रेस, द्विबिन्दु एवं दशमलव प्रणालियों को इस सिद्धान्त की दृष्टि से पुष्ट बनाए रखने की व्यवस्था की गई है।

(२) परिगणन का सिद्धान्त

वर्गीकरण की पद्धति में प्रत्येक पद का अर्थ (व्याख्या) वर्गों के परिगणन के द्वारा शृंखलाओं में निश्चित होना चाहिए जो कि वर्ग के द्वारा शृंखलाओं की प्रथम सामान्य शृंखला के रूप में प्रकट किया गया हो।

इस सिद्धान्त को परिगणन का सिद्धान्त कहते हैं।

सभी वर्गाचार्य अपनी अपनी वर्गीकरण-पद्धति में एक 'पारिभाषिक पद' का एक-सा ही अर्थ नहीं ग्रहण करते। जैसे श्री ड्यूई महोदय ने 'दर्शन' पद का एक परिगणन करके उसके अन्तर्गत 'मनोविज्ञान' को भी ले लिया है, किन्तु डा० रंगनाथन जी ने 'मनोविज्ञान' और 'दर्शन' के अलग अलग वर्ग बनाए हैं। इसी प्रकार लाइब्रेरी आफ कांग्रेस की वर्गीकरण पद्धति में तथा दशमलव वर्गीकरण पद्धति में 'अंकगणित' पद का परिगणन करके उसे लोअर गणित तक ही सीमित रखा है जब कि डा० रंगनाथन जी ने द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में उच्च अंकगणित या अंक सिद्धान्त को भी ले लिया है।

स्पष्ट है कि यदि निर्देशन द्वारा वर्गाचार्य यह परिगणन न कर दे कि अमुक 'पद' का क्षेत्र कितना है तो वर्गीकरण में अव्यवस्था उत्पन्न हो जायगी।

(३) प्रसङ्ग का सिद्धान्त

वर्गीकरण की पद्धति में प्रत्येक 'पद' का अर्थ (Denotation) उसी प्रारंभिक कड़ी से सम्बन्धित निम्नतर क्रम के विभिन्न वर्गों के प्रकाश में निर्धारित होना चाहिए जैसा कि वर्ग में 'पद' के द्वारा प्रकट किया गया हो। इसे प्रसङ्ग का सिद्धान्त कहते हैं।

प्राय: देखने में आता है कि कुछ ऐसे पद' होते हैं जिनका अर्थ अनेक स्थानों पर अनेक वर्गों में भिन्न अर्थों में लिया जाता है या एक ही 'पद' विभिन्न वर्गों से सम्बन्धित रहता है। जैसे, 'दुघटना' एक 'पद' है। इसका सम्बन्ध खनिज शिल्प, बीमा और श्रम वर्गों में आता है। इसी प्रकार 'पत्थर' एक पद है, जिसका प्रयोग भूशास्त्र में, एवं पथरी रोग में भी आता है। इसी प्रकार 'आधार' पद गणित के विश्लेषण में तथा इमारत के सम्बन्ध में भी आता है। ऐसे 'पदों' का वर्ग के अनुसार प्रसग बतलाना आवश्यक होता है। तात्पर्य यह है कि ऐसे पारिभाषिक पदों का प्रयोग वर्गीकरण की प्रत्येक पद्धति में प्रसग सहित किया जाना चाहिए। ऐसा प्रसग निर्देश होने से 'पद' यदि अपूर्ण हो या अनेकार्थी हो, तो उसका ठीक और स्पष्ट अर्थ उसी शृखला के पूर्व वर्ग को देख कर समझने में सुविधा होती है।

पुस्तकों के वर्गीकरण में तो यह और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यदि दुर्घटना, आधार, पत्थर, आदि ऐसे शब्द पुस्तक के शीर्षक में आ जायँ तो यह निर्णय करना आवश्यक है कि यह किस वर्ग से सम्बन्धित है। उस दशा में प्रसंग के बिना सही निर्णय नहीं हो सकता। प्रसङ्ग को बताने के लिए सज्ञा के साथ यदि विशेषण पद भी जोड़ कर रखे जायँ तो पारिभाषिक पद बहुत अंश तक प्रसग को बता देता है किन्तु व्यावहारिक रूप में विशेषण सहित सज्ञा पदों का पूरी सारणी में प्रयोग करने से उसका आकार बहुत बढ़ जाता है। अतः प्रसङ्ग निर्देश के योग्य पारिभाषिक पदों का निर्देशन करना आवश्यक है।

(४) संयतता का सिद्धान्त

वर्गीकरण पद्धति में वर्गों को प्रकट करनेवाले 'पारिभाषिक पद' आलोचनात्मक न होने चाहिए अर्थात् पारिभाषिक पद संयत होने चाहिए।

इसे संयतता का सिद्धान्त कहते हैं।

पारिभाषिक पद केवल वर्णनात्मक हों जिनसे वर्गीकरण का कार्य सम्पादित हो सके। आलोचनात्मक पद का एक उदाहरण दशमलव वर्गीकरण पद्धति से लिया जा सकता है। साहित्य के वर्गीकरण में ड्यूई महोदय ने इस पद्धति में दो पदों का प्रयोग अनेक स्थलों पर किया है, 'उच्चकोटि के लेखक', 'निम्नकोटि के लेखक'। किसी वर्गाचार्य का यह कार्य नहीं है कि वह ऐसे पदों का प्रयोग वर्गीकरण करने के लिए करे। किसी कवि, नाटककार, उपन्यासकार या निबंधकार को उच्चकोटि या निम्नकोटि का बता कर उसका वर्ग निर्धारित करने से वर्गाचार्य आलोचना का पात्र बन जाता है क्योंकि उसके द्वारा चुने हुए 'पद' संयत नहीं रहे।

(द) प्रतीक सम्बन्धी सिद्धान्त

प्रतीक के सम्बन्ध में केवल एक सिद्धान्त होता है, सापेक्षता का सिद्धान्त।

वर्गीकरण की पद्धति में वर्ग संख्या की लम्बाई वर्ग के क्रम के सामान्याभिधान (Intension) के अनुपात से होनी चाहिए।

इसको सापेक्षता का सिद्धान्त कहते हैं।

प्रतीक के सम्बन्ध में इस पुस्तक के द्वितीय अध्याय में लिखा गया है। वहाँ इस बात को बताया गया है कि प्रतीक में सरलता, संक्षिप्तता, स्मरणशीलता एवं लचीलापन इन चार गुणों का होना आवश्यक है।

प्रतीक सम्बन्धी इस सिद्धान्त का तात्पर्य है कि वर्ग के सामान्याभिधान के विवरण के अनुपात से उसकी प्रतीक संख्या भी बढ़ना चाहिए।

जैसे —

	दशमलव वर्गीकरण में	द्विबिन्दु वर्गीकरण में
भूगोल	५५१	U
प्राकृतिक भूगोल	५५१·४	U २
समुद्रीय विज्ञान	५५१·४६	U २५
धाराएँ	५५१·४७	U २५६२
अटलांटिक की धाराएँ	५५१·४७१	U २५६२ ९८
भूमध्यसागरीय धाराएं	५५१·४७२	U २५६२ ६५१

उपर्युक्त उदाहरण से प्रकट है कि भूगोल वर्ग के ज्ञान न्यासिधान के विकास के अनुपात से उसकी प्रतीक संख्याओं में भी वृद्धि होता गई है।

(II) ज्ञान-वर्गीकरण के विशेष सिद्धान्त

किसी भी क्षेत्र का वर्गीकरण करने में उपर्युक्त अठारह सिद्धान्तों का पालन होना आवश्यक है। ज्ञान भी एक क्षेत्र है। अतः इसका वर्गीकरण यदि उक्त अठारह सिद्धान्तों के अनुसार कर भी लिया जाय तो भी वह पूर्ण नहीं हो सकता यदि उसके वर्गों के अनुविन्यासों और शृंखलाओं में ग्राह्यता शक्ति न हो। ज्ञान क्षेत्र अनन्त है। काल क्रम के साथ साथ ज्ञान का सीमायें बदलती रहती हैं। इस प्रकार भविष्य में किसी भी समय ज्ञान की कोई भी नवीन शाखा, प्रशाखा प्रकाश में आ सकती है। अतः वर्गीकरण के दृष्टि कोण से 'ज्ञान क्षेत्र' के अन्तर्गत भूत, वर्तमान और भविष्य का समस्त ज्ञान लिया जाता है चाहे वह ज्ञात हो या अज्ञात। इससे यह प्रकट होता है कि ज्ञान-क्षेत्र के अनेक तत्त्व जो प्रकाश में नहीं आये हैं, उनका भी समावेश उनके प्रकाश में आने पर हो सके, यह गुंजाइश ज्ञान वर्गीकरण में होनी चाहिए। ज्ञान की शृंखला में अन्तिम कड़ी कौन सी होगी, उसका अन्त कहाँ होगा, यह कहना बहुत कठिन है। खोज और परीक्षण के द्वारा ज्ञान क्षेत्र के अज्ञात अंशों का प्रकाश उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। इसलिए ज्ञान के वर्गों और शृंखलाओं में किसी भी नई कड़ी को जोड़ने की गुंजाइश रखना आवश्यक है।

अतः डा० रंगनाथन महोदय ने ज्ञान-वर्गीकरण से सम्बन्धित निम्नलिखित तीन विशिष्ट सिद्धान्त स्थिर किए हैं :—

(१) अनुविन्यास में ग्राह्यता
(२) शृंखला में ग्राह्यता
(३) स्मरणशीलता

(१) अनुविन्यास में ग्राह्यता

अनुविन्यास के वर्गाङ्कों का निर्माण इस विधि से होना चाहिए कि किसी भी अनुविन्यास में नए वर्गाङ्क का कोई अङ्क वर्तमान वर्गाङ्कों को किसी प्रकार की कोई बाधा पहुँचाए बिना जोड़ा जा सके।

इसे अनुविन्यास में ग्राह्यता का सिद्धान्त कहते हैं।

यह निश्चित है कि यदि ज्ञान का वर्गीकरण करते समय वर्गों के अनुविन्यासों में ग्राह्यता न रखी गई तो ज्ञान का वह वर्गीकरण अपूर्ण सिद्ध

होगा। कुछ वर्गाचार्य अनुविन्यासों एवं शृंखलाओं में ग्राह्यता कायम रखने के लिए 'अन्य' नामक एक वर्ग बनाते हैं जिसके अन्तर्गत अवर्गीकृत नवीन ग्रन्थों को रखा जा सके। दशमलव वर्गीकरण-पद्धति में अनेक स्थलों पर ऐसे वर्ग बनाए गए हैं।

जैसे —

प्रथम क्रम {
२९० अन्य धर्म
४९० अन्य भाषाएँ
८९० अन्य भाषाओं का साहित्य

द्वितीय क्रम {
१४९ अन्य दार्शनिक सम्प्रदाय
१७९ अन्य नैतिक विषय
१९९ अन्य आधुनिक दार्शनिक
२८९ अन्य ईसाई सम्प्रदाय
३६९ अन्य संस्थाएँ

इत्यादि

द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में अनुविन्यासों में ग्राह्यता लाने के लिए निम्नलिखित पाँच विधियों का प्रयोग किया गया है :—

(१) अष्टक प्रतीक
(२) विषय विधि
(३) आनुतिथि विधि
(४) भौगोलिक विधि
(५) अकरादि क्रम विधि

इनके उदाहरण द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति के परिचय के सिलसिले में अगले अध्याय में दिये जायगे।

(२) शृंखला में ग्राह्यता

शृंखला के वर्गाङ्क इस प्रकार से निर्मित होने चाहिए कि जिससे नए वर्गाङ्कों का कोई भी अंक उस शृंखला के अन्त में वर्तमान वर्गाङ्कों को किसी रूप में बाधा पहुँचाए बिना जोड़ा जा सके, जिससे कि नए अधीनस्थ वर्गों का समावेश हो सके जो कि एक या एकाधिक विभाजक धर्मों के आधार पर बने हुए हों।

इसको शृंखला में ग्राह्यता का सिद्धान्त कहते हैं।

जैसे —

विषय	दशमलव-वर्गीकरण में	द्विबिंदु वर्गीकरण में
समाज विज्ञान	३००	Y
अर्थशास्त्र	३३०	X
श्रम	३३१	X 9
घंटे	३३१.८१	X 951
अतिरिक्त घंटों में कार्य	३३१.८१४	X 9511
कृषि औद्योगिकशाला में काम के घंटे	३३१.८१८३	X 9J : 951
भारत में काम के घंटे	३३१.८१९५४	X 951 44

(३) स्मरणशीलता का सिद्धान्त

किसी वर्ग के विशिष्ट तत्त्व का प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रयुक्त वर्ग संख्याएँ—जहाँ भी उस विशिष्ट तत्त्व का उसी अर्थ में फिर प्रयोग किया जाय—वही और वैसी ही पूर्ववत् प्रयुक्त की जानी चाहिए। जहाँ पर इस प्रकार का अविरुद्धक्रम दूसरे अपेक्षाकृत अधिक मुख्य सिद्धान्तों का बाधक न करता हो।

इसको स्मरणशीलता का सिद्धान्त कहते हैं।

वर्गीकरण पद्धति में स्मरणशीलता का सिद्धान्त बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। इससे शीघ्रगति से सरलतापूर्वक सही वर्गीकरण किया जा सकता है। इसलिए पुस्तकों के वर्गीकरण के लिए वर्गाचार्यों ने अपनी पद्धतियों में स्मरणशील विधियों को अपनाया है।

स्मरणशीलता धारणीयता की विधि से भली भाँति कायम की जा सकता है।

उदाहरणार्थ, दशमलव-वर्गीकरण पद्धति में, सामान्य विभाजन रूप में, भाषाओं के विभाग का तथा भौगोलिक विभाग आदि की सारणियाँ ऐसी हैं जिनमें भरपूर स्मरणशीलता पाई जाती है।

(१) उदाहरणार्थ —

राजनीतिक दल ३२९। इसके नीचे निर्देश किया गया है कि '९४०–९९९ की भाँति विभाजित कीजिये'।

यह ९४० से ९९९ तक जो भौगोलिक सारणी है, तदनुसार जिस देश

का प्रतीक अङ्क नियमानुसार ३२९.९ के साथ जोड़ दिया जायगा यह अङ्क उसी देश के राजनीतिक दल का प्रतीक बन जायगा। जैसे, फ्रांस में राजनीतिक दल=३२९.९४४।

(३) भाषा और साहित्य इन दोनों विषयों का क्रम एक समान रख कर स्मरणशीलता स्थापित की गई है।

४०० भाषा	८०० साहित्य
४१० अमेरिकन भाषा	८१ अमेरिकन साहित्य
४२० अंग्रेजी भाषा	८२ अंग्रेजी साहित्य
४३० जर्मन तथा जर्मनिक भाषा इत्यादि।	८३० जर्मन तथा जर्मनिक साहित्य इत्यादि।

द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में भी भौगोलिक सारणी, भाषा, सामान्य उपभेद आदि के माध्यम से स्मरणशीलता के सिद्धान्त का पूर्णत पालन किया गया है।

(III) पुस्तक-वर्गीकरण के विशिष्ट सिद्धान्त

विविध प्रकार की अध्ययन-सामग्री को सुचारु रूप से व्यवस्थित करने के लिए निम्नलिखित सात सिद्धान्तों का पालन किया जाना आवश्यक है:—

(१) आंशिक समवबोध का सिद्धान्त
(२) स्थानीय भेद का सिद्धान्त
(३) दृष्टिकोण का सिद्धान्त
(४) श्रेण्य ग्रंथ-व्यवस्था का सिद्धान्त
(५) सामान्य उपभेद का सिद्धान्त
(६) व्यवच्छेदकता का सिद्धान्त
(७) स्पष्टीकरण का सिद्धान्त

(१) आंशिक समवबोध का सिद्धान्त

पुस्तक-वर्गीकरण पद्धति में वर्गों के प्रत्येक अनुविन्यास के साथ सम्बद्ध रूप में वैसे ही क्रम के वर्गों का सेट (जैसा कि उनके निकटस्थ क्षेत्र का है) होना चाहिए, जो मध्य क्षेत्र के साथ सवर्गीय रूप में रखे गये हों, पर उससे इस बात में पृथक् हों कि वर्गों का यह सेट अनुविन्यास के वर्गों को आंशिक रूप में अन्तर्भूत करे जब कि मध्य क्षेत्र उनको समग्ररूप में अन्तर्भूत करता हो।

इसको *आंशिक समवबोध का सिद्धान्त* कहते हैं।

उदाहरण —

गणित

अंकगणित

बीजगणित

विश्लेषण

त्रिकोणमिति

ज्यामिति

यदि उपर्युक्त क्रम के अनुसार वर्ग बने हों तो इनमें केवल ऐसी ही पुस्तकों को रखा जा सकता है जो कि इन विषयों को स्वतन्त्र रूप से प्रतिपादित करती हों किन्तु जिन पुस्तकों में उक्त विषयों में से दो या दो से अधिक विषयों का प्रतिपादन हुआ हो उनको किसी एक में रखने से उसमें प्रतिपादित शेष विषय की उपेक्षा हो जायगी। जैसे, यदि अंकगणित और बीजगणित दोनों विषय एक पुस्तक में हों, अथवा अंकगणित, बीजगणित और त्रिकोणमिति एक पुस्तक में हों तो ऐसी पुस्तकों का वर्गीकरण करने के लिए पृथक वर्ग की आवश्यकता पड़ेगी। अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अधिक समवबोध के सिद्धान्त का पालन होना आवश्यक है।

(२) स्थानीय भेद का सिद्धान्त

पुस्तक-वर्गीकरण पद्धति में विशेष रुचि के आधार पर स्थानीय भेद की भी व्यवस्था होनी चाहिए।

इसे स्थानीय भेद का सिद्धान्त कहते हैं।

पुस्तकों के क्षेत्र में प्रायः यह देखा जाता है कि पाठक स्थानीय एवं स्वदेशीय भाषा, साहित्य, संस्कृति एवं इतिहास के अध्ययन के प्रति विशेष अनुराग रखते हैं। उसके साथ वे उस देश की भाषा, साहित्य एवं संस्कृति के विषय में जानना चाहते हैं जो उनके देश से घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित हो। विभिन्न देशों के पाठकों में इस प्रकार की रुचि देखने को मिलती है। अतः एक ऐसे सिद्धान्त की आवश्यकता पड़ती है जिसके अनुसार पुस्तक-वर्गीकरण की सारणी में स्थानीय तथा देशगत रुचि के अनुसार पुस्तकों को व्यवस्थित किया जा सके।

द्विबिन्दु वर्गीकरण प्रणाली में इस सिद्धान्त को ध्यान में रख कर भौगोलिक सारणी में निम्नलिखित क्रम रखा गया है —

विश्व
स्वदेश
पक्षपोषित देश
एशिया, इत्यादि।

इस प्रकार ऊपर की दो और तीन संख्याओं में वर्गों की व्यवस्था परिवर्त्तनशील रखी गई है। संख्या ४ से ९९ तक संसार के अन्य देशों के नाम हैं। इस प्रकार संख्या २ और संख्या ३ ऐसी हैं जिन पर प्रत्येक देश अपने तथा अपने पक्षिदत्तम देश को रख सकता है। ऐसी दशा में सारणी में निर्दिष्ट उसके तथा उस देश के पक्षपोषित देश की संख्याओं का प्रयोग न होगा। जैसे सारणी में 'भारत' की संख्या ४४ है और ब्रिटेन की ५६१ है किन्तु भारतीय पुस्तकालयों में इस पद्धति के अनुसार 'भारत' के लिए २ और ब्रिटेन के लिए (पक्षपोषित देश मानें तो) ३ का प्रयोग किया जा सकता है। इन्हीं २ और ३ संख्याओं का प्रयोग इसी भाँति अन्य देश वाले भी कर सकते हैं।

जैसे :—
भारत का इतिहास=V २
V=इतिहास
२=भारत

यहाँ पर स्थानीय परिवर्त्तन सिद्धान्त के आधार पर स्वदेश भारत के लिए २ का प्रयोग कर लिया गया है। सारणी में निर्दिष्ट संख्या ४४ को नहीं लिया गया।

इसी प्रकार साहित्य की पुस्तकों के वर्गीकरण में जो भाषा राष्ट्रभाषा के रूप में हो उसके लिए भाषासूचक प्रतीक अंक लगाने की आवश्यकता भी समाप्त कर दी जाती है जो कि व्यवस्थापन की एक सुविधाजनक विधि है।

इस सिद्धान्त का पालन केवल द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में ही किया गया है।

(३) दृष्टिकोण का सिद्धान्त

पुस्तक-वर्गीकरण पद्धति में कुछ विधि ऐसी होनी चाहिए जो किसी विषय को विभिन्न दृष्टिकोण से प्रतिपादित करने वाली, या विभिन्न

विषयों के दृष्टिकोण से लिखा गई या विशेष रुचियों के आधार पर प्रकारान्तरित, या विशिष्ट व्यवसाय पर लिखित या पाठकों के विशिष्ट वर्गों के लिए लिखी गई पुस्तकों की व्यवस्था कर सकें।

इसका दृष्टिकोण का सिद्धा न कहते हैं।

भिन्न दृष्टि से लिखी गई पुस्तकें।

जैसे —

मनोविज्ञान	शिक्षा के दृष्टिकोण से
मनोविज्ञान	कला के दृष्टिकोण से
मनोविज्ञान	दन्तकला के दृष्टिकोण से
मनोविज्ञान	आयु शास्त्र क दृष्टिकोण से

स्पष्ट है कि एक मनोविज्ञान विषय पर विभिन्न चार दृष्टिकोण से पुस्तकें लिखी जा सकती हैं। एसी पुस्तकों का समुचित उपयाग तभी हो सकता है जब कि वर्गीकरण पद्धति में ऐसा व्यवस्था हा कि इन्हें चार प्रकार से रखा जा सके। यदि ऐसी पुस्तकों को केवल सामान्य विषय 'मनोविज्ञान' में रख दिया जाय तो ऐसा वर्गीकरण न तो सही होगा और न हो उपयोगी होगा। अत एसी पुस्तकों के लिए दृष्टिकाण के सिद्धान्त का पालन हाना आवश्यक है। दशमलव वर्गीकरण एव द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धतियों में ऐसी व्यवस्था की गई है। दशमलव वर्गीकरण में दृष्टिकोण का सूचित करने के लिए ०००१ संख्या जोड़ कर उसके साथ दृष्टिकोण क विषय की प्रतीक सख्या भी लगा दी जाती है।

इस प्रकार १५० ००१३७ वर्ग सख्या, शिक्षा के दृष्टिकोण से लिखे गये मनोविज्ञान का हा गई। इसमें १५० मनोविज्ञान ०००१ दृष्टिकोण एवं ३७ शिक्षा का प्रतीक है। दशमलव सयोजक है।

द्विबिन्दु वर्गीकरण-पद्धति में अभ्यानति प्रक्रिया (Bias number device) द्वारा दृष्टिकाण के सिद्धान्त का पालन किया जाता है। तदनुसार मूल वर्ग के साथ भी 'O' लगा कर दृष्टिकोण वाले विषय का प्रतीक दे दिया जाता है। जैसे शिक्षा क दृष्टिकोण से मनोविज्ञान=TOS। यहाँ पर 'S' मनोविज्ञान का, 'O' दृष्टिकोण का, और 'T' शिक्षा का प्रतीक है।

(४) श्रेष्ठ ग्रंथों की व्यवस्था का सिद्धान्त

पुस्तक वर्गीकरण पद्धति में एक ऐसा विधि होना चाहिए जो किसी भी श्रेष्ठ ग्रंथ (क्लैसिक) के समस्त सस्करणों का और उनके बाद उनकी

टीकाओं और बाद में प्रत्येक टीका की उपटीकाओं के सब संस्करणों को एक साथ व्यवस्थित कर सके।

इसको *श्रेण्य ग्रंथ-व्यवस्था का सिद्धान्त* कहते हैं।

किसी भी विषय के उच्चकोटि के श्रेण्य ग्रंथ जिन पर टीकाएँ, उपटीकाएँ स्वतन्त्र भाष्य, आलोचनाएँ, पदानुक्रमणिकाएँ एवं अन्य सामग्री प्रकाशित हुई हो, उन सब की व्यवस्था एक साथ करना आवश्यक है। संस्कृत, पाली एवं प्राकृत में लिखित अनेक विषयों पर ऐसे अधिकांश भारतीय ग्रंथ हैं।

द्विबिन्दु-वर्गीकरण पद्धति में ऐसे ग्रंथों के वर्गीकरण के लिए इस सिद्धांत का विशेष रूप से पालन किया गया है।

जैसे —

P 15 C x 1 ।	पाणिनी *अष्टाध्यायी*
P 15 C x 1,2 ।	पतञ्जलि *महाभाष्य*
P 15 C x 1 2,1 ।	कैय्यट *महाभाष्य प्रदीप*
P 15 C x 1,5,1,1 ।	नागोजी भट्ट *महाभाष्य प्रदीपोद्योत*

यहाँ पर *अष्टाध्यायी* पाणिनि का प्रसिद्ध व्याकरण ग्रंथ है। पतञ्जलि महोदय ने उस पर *महाभाष्य* लिखा है जो स्वतन्त्र व्याख्या है। उस *महाभाष्य* पर कैय्यट महोदय ने *प्रदीप* नामक टीका की है और उस *प्रदीप* पर भी नागोजी भट्ट ने उद्योत नामक टीका की है। यहाँ आप द्विबिन्दु वर्गीकरण के अनुसार वर्ग संख्याएँ दी हुई हैं जिनके अनुसार इन ग्रंथों को एक क्रम में एक साथ व्यवस्थित किया जा सकेगा। इन वर्ग संख्याओं में x श्रेण्य ग्रंथ का प्रतीक है।

(५) सामान्य उपभेद का सिद्धान्त

पुस्तक-वर्गीकरण पद्धति में सामान्य उपभेदों की एक सारणी होनी चाहिए जिसकी सहायता से किसी ज्ञान-वर्ग से सम्बन्धित पुस्तकें उस वर्ग से पृथक् की जा सकें और आगे ये पुस्तकें अपने रूप के आधार पर वर्गीकृत की जा सकें।

इस सिद्धान्त को <u>*सामान्य उपभेद का सिद्धान्त*</u> *कहते हैं।*

विषय को प्रतिपादित करने के लिए कुछ सर्वसामान्य रूप होते हैं, जैसे, सिद्धान्त, संक्षिप्त रूपरेखा, कोश, निबन्ध, पत्रिकायें, इतिहास आदि। ऐसे सर्वसामान्य रूपों की यदि एक सारणी पुस्तक वर्गीकरण पद्धति में हो तो उसके आधार पर पुस्तकों को ज्ञान वर्ग के किसी वर्ग से अलग करने और उनको

क्रमबद्ध करने में सुविधा होती है। द्विबिन्दु-वर्गीकरण पद्धति में सामान्य उपभेदों की सारणी की व्यवस्था इस प्रकार की गई है —

सामान्य विभाजन

a वाङ्मय सूचि
b व्यवसाय
c प्रयोगशाला, वेधशाला
d अजायबघर, प्रदर्शनी
e यंत्र, मशीन, फार्मूला
f नक्शा, मानचित्रावली
g चार्ट, डाइग्राम, ग्रेफ, हैण्डबुक, सूचियाँ
h संस्था
i विविध, स्मारक ग्रन्थ आदि
k विश्वकोश, शब्दकोश, पद सूची
l परिषद्
m सामयिक
n वार्षिक ग्रंथ, निर्देशिका, तिथि-पत्र
p सम्मेलन, कांग्रेस, सभा
q विधेयक, अधिनियम, कानून
r प्रशासन का विभागीय विवरण तथा समष्टि का तत्समान विवरण
s सख्या तत्त्व
t आयोग, समिति
u यात्रा, सर्वेक्षण, अभियान, अन्वेषण, आदि
v इतिहास
w जीवनी, पत्र
x संकलन, चयन
z सार

(६) व्यवच्छेदकता का सिद्धान्त

सामान्य उपभेद की सारणी का प्रतीक ज्ञान-वर्गीकरण की आधारभूत सारणी के प्रतीक से भिन्न होना चाहिए और उसमें वर्गीकरण के सामान्य सिद्धान्त और ज्ञान-वर्गीकरण के विशिष्ट सिद्धान्त इन दोनों द्वारा निर्दिष्ट प्रतीक सम्बन्धी सिद्धान्तों का अनुसरण होना चाहिए।

इसको व्यवच्छेदकता का सिद्धान्त कहते हैं।

ज्ञान क्षेत्र का वर्गीकरण करने पर उसके वर्गों के लिए जो प्रतीक निश्चित किये गये हैं, सामान्य उपभेद की सारणी के प्रतीक उनसे भिन्न होने चाहिएँ। सिद्धान्त पाँच में दी गई सारणियों से प्रकट है कि द्विबिन्दु-वर्गीकरण में अंग्रेजी वर्णमाला के छोटे अक्षरों का प्रतीक दिया गया है। ऐसा करने से ज्ञान वर्गीकरण के प्रतीकों से सामान्य उपभेद के प्रतीक भिन्न करके व्यवच्छेदकता के सिद्धान्त का पालन किया गया है। यह सिद्धान्त एक प्रकार से सामान्य उपभेद के सिद्धान्त का एक भाग है।

(७) व्यष्टिकरण का सिद्धान्त

पुस्तक-वर्गीकरण-पद्धति में ज्ञान के किसी एक वर्ग में वर्गीकृत बहुतसी पुस्तकों को एक दूसरे से अलग करने के लिए पुस्तक संख्या (Book Number) की योजना होनी चाहिए।

इसको व्यष्टिकरण का सिद्धान्त कहते हैं :—

पुस्तक-वर्गीकरण की सारणी के आधार पर पुस्तकों का विषयानुसार वर्गीकरण करने से यदि एक निर्दिष्ट वर्ग में अनेक लेखकों की पुस्तकें आ जाती हैं, तो निम्नलिखित समस्याएँ उठती हैं —

(क) एक लेखक की पुस्तकों का दूसरे लेखक की पुस्तकों से अलगाव करना।

(ख) एक लेखक की अनेक पुस्तकों में भी एक पुस्तक का दूसरे से अलगाव किया जाय।

(ग) प्रत्येक पुस्तक की प्रतियों और भागों में भी अलगाव करना।

(घ) एक ही पुस्तक के विभिन्न संस्करणों का अलगाव करना।

इन समस्याओं को हल करने के लिए पुस्तक वर्गीकरण पद्धति में 'व्यष्टिकरण के सिद्धान्त' का पालन किया जाना आवश्यक है।

लेखक क्रमांक

ऊपर की समस्याओं को हल करने की एक विधि होती है 'लेखक क्रमांक'। इसके लिए कुछ 'लेखक नामांक सारणियाँ' (ऑथर टेबुल) बनाई गई हैं जिनमें अकारादि क्रम से लेखकों के आद्य नामाक्षरों को लेकर प्रतीक अंक दिए जाते हैं। ऐसी सारणियों में 'कटर' और 'मेरिल' की *सारणियाँ प्रसिद्ध हैं।*

उदाहरण —

कटर क्रमांक	*मेरिल क्रमांक*
Ab 2 Abbot	01 A
Al 2 Aldridge	02 Agra
G 16 Gardiner	03 Als

बिस्को क्रमाङ्क (Biscoe Number)

प्रकाशन काल के क्रमानुसार ग्रन्थों को व्यवस्थित करने के लिए १८८५ ई० में बिस्को सारणी का आविष्कार हुआ। यह सारणी इस प्रकार है —

A	ई० पू०	J	१८३० से १८३९
B	० से ९९९	K	१८४० से १८४९
C	१००० से १४९९	L	१८५० से १८५९
D	१५०० से १५९९	M	१८६० से १८६९
E	१६०० से १६९९	N	१८७० से १८७९
F	१७०० से १७९९	O	१८८० से १८८९
G	१८०० से १८०९	P	१८९० से १८९९
H	१८१० से १८१९	Q	१९०० से १९०९
I	१८२० से १८२९	R	१९१० से १९१९ इत्यादि

इसके अनुसार पुस्तक पर उसके प्रकाशन काल का वर्ष (शताब्दी छोड़ कर) प्रतीक अक्षर सहित लिख दिया जाता है। जैसे, R १०=१९१०। लेकिन ऐसा करने से भी अनेक भागों में प्रकाशित पुस्तकों के भागों का अलगाव नहीं हो सकता।

द्विबिन्दु-वर्गीकरण पद्धति में निम्नलिखित में से एक या अनेक के प्रतीक देकर पुस्तक क्रमांक बनाया जा सकता है —

१	भाषा संख्या	५	पूरक संख्या
२	प्रकाशन वर्ष संख्या	६	आलोचना
३	पुस्तक प्राप्ति संख्या	७	आलोचना की प्राप्ति संख्या
४	भाग संख्या	८	ग्रंथ संख्या

इस प्रकार पुस्तकें एक दूसरे से पूर्णतः अलग हो जाती हैं और पाठकों को इस व्यवस्था से विशेष सुविधा मिलती है।

समीक्षा

इस अध्याय में दिए गए डा० एस० आर० रंगनाथन के २८ पुस्तक वर्गीकरण सिद्धान्तों को उनकी परिभाषाओं एवं उदाहरणों सहित अध्ययन करने के बाद यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि ये सिद्धांत पूर्णत वैज्ञानिक एवं सुसंगत हैं। प्रारम्भ के तीन अध्यायों को पढ़ लेने के बाद इन सिद्धान्तों को समझना सरल हो जाता है क्योंकि प्रतिपाद्य विषय वही है केवल उनका प्रतिपादन एक वैज्ञानिक एवं टेकनिकल शैली में किया गया है। साथ ही कुछ नए सिद्धान्त और नई मान्यताएँ भी स्थापित की गई हैं।

वर्गीकरण पद्धतियों का विकास

सभ्यता और संस्कृति से सम्पन्न, विज्ञान के चमत्कारों से परिपूर्ण आज के सुसंस्कृत मानव-समुदाय को देख कर यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि यह परम्परा आदिकाल से ऐसी ही चली आ रही है। इसका भी क्रमिक विकास होता रहा है। इस विकास की पहली कड़ी 'वर्गीकरण' से प्रारम्भ होती है। चिन्तनशील आदि मानवों ने प्रकृति में अनेक वस्तुओं को देखा। उनके गुण, रूप, रंग और आकार आपस में विभिन्न थे। अतः व्यावहारिक सुविधा के लिए उन्होंने उन वस्तुओं के अलग अलग नाम दिए। इस प्रकार इस नामकरण से ही वर्गीकरण का सूत्रपात हुआ। भारतीय विचारकों एवं चिन्तनशील ऋषियों और मुनियों ने प्रकृति में विद्यमान अनेकता को देख कर उसमें एकता की खोज का भी प्रयास किया। फलतः एक आदितत्त्व की सत्ता का आभास हुआ जिसको अपने अपने दृष्टिकोण से उन्होंने कर्त्ता, ब्रह्म, ईश्वर आदि नाम दिए। इस प्रकार उस मूल तत्त्व और प्रकृति के सम्बन्धों के विषय में गम्भीर विचार एवं विश्लेषण होता रहा और आज भी इस समस्या पर मतैक्य नहीं है।

अपने अनुभवों एवं भावों को व्यक्त करने के लिए मनुष्य ने आदि काल से अनेक उपाय अपनाये। लिपि के अभाव में उसने संकेतों से काम लिया। भावों को चित्रित करके व्यक्त किया। लिपि का आविष्कार करके उसका प्रयोग मिट्टी के ठीकरों, भोजपत्रों, ताड़-पत्रों, चमड़ों एवं कागजों पर किया। इस प्रकार जब लिखित रूप में एक से अधिक भावों को प्रकट करने वाली, विविध रूप वाली सामग्री सामने आई और तब उन्हें किसी सुविधानुकूल क्रम से क्रमबद्ध करने की आवश्यकता हुई। आधुनिक पुस्तक वर्गीकरण का मूल रूप यहीं से प्रारम्भ होता है।

भारतीय दृष्टिकोण

इस परम्परा का विकास भारत में और 'भारतेतर' देशों में अलग अलग रीति से हुआ। जैसा कि ऊपर कहा गया है वर्गीकरण की भारतीय परम्परा

का आधार आध्यात्मिक था। अतः यहाँ के वातावरण में जो समाज बना, उसमें परम तत्त्व के प्रति आस्था, उस तक पहुँचने की चेष्टा तथा साथ ही लौकिक उत्कर्ष भी था। ऐसे वातावरण में जो कुछ लिखा गया उसको व्यवस्थित करने के लिए, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष वर्गों को तथा विविध विद्याओं और कलाओं के उपवर्गों को आधार बनाया गया। चूँकि भारतीय अध्ययन की प्रवृत्ति सदा विषय की गम्भीरता की ओर रही थी, अतः यहाँ की 'वर्गीकरण-पद्धतियों' में लिखित सामग्री को विषयों के अनुसार क्रमबद्ध करके रखने की परम्परा रही। भारत के अतीत के गौरव नालंदा, तक्षशिला एवं वलभी आदि के पुस्तकालयों में ग्रंथों की क्रमबद्धता इसी रूप में थी।[१] मध्यकालीन भारत में अकबर के पुस्तकालय की पुस्तकें भी विषयानुसार कुछ निश्चित विषय शीर्षकों के अन्तर्गत क्रमबद्ध की गई थीं। आज भी अनेक वैदिक ब्राह्मणों के घरों में ग्रन्थों को विषयानुसार ही रखा हुआ देखा जा सकता है।

भारत में लिखित सामग्री का वर्गीकरण सदा दार्शनिक आधार लेकर विषयानुसार रहा है, इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है डा० रंगनाथन की द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति। यदि वर्गीकरण परम्परा का भारतीय आधार दर्शनप्रधान न होता, यदि यहाँ की पूर्वसंचित ज्ञानराशि विविध विषयप्रधान और एक विशिष्ट प्रकार की न होती तो द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति की रूपरेखा अन्य विदेशी पद्धति की भाँति ही होती। फलतः यह निःसंदिग्ध रूप में कहा जा सकता है कि भारत में प्रचलित प्राचीन पुस्तक-वर्गीकरण-पद्धतियाँ ज्ञान वर्गीकरण पर आधारित थीं। उनका मूलाधार दार्शनिक था। राजनीतिक उथल पुथल के कारण यद्यपि आज वे ठोस प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं जिनके आधार पर इसे प्रमाणित किया जा सके किन्तु जो कुछ भी प्रत्यक्ष प्रमाण एवं अनुमान हैं वे उक्त विचारधारा को पुष्ट करते हैं।

भारतेतर दृष्टिकोण

भारतेतर देशों की वर्गीकरण पद्धतियों का संक्षिप्त विवेचन दो विधियों से किया जा सकता है—(१) ऐतिहासिक क्रम (२) आधार-क्रम।

---

१ देखिए द्वारकाप्रसाद शास्त्री —'भारत में पुस्तकालयों का उद्भव और विकास' १९५७।

(१) ऐतिहासिक-क्रम

एक प्राचीन शासक असुर बानी पाल से लेकर हेनरी एवलिन ब्लिस तक ऐतिहासिक-क्रम इस प्रकार है —

		असुर—बानि—पाल
ई० पू०	४२८–३४७	प्लेटो
	३८४–३२२	अरिस्टोटल
	२६०–२४०	*कॉलिमेकस*
ई०	C ३०५	पॉरफिरी
	C ५२९	कैपेला
	१२६६	रोजर बेकन
	१४९८	*एल्डस मैनुटियस*
	१५४८	*कानरड़ जेस्नर*
	१५८३	*ला क्रॉयक्स डु मेन*
	१५८७	क्रिस्टोफ्ले डी सैविग्नी
	१६०५	*फ्रांसिस बेकन*
	१६४३	*ग्रैब्रियल नौडे*
	१६७८	जीन गार्नियर
	१६७९	*इस्माइल बोलियो*
	१७०५	ग्रैब्रिल मार्टिन
	१७६३	गिलोमी डी बूरे
	१८१०	जैक्वस चार्ल्स ब्रूनेट
	१८१४	थॉमस हार्टवैल हॉर्न
	१८३६	ब्रिटिश म्यूजियम
	१८५९	ऐडवर्ड ऐड्वर्ड्स
	१८७०	*डब्ल्यू० टी० हैरिस*
	१८७१	नेटेले बैटेजार्टि
	१८७६	*मैल्विल ड्यूई*—डेसिमल क्लैसिफिकेशन
	१८७९	जे० स्क्वार्ट्ज
	१८७९—१९०१	चार्ल्स *ऐमी* कटर—ऐक्सपैन्सिव क्लैसिफिकेशन
	१८८९	लॉयड पी० स्मिथ

प्लेटो और ऐरिस्टोटल (ग्रीस) ई० पू० (४२८ ३४७) (३८४ ३२२) कौलिमेचस (ऐलेक्जेंड्रिया की लाइब्रेरी) की पद्धति (ई० पू० २६० २४०) इस विषय में शताब्दियों तक एक मात्र यही पद्धति पथ प्रदर्शन करती रही।

१ (ख) मध्यकालीन विद्वत्तापूर्ण पद्धतियाँ

कोनार्ड जेस्नर (१५१६ ६५) की पद्धति पहली बिब्लियोग्राफिकल जमन रिलय पद्धति थी। इसका काफी अनुकरण किया गया।

मार्टिनस कैपेला (५वीं शती)
कैसिडोरस (६वीं शती)
१६वीं और १७वीं शताब्दी की मठों के पुस्तकालयों की पद्धतियाँ
कॉलिजियेट प्रेस मार्किङ्ग सिस्टम

१६०५ में फ्रांसिस बेकन की स्कीम के आने से पहले कम से कम १० अच्छी पद्धतियाँ थीं। उनमें प्लिनो (ई० २३ ७९), पारस्त्री (C ३००), बेडे (६७३ ५३५), ऐल्क्युन (७३६ ८०४), रोजर बेकन (१२६६) डाण्टे (१२६७) और जेस्नर (१५४८) मुख्य थे।

बेकन के बाद वर्गीकरण से सम्बद्ध नाम ये हैं—डेस्कार्टेस (१६४४), बैन्थम (१८१६), कोलरिज (१८१७), हीगल (१८१७), कॉमटे (१८२२), हर्बर्ट स्पेन्सर (१८६४), स्टैड्लर (१८८६), और कार्ल पीयर्सन (१९ ०)।

(२) व्यावहारिक पद्धतियाँ (Utilitarian Systems)

ऐल्डस मैनुटियस (१४९८)—उसने ग्रीक पुस्तकों की विषय सूची को व्यावहारिक उपयोगी पद्धति के आधार पर व्यवस्थित किया था। इस प्रकार का यह एक प्राचीनतम उदाहरण है।

१८१० में योरोप में सबसे अधिक प्रभावशाली कार्य जे० सी० ब्रूनेट ने किया। सरटेंस मूरेबिट ने इसे दार्शनिक पद्धति भी बताया है, पर ऐसा संयोगवश ही हो गया है।

ऐल्डस और ब्रूनेट के मध्यवर्ती समय में समवत सबसे प्रमुख गैब्रिल नौदे (१६४३) हुए हैं।

फ्रेंच पद्धति—इसे पेरिस के पुस्तक विक्रेताओं की पद्धति भी कहते हैं यह व्यावहारिक पद्धति की ही श्रेणी की है।

इसका मूल कहाँ से प्रारम्भ हुआ, यद्यपि यह सन्दिग्ध है तथापि परम्परा के अनुसार *इस्माइल बोयेलियो* (१६७९) तथा कुछ के अनुसार *जीन गार्नियर* (१६७८) से इसका प्रारम्भ समझा जाता है। बोयेलियो के कैटेलॉग पर बाद में *मैथियल मार्टिन* (१७०५) तथा *गिलीम डी ब्युरे* (१७६१) ने कार्य किया। तदुपरान्त १८१० में *जे० सी० ब्रूनेट* ने इसका अच्छा विस्तार किया।

फ्रैंच पद्धति पर आधारित अनेक अन्य पद्धतियों की भी खोज सम्भव हुई है। कुछ का नाम यहाँ दिया जा सकता है—

थॉमस हार्टवेल होर्ने (१८१४) ने ब्रिटिश म्यूजियम को एक पद्धति पेश की थी। इसी प्रकार *ऐड्वर्ड ऐड्वर्ड्स* (१८५९), *लियोपोल्ड डेलिस्ली* (१८६०), और यहाँ तक कि ब्रिटिश म्यूजियम की पद्धति (१८३६) भी अपेक्षाकृत फ्रैंच पद्धति से ही अधिक प्रभावित है।

ब्रिटिश म्यूजियम पद्धति (१८३६–३८)—यह काफी विस्तृत और व्यावहारिक है परन्तु प्राय संशोधनों से वंचित ही रही है इसलिए अन्यत्र इसके उपयोग की संभावना कम ही है।

आधुनिक प्रसिद्ध पद्धतियों में से *लाइब्रेरी आफ कांग्रेस की पद्धति* (१९०१) सबसे बड़ी और सबसे नवीन व्यावहारिक पद्धति समझी जाती है।

(२) दार्शनिक पद्धतियाँ

सबसे प्रमुख और लोकप्रिय मेलविल ड्युई की दशमलव पद्धति १८७६ में प्रकाश में आयी। यह पहले पहल १८७३ में विकसित हुई थी। परन्तु मेलविल ड्युई की पद्धति बिल्कुल मौलिक नहीं थी। यह बहुत कुछ डब्ल्यू० टी० *हैरिस* (१८७०) पर आधारित थी, जो स्वयं फिर *फ्रांसिस बेकन* (१६०५) की पद्धति को उलटा करके बनाई गई थी।

हैरिस और ड्युई की रूपरेखाओं के मूल तत्त्व प्राय बेकन पर ही आधारित हैं। पर आधुनिक बिब्लियोग्रैफिकल दृष्टिकोण से बेकन की पद्धति में स्वभावत काफी अभाव है।

१८९१ में *चार्ल्स एमी कटर* ने 'एक्सपेन्सिव क्लैसिफिकेशन स्कीम' बनाई। यह भी बेकन के ही विपरीत क्रम में थी। परन्तु सामान्य लाइब्रेरी के लिए बहुत विद्वत्तापूर्ण पद्धतियों में से एक थी। अलग-अलग क्रमश विस्तारशील बहुत-सी सारणियों में होने से इसे 'ऐक्सपेन्सिव' कहा गया।

इसके पश्चात् प्रमुख नाम जे० डी० ब्राउन का है। इसने १८९५ से १९०६ तक तीन पद्धतियाँ निकालीं। छोटे पुस्तकालयों के लिए जॉन हेनरी क्विन के सहयोग से १८९५ में *क्विन ब्राउन पद्धति*, १८९८ में ऐड्जेस्टेबुल क्लेसीफिकेशन (Adjustable Classification) पद्धति तथा बाद में अधिक सुधार करके १९०६ में सब्जेक्ट क्लेसीफिकेशन स्कीम (Subject Classification Scheme) क्रमशः प्रकाशित हुई। इस पद्धति को अनेक ब्रिटिश पुस्तकालयों ने अपनाया है।

१८९५ में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के परिणामस्वरूप दो संस्थाएँ विकसित हुई —(१) दी इन्स्टीट्यूट इन्टर्नेशनल डि बिब्लियोग्रैफी (२) दी आफिस इन्टर्नेशनल डी बिब्लियोग्राफी। संसार में प्रकाशित होने वाली सामग्री को विषय क्रम से विस्तृत सूचीकरण के लिए इस पहली संस्था ने १९०५ में 'क्लेसिफिकेशन डेसिमल' पद्धति का प्रारम्भ किया। यह लगभग सर्वांश में ड्यूई की दशमलव पद्धति पर ही आधारित है। १९३० में संस्था का नाम 'फैडरेशन इन्टर्नेशनल डि डॉक्युमेन्टेशन' (F I D) में परिवर्तित हो गया तथा 'यूनिवर्सल डेसिमल क्लेसिफिकेशन' को प्रामाणिक वर्गीकरण पद्धति के रूप में स्वीकार किया गया। (वर्ल्ड कॉन्फरेन्स आफ यूनिवर्सल डॉक्युमेन्टेशन, पेरिस)।

१९३५ में हेनरी ऐव्लिन ब्लिस की—बिब्लियोग्रैफिक क्लेसिफिकेशन पद्धति विकसित हुई। इसकी पद्धति जल्दी ही प्रख्यात हो गई। १९२९ में उसकी 'The organization of knowledge and the system of sciences' पुस्तक प्रकाशित हुई थी जिसमें पुस्तकालय वर्गीकरण की समस्याओं का दार्शनिक विवेचन किया गया है।

सन् १९३३ में एक भारतीय पुस्तकालय विज्ञानवेत्ता डा० एस० आर० रंगनाथन की कोलन क्लेसिफिकेशन पद्धति प्रकाशित हुई। यह अति वैज्ञानिक एवं सैद्धान्तिक दृष्टि से परिपुष्ट है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आधुनिक पुस्तक-वर्गीकरण के लिए केवल दार्शनिक आधार वाली ५ पद्धतियाँ तथा लाइब्रेरी आफ कांग्रेस की पद्धति ही महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी हैं। शेष पद्धतियाँ इनके निर्माण की पृष्ठ भूमि में भले ही रही हों किन्तु अब उनका केवल ऐतिहासिक ही महत्त्व रह गया है। अगले अध्याय में इन्हीं आधुनिक पद्धतियों का परिचय दिया जायगा।

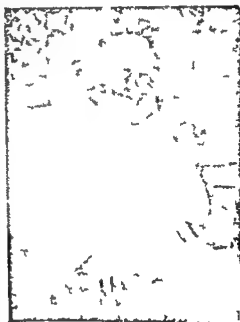
प्रमुख वर्गीकरण-पद्धतियाँ

(१) दशमलव वर्गीकरण पद्धति

श्री मेलविल डयुइ का परिचय

प्रारम्भिक जीवन

श्री मेलविल डयुई का जन्म १८५१ ई० में न्यूयार्क स्टेट के छोटे से टाउन में हुआ था। उनका पूरा नाम मेलविल लुइस कासुथ डयुइ था जो बाद में संक्षिप्त होकर मेलविल डयुई रह गया। उनके पिता के पास कुछ खेत थे, एक जनरल स्टोर की दूकान थी। उनके पिता जी जूते बनाने का काम भी किया करते थे। बालक डयुइ ने बचपन में अपने पिता से अपने लिए जूते बनाने की कला भी सीखी। वे प्रारम्भ से ही कुछ गम्भीर मस्तिष्क वाले थे। उन्हें डायरी रखने का शौक पैदा हुआ और धीरे धीरे पुस्तकों को संग्रह करने में भी उनकी अभिरुचि हो गई। १६ वर्ष की उम्र में उन्होंने कुछ फुटकर काम करके और अपने खर्च में कटौती करके १० डालर बनाए और उससे वेब्स्टर की एक डिक्शनरी खरीदी। धीरे धीरे १८ वर्ष की आयु में उनके पास ८८ पुस्तकों का एक निजी संग्रह हो गया। जब वे



स्व० श्री मेलविल डयुई

१७ वर्ष के थे तो 'फर्स्टग्रेड टीचर्स सर्टीफिकेट' प्राप्त किया और एक देहाती स्कूल में मास्टर हो गए। कुछ दिनों बाद ही उन्होंने अध्यापन कार्य छोड़ दिया और फिर कालेज में पढ़ने के लिए चले गए। यहाँ वे पार्ट टाइम काम करके और कुछ फुटकर काम करके कालेज की फीस का प्रबन्ध कर लेते थे। जब वह अण्डरग्रेजुएट थे तो अमहर्स्ट यूनिवर्सिटी की लाइब्रेरी में छात्र सहायक (स्टुडेंट असिस्टेन्ट) का काम पार्ट टाइम किया करते थे साथ ही अपने साथी विद्यार्थियों को शार्टहैण्ड भी सिखाया करते थे और कुछ सुधार के कामों में भी दिलचस्पी लेते थे।

दशमलव प्रणाली का श्रीगणेश

अपने विद्यार्थी जीवन में ड्युई महोदय ने पचासों पुस्तकालयों को देखा। उनमें पुस्तकों का वर्गीकरण बहुत विचित्र था। पुस्तकों पर कमरों, आलमारियों और शेल्फ के अनुसार नम्बर लगे हुए थे। कहीं कोई ढंग था तो कहीं कोई। उन विधियों से पुस्तकों को रखने, सूची बनाने आदि में श्रम और धन की बहुत बरबादी होती थी और पुस्तकों का सदुपयोग भी बहुत कम हो पाता था। उस दशा को देख कर उनके मन में बहुत बेचैनी पैदा हो गई। महीनों दिन-रात वे इसी सोच में डूबे रहते थे कि पुस्तकों को क्रम बद्ध रखने की उन्हें कोई सरल विधि सूझ जाय। उनका विश्वास था कि पुस्तकालयों की संख्या दिनों-दिन बढ़ेगी मगर उनमें कार्यकर्ता लाइब्रेरियन बहुत ही कम योग्यता के व्यक्ति होंगे। अतः पुस्तकों को क्रम बद्ध रखने की विधि वैज्ञानिक होते हुए भी सरल होनी चाहिए। अन्त में इस धुन में मस्त ड्युई महोदय ने अङ्कों का प्रतीक देकर विषय के अनुसार पुस्तकों के वर्गीकरण की एक विधि का आविष्कार किया जिसमें विस्तार के लिए दशमलव का सहारा लिया गया और जो आज 'डेसिमिल क्लैसीफिकेशन स्कीम' या 'दशमलव वर्गीकरण-पद्धति' के नाम से प्रसिद्ध है।

प्रथम प्रयोग

कोई भी पद्धति तब तक सफल नहीं मानी जा सकती जब तक कि वह व्यावहारिक रूप में प्रयोग की कसौटी पर खरी न उतरे। उन दिनों ड्युई महोदय की आयु २२ वर्ष की थी और वे अमहर्स्ट यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी में स्टुडेन्ट असिस्टेन्ट थे। उन्होंने यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी कमेटी के सामने एक स्मृति-पत्र (मेमोरैण्डम) पेश किया जिसमें पुस्तकें आल्मारियों में व्यवस्थित

करण की इस नई और अधिक लाभप्रद पद्धति की व्याख्या की। लाइब्रेरी कमेटी को इनका विचार जँच गया और ड्युई महोदय को कहा गया कि वे अम्हर्स्ट कालेज लाइब्रेरी की पुस्तकों का वर्गीकरण इस अपनी नई प्रणाली के अनुसार करें।

उन्होंने तदनुसार अम्हर्स्ट कालेज लाइब्रेरी की पुस्तकों का वर्गीकरण करके अपनी योग्यता का परिचय दिया।

धीरे धीरे ड्युई महोदय की इस पद्धति का प्रचार बढ़ता ही गया। इसका प्रथम संस्करण १८७६ ई० में हुआ। उस समय उसमें केवल ४२ पृष्ठ थे और कुल १००० प्रतियाँ छपी थीं। किन्तु यह इतनी लोकप्रिय हुई कि अब तक इसके १६ संस्करण छप चुके हैं। यह संसार के प्रत्येक भाग में पहुँच चुकी है। संसार के लगभग १५०० बड़े पुस्तकालयों ने इसे अपनाया है। अनेक भाषाओं में इसके अनुवाद हुए हैं। आज यह पद्धति 'यूनिवर्सल डेसिमल क्लेसिफिकेशन' का भी आधार है जो कि अन्तर्राष्ट्रीय बिब्लियोग्रेफिकल कार्य के लिए स्वीकार की गई है।

ग्रेजुएट होने के बाद ड्युई महोदय उस अम्हर्स्ट कालेज लाइब्रेरी के लाइब्रेरियन भी नियुक्त किए गए परन्तु कुछ दिनों तक उस पद पर काम करके वे बोस्टन चले गये।

लाइब्रेरी एसोसिएशन और लाइब्रेरी जरनल

ड्युई महोदय १८७६ ई० तक बोस्टन में रहे। वहाँ उन्होंने 'अमेरिकन लाइब्रेरी एसोसिएशन' की स्थापना की। वे उसके सबसे प्रथम सदस्य बने और १५ वर्ष तक उस एसोसिएशन के अवैतनिक सेक्रेटरी बने रहे। वहीं से उन्होंने 'लाइब्रेरी जर्नल' पत्रिका का १८७६ से १८८० तक सम्पादन भी किया।

प्रथम ट्रेनिङ्ग स्कूल

ड्युई महोदय की हार्दिक इच्छा थी कि पुस्तकालय-कर्मचारियों की हैसियत बढ़े, वे पुस्तकालय की टेकनिकों की ट्रेनिङ्ग लें और पुस्तकालय सेवा को अधिक लाभकर और प्रभावोत्पादक बनावें। लेकिन अभी तक ड्युई महोदय को कोई ऐसा अवसर न मिल सका था। ८ साल बोस्टन में रहने के बाद उनकी नियुक्ति कोलम्बिया कालेज, न्यूयार्क में लाइब्रेरियन

के रूप में हुई। वहाँ पर उन्हें अपना अभाष्ट ट्रेनिंग स्कूल खोलने की सुविधा मिल गई। इस प्रकार उन्होंने 'पुस्तकालय विज्ञान' की ट्रेनिंग का सबसे पहला स्कूल १८८७ ई० में कोलम्बिया कालेज में खोला और ड्युई महोदय ही उस स्कूल के प्रोफेसर हुए। ट्रेनिंग का यह प्रयास बहुत ही सफल रहा। इसके पीछे थी ड्युई महोदय की प्रेरणा, उनका उत्साह और नेतृत्व।

स्कूल का स्थानान्तरण

इस ट्रेनिंग स्कूल की लोकप्रियता को देख कर बहुत सी महिलाओं ने भी ट्रेनिंग ले कर पुस्तकालय क्षेत्र में आने की इच्छा प्रकट की। ड्युई महोदय एक उदार व्यक्ति थे। उन्होंने अपने ट्रेनिंग स्कूल में कुछ महिलाओं को भी भरती कर लिया। फिर तो खलबली मच गई। पुस्तकालय के अधिकारियों ने इसका घोर विरोध किया। मगर ड्युई महोदय की धुन के आगे उनकी एक न चली। वर्षों झगड़ा चलता रहा और महिलाएं ट्रेनिंग लेती रहीं। अन्त में दिसम्बर १८८८ ई० में ड्युई महोदय शिक्षा संचालक के स्तर के समान वाले एक पद पर नियुक्त किए गये और यह पद था आलबेनी (Albany) में न्यूयार्क स्टेट लाइब्रेरी डाइरेक्टर का पद। फिर तो ड्युई महोदय अपने साथ महिला छात्राओं सहित पूरे ट्रेनिंग स्कूल को आलबनी ले गये और लाइब्रेरी ट्रेनिंग स्कूल के डाइरेक्टर के रूप में भी काम करते रहे। अन्त में वहाँ से उन्होंने १९०५ ई० में अवकाश ग्रहण किया। उनके हटने पर उनकी सी योग्यता का कोई व्यक्ति न मिल सका। अतः उनकी जगह पर शिक्षा, लाइब्रेरी ट्रेनिंग स्कूल और स्टेट लाइब्रेरीज के लिए अलग अलग तीन डाइरेक्टर रखे गए।

व्यक्तित्व

श्री ड्युई महोदय का जीवन उच्चतम आदर्शों से ओत प्रोत था। वे अपनी धुन के पक्के थे। वे एक धार्मिक प्रकृति के सच्चे ईसाई थे। यहाँ तक कि वर्गीकरण पद्धति में अंकों के प्रयोग की बात भी उनके दिमाग में चर्च की प्रार्थना के बाद ही आई थी। उन्होंने पुस्तकालय के क्षेत्र को इसलिए चुना कि इस क्षेत्र में उस समय अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक काम करने की जरूरत थी। उनका स्वभाव था कि वे जो कुछ कहते थे उस पर खुद अमल करते थे। शराब तथा सिगरेट तम्बाकू आदि से उन्हें घोर घृणा थी। उनका विश्वास था कि परमात्मा ने मनुष्य के मुख को इन चीजों

के प्रयोग के लिए नहीं बनाया है। इसी धुन में उन्होंने अपने पिता को भी तम्बाकू न बेचने पर राजी कर लिया और उनकी दूकान की तम्बाकू का सारा स्टाक लागत मात्र पर पड़ोसी दूकानदार को दे दिया। वे हिसाब किताब की कला में बड़े सिद्धहस्त थे। उनके पिता जी की दूकान घाटे पर चल रही थी और वे उसे चलाए जा रहे थे। एक दिन ड्युई महोदय ने दूकान के स्टाक और आय व्यय की जाँच करके उसका बैलेंस शीट बना कर अपने पिता को घाटे का हिसाब समझाया तो दूकान बन्द कर दी गई। वे बहुत ही सुधारवादी व्यक्ति थे। उन्होंने सबसे पहले पुस्तकालयों को शिक्षा का आवश्यक अंग और प्रभावशाली यंत्र अनुभव किया था।

विविध क्रिया-कलाप

ड्युई एक सामाजिक चेतना के व्यक्ति थे। बोस्टन में रहते हुए उन्होंने 'रहस ऐण्ड राइटर्स इकोनोमी कम्पनी' की स्थापना की। धीरे धीरे विविध लाइब्रेरी इक्विपमेण्ट के भी सुविधापूर्ण ढंग सुलभ होने की व्यवस्था उन्होंने की। उन्होंने एक 'लाइब्रेरी ब्यूरो' भी स्थापित किया। इसके द्वारा कार्यालय में फाइलिंग की अनेक विधियों और श्रम तथा समय को बचाने की विधियों का प्रचार हुआ। पुस्तकालयों में सूचीकरण के लिए अपनाया गया आज का ५×३ इंच का सूची कार्ड ड्युई महोदय का ही आविष्कार है। उन्होंने 'लेक प्लेसिड क्लब' (Lake Placid Club) नामक एक क्लब की स्थापना की। उसकी उन्नति में वे सदा सहयोग देते रहे। यहाँ तक कि 'लाइब्रेरी ब्यूरो' को जब उन्होंने बेच दिया तो जो धन मिला वह सब उसी क्लब को दे दिया। आज यह क्लब इतनी उन्नत दशा में है कि यह अकेला ही ड्युई की यादगार के लिए काफी है।

अन्त

लाइब्रेरी प्रोफेशन के संस्थापक, आधुनिक पुस्तकालयों की टेकनिक के जन्मदाता, लाइब्रेरियनशिप के प्रथम स्कूल के, अमेरिकन लाइब्रेरी एसोसियेशन और लाइब्रेरी जनरल के संस्थापक और दशमलव वर्गीकरण के लेखक इस महान् व्यक्ति की मृत्यु ८० वर्ष की आयु में १९३२ ई० हुई। संसार का पुस्तकालय क्षेत्र आज भी उनका ऋणी है और जब तक पुस्तकालयों का अस्तित्व इस पृथ्वी पर बना रहेगा ड्युई महोदय का भुलाया नहीं जा सकता।

दशमलव वर्गीकरण पद्धति

मुख्य वर्ग

ड्युई महोदय ने 'दशमलव वर्गीकरण पद्धति' में ज्ञान के सम्पूर्ण क्षेत्र को १ से लेकर ९ भागों में विभाजित किया है और पुस्तिकाएँ, पत्रिकाएं, विश्व-कोश आदि ऐसी अध्ययन सामग्री जो कि विभाजित ९ वर्गों में से किसी भी वर्ग में नहीं रखी जा सकती, उसके लिए 'सामान्य कृति' नामक एक अलग वर्ग शून्य ० से सूचित कर बनाया है और उसका स्थान सब वर्गों से पहले रखा है। इस प्रकार इस पद्धति में १० वर्ग हो जाते हैं :—

० सामान्य कृति
१ दर्शन
२ धर्म
३ समाज-शास्त्र
४ भाषा-शास्त्र
५ शुद्ध विज्ञान
६ व्यावहारिक विज्ञान
७ कलाएँ और मनोरंजन
८ साहित्य
९ इतिहास

वर्गों का विस्तार एवं विभाजन

इन मुख्य वर्गों के विभाजन और उनके उपविभाजन के लिए यह आवश्यक था कि सबसे पहले इन वर्गों का कोई प्रतीक चुन लिया जाय। जैसा कि पहले कहा जा चुका है ड्युई महोदय ने अंकों का प्रतीक चुना। उनका तर्क था कि अक्षरों के प्रतीकों की अपेक्षा अंकों के प्रतीक सरल और सुबोध होते हैं। वे लिखने पढ़ने और याद रखने की दृष्टि से भी सुविधाजनक होते हैं और उनके प्रयोग में गलतियाँ होने की कम सम्भावना रहती है।

उनका इस सम्बन्ध में कथन था कि दो अंकों का प्रतीक मुख्य वर्ग के विभाजन एवं उपविभाजन के लिए छोटा है और चार अंकों का बहुत बड़ा। अतः उन्होंने मध्यम मार्ग अपनाया और अरबी अंकों से निम्नलिखित रूप से मुख्य वर्गों का प्रतीक स्थिर किया।

००० सामान्य कृति
१०० दर्शन
२०० धर्म
३०० समाज शास्त्र
४०० भाषा शास्त्र
५०० शुद्ध विज्ञान
६०० व्यावहारिक विज्ञान
७०० कलायें और मनोरंजन
८०० साहित्य
९०० इतिहास

ऊपर दी हुई वर्गों की प्रतीक संख्याओं से स्पष्ट है कि 'सामान्य कृति' वर्ग का विस्तार ००० से ०९९ तक, दर्शन वर्ग का १०० से १९९ तक, धर्म वर्ग का २०० से २९९ तक, समाज-शास्त्र का ३०० से ३९९ तक, भाषा शास्त्र का ३९९ से ४९९ तक, शुद्ध विज्ञान का ५०० से ५९९ तक, व्यावहारिक विज्ञान का ६०० से ६९९ तक, कलायें तथा मनोरंजन का ७०० से ७९९ तक, साहित्य का ८०० से ८९९ तक और इतिहास का ९०० से ९९९ तक हो सकता है।

उपर्युक्त वर्गों में कोई भी तार्किक, वैज्ञानिक या विकासात्मक क्रम नहीं है। ऐसा लगता है कि प्रवाकों के उक्त १० वर्गों में ज्ञान के १० वर्गों का समावेश करते समय भाषा शास्त्र को साहित्य से अलग करना ड्यूई महोदय के लिए आवश्यक हो गया। तब इन १० वर्गों को प्रवाकों के साथ संगति हो सकी। इस प्रकार 'वर्ग विभाजन' का यह ढाँचा उन्होंने खड़ा किया जो कि इस पद्धति का आधार है।

मुख्य वर्गों का परिचय एवं विभाजन

इस पद्धति में मुख्य वर्गों को एक नियमित रीति से विभाजित करके उपवर्ग बनाए जाते हैं। प्रत्येक वर्ग को ९ उपवर्गों में विभाजित किया जाता है। 'सामान्य कृति वर्ग' के विभाजन की रूपरेखा इस प्रकार है —

००० *सामान्य कृतियाँ*
०१० ग्रंथ-तालिका विज्ञान और उसकी कला
०२० पुस्तकालय-विज्ञान
०३० सामान्य विश्वकोश
०४० सामान्य संगृहीत निबन्ध

०५० सामान्य पत्रिकायें
०६० सामान्य सभा समितियाँ, संग्रहालय
०७० पत्र-संपादन कला, समाचार, पत्र
०८० संगृहीत कृतियाँ
०९० पुस्तकीय दुष्प्राप्यतायें

इस वर्ग के उपवर्गों के देखने से प्रकट होता है कि इस वर्ग में कुछ विशिष्ट विषयों को सम्मिलित किया गया है जो व्यावहारिक रूप में अन्य किसी वर्ग के अन्तर्गत नहीं आ सकते और स्वभावतः व्यापक हैं।

दर्शन वर्ग

पाश्चात्य दार्शनिकों ने दर्शन की चार मुख्य शाखायें मानी हैं। तत्त्व विद्या, मनोविज्ञान, तर्क और नीतिशास्त्र। इसके अतिरिक्त प्राच्य एवं प्राचीन दार्शनिकों के ग्रंथों का विपुल साहित्य भी उपलब्ध है और दर्शन पर आधुनिक विचारकों के मतों के प्रतिपादक ग्रंथ भी उपलब्ध हैं। अतः इस पद्धति में दर्शन के उपवर्ग बनाते समय इनको उपवर्गों के रूप में लिया गया है। इसके अतिरिक्त 'तत्त्व विद्या' से 'तत्त्व विद्या के सिद्धान्त' को पृथक् करके एक अलग उपवर्ग बनाया गया है। इसी प्रकार 'सामान्य मनोविज्ञान' को पृथक् करके एक उपवर्ग बनाया गया है जिसे 'मनोविज्ञान का क्षेत्र' कहा गया है। ड्यूई महोदय ने 'दार्शनिक मतवाद' नामक एक उपवर्ग १४० के स्थान पर रखा था किन्तु कालान्तर में वह भ्रमोत्पादक सिद्ध हुआ। अतः अब १५वें संस्करण में उसे हटा दिया गया और तत्सम्बन्धी पुस्तकों को अंतिम दो उपवर्गों में सम्बन्धानुसार रखने की सिफारिश की गई। इस प्रकार दर्शन वर्ग के अन्तर्गत निम्नलिखित ८ ही उपवर्ग हो पाते हैं —

१०० दर्शन
११० तत्त्व विद्या
१२० तत्त्व विद्या के सिद्धान्त
१३० मनोविज्ञान का क्षेत्र
१५० मनोविज्ञान
१६० तर्क
१७० नीतिशास्त्र
१८० प्राच्य और प्राचीन दर्शन
१९० आधुनिक दर्शन

धर्म वर्ग

इस पद्धति में धर्म वर्ग का उपवर्ग बनाते समय 'नैसर्गिक धर्म' को प्रथम स्थान दिया गया है। उसके बाद व्यावहारिक धर्मों को दो भागों में विभाजित कर लिया गया है, ईसाई धर्म और गैर ईसाई धर्म। इनमें से ईसाई धर्म के लिए सात उपवर्ग सुरक्षित रखे गए हैं और गैर ईसाई धर्मों के लिए अन्त में एक 'उपवर्ग' बना दिया गया है। ईसाई धर्म के लिए जो सात उपवर्ग सुरक्षित किए गये हैं उनमें धर्म ग्रन्थ बाइबिल का एक, धर्मज्ञान (Theology) के चार और ईसाइ चर्चों के इतिहास का एक और ईसाई चर्च और सम्प्रदाय का एक उपवग बनाया गया है। इस प्रकार इस धर्म वर्ग के उपवर्गों की संख्या ९ हो जाती है, जिनकी स्थिति इस प्रकार है —

२०० धर्म
२१० नैसर्गिक धर्म
२२० बाइबिल
२३० सैद्धान्तिक धर्म ज्ञान
२४० भक्ति सम्बन्धी धर्म ज्ञान
२५० गुरु सम्बन्धी धर्म ज्ञान
२६० धर्मसंघ सम्बन्धी धर्म ज्ञान
२७० ईसाई चर्चों का इतिहास
२८० ईसाई चर्च और सम्प्रदाय
२९० गैर-ईसाई धर्म

समाज-विज्ञान

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। जब वह समाज बना कर रहने लगता है तो उस समाज को सुव्यवस्थित रूप से चलाने के लिए जिन तत्त्वों की आवश्यकता होती है उनको दृष्टि में रख कर इस वर्ग के निम्नलिखित ९ उपवर्ग बनाये गए हैं —

३०० *समाज विज्ञान*
३१० सगणा तत्त्व (सांख्यिकी)
३२० राजनीति
३३० अर्थशास्त्र
३४० कानून

३५० जन प्रशासन
३६० समाज कल्याण
३७० शिक्षा
३८० वाणिज्य
३९० प्रथाएँ

भाषा-शास्त्र

भाषा व्यक्तियों के विचारों के आदान प्रदान का मुख्य साधन है। देश, काल और परिस्थिति के अनुसार इन भाषाओं का उद्गम और विकास होता रहा है। इस शास्त्र के अन्तर्गत कुछ तत्वों के आधार पर भाषाओं के सम्बन्ध में भाषाविज्ञान वेत्ता अनुसंधान करके उनका पारिवारिक वर्गीकरण करते हैं। वे किन्हीं तत्वों के आधार पर भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन भी करते हैं। तदनुसार इस 'भाषा-शास्त्र' नामक वर्ग में उपवर्ग बनाते समय 'तुलनात्मक भाषा शास्त्र' का एक उपवर्ग बनाया गया है जिसके उपविभाजन में उन तत्वों को रखा गया है जिनके आधार पर तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। उसके बाद भाषाओं के पारिवारिक वर्गीकरण को ध्यान में रख कर 'सात उपवर्ग' इण्डोयोरोपियन परिवार की ट्युटानिक शाखा की इंगलिश जर्मन, फ्रेंच, इटैलियन, स्पेनिश, लैटिन और ग्रीक इन सात प्रमुख भाषाओं तथा इनसे सम्बन्धित भाषाओं के लिए सुरक्षित कर लिया गया है और सबसे अन्त में 'अन्य भाषाओं का' का एक वर्ग बना दिया गया है। इस प्रकार इस वर्ग के उपवर्गों की स्थिति निम्नलिखित है —

४०० भाषाशास्त्र
४१० तुलनात्मक भाषाशास्त्र
४२० अंग्रेजी भाषा
४३० जर्मन, जर्मनिक भाषाएँ
४४० फ्रेंच, प्रोवेंकल
४५० इटैलियन, रूमानियन
४६० स्पेनिश, पुर्तगाली
४७० लैटिन अन्य इटैलिक
४८० ग्रीक अन्य हेलेनिक
४९० अन्य भाषाएँ

शुद्ध-विज्ञान

इस पद्धति में विज्ञान को एक व्यापक अर्थ में लिया गया है और अगले वर्ग से इसको पृथक् करने के लिए इसे 'शुद्ध विज्ञान' कहा गया है। इस प्रकार गणित, ज्योतिष आदि विषय भी इस वर्ग के अन्तर्गत आ गए हैं। इस वर्ग का उपवर्गों में विभाजन इस प्रकार किया गया —

५०० शुद्ध विज्ञान
५१० गणित
५२० ज्योतिष
५३० भौतिक विज्ञान
५४० रसायन
५५० भूविज्ञान
५६० प्रत्नजीव विज्ञान (पेलिओन्टोलोजी)
५७० जीव विज्ञान
५८० वनस्पति विज्ञान
५९० जन्तु विज्ञान

व्यावहारिक-विज्ञान

इस वर्ग में विज्ञान के उन पक्षों को रखा गया है जो कलाओं के रूप में हैं किन्तु उनमें विज्ञान का पुट है। इसी लिए ड्युई महोदय ने प्रारम्भ में इस वर्ग का नाम 'उपयोग कला' रखा था। इसके अन्तर्गत चिकित्सा, इञ्जीनियरिङ्, कृषि तथा भवन निर्माण आदि महत्त्वपूर्ण विषयों का समावेश किया गया है। इस वर्ग का उपवर्गों में विभाजन इस प्रकार है —

६०० व्यावहारिक विज्ञान
६१० चिकित्सा
६२० इन्जीनियरिंग
६३० कृषि
६४० गृह अर्थशास्त्र
६५० व्यापार और व्यापार प्रणाली
६६० रासायनिक शिल्प
६७० उत्पादन (मैन्युफेक्चर)
६८० उत्पादन (जारी)
६९० भवन-निर्माण

यहाँ यह बात स्मरणीय है कि 'उत्पादन' से सम्बन्धित दो वर्गों को एक क्रम में रख कर सम्बन्धित विषयों में एकरूपता लाने का प्रयास किया गया है।

कलाएँ एवं मनोरंजन

इस वर्ग में कलाओं के नाम पर केवल उन विषयों को लिया गया है जिन्हें आजकल सामान्य रूप से 'ललित कला' कहा जाता है। ड्यूई महोदय ने इस वर्ग का नाम भी पहले यही रखा था। इस वर्ग का उपवर्ग बनाते समय ललित कलाओं के लिये आठ उपवर्ग सुरक्षित रखे गए हैं और अंतिम उपवर्ग 'मनोरंजन' का रखा गया है। इस प्रकार इस वर्ग के उपवर्ग निम्नलिखित हैं :—

७०० कलाएँ एवं मनोरंजन
७१० शोभन शिल्प
७२० स्थापत्य
७३० तक्षण
७४० अङ्कन विभूषण कला
७५० चित्र कला
७६० छाप (प्रिंट)
७७० फोटोग्रैफी
७८० संगीत
७९० मनोरंजन

साहित्य

इस पद्धति का यह एक महत्त्वपूर्ण वर्ग है। यहाँ तक कि 'भाषाशास्त्र' वर्ग भी विस्तृत अर्थ में इसी वर्ग के अन्तर्गत आता है। भाषा और साहित्य का सम्बन्ध होने के कारण इस वर्ग की सेटिंग 'भाषाशास्त्र' वर्ग के क्रम पर उसी के समानान्तर रूप में की गई है। इस वर्ग के उपवर्गों का विभाजन भाषाओं के क्रम से किया गया है। उपवर्ग इस प्रकार बनाए गए हैं —

८०० साहित्य
८१० अमेरिकन साहित्य
८२० अंग्रेजी साहित्य
८३० जर्मन और अन्य जर्मनिक साहित्य
८४० फ्रेंच, प्रोवेंकल, कैटेलन साहित्य
८५० इटैलियन, रूमानियन, रोमांस साहित्य

८६० स्पेनिश और पुर्तगाली साहित्य
८७० लेटिन और अन्य इटैलिक साहित्य
८८० ग्रीक और हेलेनिक समूह साहित्य
८९० अन्य भाषाओं का साहित्य

उपर्युक्त उपवर्गों की तुलना यदि 'भाषाशास्त्र' के उपवर्गों से करें तो एक ही असमानता दिखाई देगी। 'भाषाशास्त्र' के वर्ग में जहाँ प्रथम उपवर्ग 'तुलनात्मक भाषाशास्त्र' का है वहाँ साहित्य वर्ग में प्रथम उपवर्ग 'अमेरिकन साहित्य' का है। यह ड्यूई महोदय के राष्ट्र प्रेम का द्योतक है किन्तु इससे इस पद्धति में एकरूपता भी कायम रह सकी है। इस साहित्य वर्ग में साहित्य के रूपों का विभाजन और उनका पुनर्विभाजन 'रूप विभाग' की व्याख्या में दिखाया जा चुका है।

इतिहास वर्ग

यद्यपि इस वर्ग का शीर्षक 'इतिहास वर्ग' है किन्तु इसके अन्तर्गत भूगोल और जीवनी को भी ले लिया गया है। इस प्रकार भूगोल का एक, जीवनी का एक और इतिहास के सात उपवर्गों से मिल कर 'इतिहास वर्ग' बना हुआ है। इन सात उपवर्गों में 'प्राचीन विश्व का इतिहास' का एक उपवर्ग है। उसके बाद योरप, एशिया, अफ्रीका, उत्तरी अमेरिका [illegible] दक्षिणी अमेरिका इन पाँच महाद्वीपों के क्रमश उपवर्ग बनाए गए हैं [illegible] अंत में 'सागर प्रदेश तथा ध्रुव प्रदेशों के इतिहास' का एक अलग वर्ग [illegible] कर ९ उपवर्गों की पूर्ति कर ली गई है। इस प्रकार इतिहास वर्ग के [illegible] निम्नलिखित हो जाते हैं —

९०० इतिहास
९१० भूगोल
९२० जीवनी
९३० प्राचीन विश्व का इतिहास
९४० योरोपीय इतिहास
९५० एशिया का इतिहास
९६० अफ्रीका का इतिहास
९७० उत्तरी अमेरिका का इतिहास

९८० दक्षिणी अमेरिका का इतिहास
९९० सागर प्रदेश तथा ध्रुवप्रदेश का इतिहास

भूगोल के अन्तर्गत भ्रमण एवं यात्रा साहित्य भी सम्मिलित है।

उपवर्गों के विभाजन की सामान्य रीति

प्रत्येक मुख्य वर्ग में ९ उपवर्ग बना लेने पर पुनः उनको और ९ विभागों में विभाजित किया जा सकता है और फिर उससे आगे उसके ९ उपविभाग और किये जा सकते हैं और इसी प्रकार आगे भी आवश्यकतानुसार विभाजन किया जा सकता है।

जैसे :—

३०० समाज विज्ञान
३१० संख्यातत्त्व
३२० राजनीति विज्ञान
३३० अर्थशास्त्र
३४० कानून
३५ जनप्रशासन
३६० समाज कल्याण
३७० शिक्षा
३८० वाणिज्य
३९० प्रथायें रीतियाँ
३७० *शिक्षा*
३७१ अध्यापन
३७२ प्राथमिक शिक्षा
३७३ माध्यमिक शिक्षा
३७४ प्रौढ़ शिक्षा
३७५ पाठ्यक्रम, अध्ययन का क्षेत्र
३७६ स्त्री शिक्षा
३७७ धार्मिक और नैतिक शिक्षा
३७८ कालेज और विश्वविद्यालय शिक्षा
३७९ शिक्षा और राष्ट्र

३७१ अध्यापन
१ अध्यापन और प्रशासकीय कर्तृगण
२ स्कूल संगठन और संचालन
३ अध्यापन विधि
४ शिक्षा का विशेष पहलू
५ स्कूल गवर्नमेंट और प्रबंध
६ स्कूल-योजना
७ स्कूल स्वास्थ्य (शारीरिक और स्वास्थ्य-शिक्षा सहित)
८ विद्यार्थी जीवन और अतिरिक्त क्रियाकलाप
९ असाधारण विद्यार्थियों के लिए विशेष शिक्षा
३७१ २ स्कूल संगठन और संचालन
२१ प्रवेश-दाखिला
२२ ट्यूशन
२३ स्कूल वर्ष का संगठन
२४ छात्रसमुदाय का संगठन
२५ शैक्षिक जाँच और मापदण्ड
२७ परीक्षाएँ
२८ पदोन्नति, तरक्की इत्यादि

इस प्रकार से विभाजन करते समय भाषा शास्त्र, साहित्य और इतिहास के उपवर्गों के विभाजन में कुछ विशेष दृष्टिकोण अपनाया गया है।

भाषा शास्त्र में भाषानुसार विभाजित करके उपवर्ग बनाये गये हैं उनके विभाजन में निम्नलिखित फार्मूला लागू किया गया है —

भाषा	४२० अंग्रेजी भाषा
१ लिपि	४२१ लिपि
२ व्युत्पत्ति	४२२ व्युत्पत्ति
३ कोश	४२३ कोश
४ पर्यायवाची, अनेकार्थवाची, नानार्थक कोश	४२४ पर्यायवाची, अनेकार्थवाची, नानार्थक कोश
५ व्याकरण	४२५ व्याकरण
७ उपभाषाएँ	४२७ उपभाषाएँ
८ भाषा विशेष सीखने की पुस्तकें	४२८ अंग्रेजी भाषा सीखने की पुस्तकें
	४२९ ऐंग्लो सैक्सन

इस प्रकार ४२० 'अंग्रेजी भाषा' का विभाजन करके उसी भाँति अन्य उपवर्गों के विभाजन का निर्देश किया गया है। किन्तु अन्तिम उपवग का (अन्य भाषाओं का) पहले भाषानुसार विभाजन करके तत्पश्चात् यह फार्मूला लागू किया जाता है।

जैसे —

४९० अन्य भाषाएँ
४९१ इण्डायोरोपियन भाषाएँ, इन्डोहिट्टाइट
४९२ सेमेटिक भाषाएँ
४९३ हेमेटिक भाषाएँ
४९४ द्रुग्रुजिक, मंगोलिक, टर्किक, सेम्यायद फिनोउग्रिक और हाइप्रेबोरियन भाषाएँ
४९५ सिनोतिब्बती, जापानीकोरियन, आस्ट्रोएशियाटिक भाषाएँ
४९६ अफ्रीका को भाषाएँ
४९७ उत्तरी अमेरिका की भाषाएँ
४९८ दक्षिणी अमेरिका की भाषाएँ
४९९ आस्ट्रोनेशियन भाषाएँ

४९१·२ संस्कृत भाषा
२१ संस्कृत लिपि
२२ संस्कृत व्युत्पत्ति
२३ संस्कृत कोश
२४ संस्कृत पर्यायवाची, अनेकार्थवाची, नानार्थक कोश
२५ संस्कृत व्याकरण
२७ संस्कृत उपभाषाएँ
२८ संस्कृत भाषा विशेष सीखने की पुस्तकें

ड्युई महोदय ने साहित्य वर्ग को पहले भाषा के द्वारा विभाजित किया है और उसके बाद उसमें काव्य, नाटक इत्यादि रूपों के द्वारा उसका विभाजन किया है और अंत में काल क्रम से उपविभाजन। इस प्रकार अंतिम विभाजन में सुप्रसिद्ध लेखकों को निश्चित स्थान दिए गये हैं और अन्य लेखकों को निम्नकोटि के लेखकों के वर्ग के अन्तगत रखा गया है।

जैसे —

८०० साहित्य सामान्य
८२० अंग्रेजी साहित्य
८२१ अंग्रेजी काव्य
८२२ अंग्रेजी नाटक
८२३ अंग्रेजी कथा-साहित्य
८२४ अंग्रेजी निबंध
८२५ अंग्रेजी वक्तृता
८२६ अंग्रेजी पत्र-साहित्य
८२७ अंग्रेजी हास्य-व्यंग्य
८२८ अंग्रेजी विविध
८२९ ऐंग्लो-सैक्सन साहित्य
८२१ अंग्रेजी काव्य

१	पूर्वकालीन अंग्रेजी काव्य	(१०६६ १४००)
२	पूर्व एलिजाबेथ	(१४०१ १५५८)
३	एलिजाबेथ-काल	(१५५९ १६२५)
४	एलिजाबेथोत्तरकाल	(१६२६ १७०२)
५	क्वीन एने	(१७०३ १७४७)
६	१८वीं शताब्दी के बाद	(१७४८ १८००)
७	उन्नीसवीं शताब्दी का प्रारम्भकाल	(१८०१ १८३७)
८	विक्टोरिया काल	(१८३८ १९००)
९	बीसवीं शताब्दी	(१९०१-)

इस प्रकार 'रूप विभाजन' का यह फार्मूला निश्चित किया गया है।

१ काव्य	५ वक्तृता
२ नाटक	६ पत्रसाहित्य
३ कथा साहित्य	७ हास्य, व्यंग्य
४ निबंध	८ विविध

६वें उपवर्ग का विभाजन पहले भाषाओं के अनुसार करके तब यह फार्मूला लागू होता है।

जैसे :—

८९० *अन्य भाषाओं का साहित्य*

८९१ इण्डोयोरोपियन साहित्य इण्डोहिट्टाइट साहित्य

८९१ १ संस्कृत साहित्य

११ संस्कृत काव्य

विस्तारशीलता के आधार

इस पद्धति में डयुई महोदय ने विस्तारशीलता लाने के लिए निम्न लिखित विधियों का प्रयोग किया है —

(१) सामान्य विभाजन या रूप विभाजन
(२) भाषानुसार विभाजन
(३) भौगोलिक विभाजन
(४) शैली विभाजन

सामान्य विभाजन

जैसा कि पीछे बताया गया है इस पद्धति में ०१ से ०९ तक सामान्य विभाजन के लिये प्रतीक अंक निश्चित किये गये हैं।

विभाजन के सामान्य रूप

०१ दर्शन, सिद्धान्त
०२ रूपरेखा, हैण्डबुक, डाइजेस्ट, सेलेबस मैनुअल
०३ कोश, विश्वकोश
०४ निबन्ध, भाषण,
०५ पत्रिका
०५८ डाइरेक्टरी, अब्दकोश (ईयर बुक)
०६ सभा, समिति, रिपोर्ट, नियम, सदस्यों की सूची आदि
०६१ सरकारी संगठन
०६२ गैर सरकारी संगठन
०६३ कान्फ्रेंस, अस्थायी संगठन
०६५ व्यापारिक संस्था
०६९ पेशा
०७ शिक्षा, अध्ययन

०७२ खोज, परीक्षण,
०७४ म्यूजियम, प्रदर्शनी
०७९ पुरस्कार
०८ संग्रह
०८१ एक लेखक का संगृहीत लेख
०८२ अनेक लेखकों के संगृहीत लेख
०८४ चित्रात्मक प्रतिनिधित्व या प्रदर्शन, (एटलस, चार्ट, प्लेट आदि)
०९ इतिहास और साधारण स्थानीय व्यवहार (इसका विभाजन ९१०—९९९ की भाँति भी किया जा सकता है)
०९२ जीवनी

ये आवश्यकतानुसार सभी मुख्य भागों के साथ लगाए जा सकते हैं।

जैसे —

३३० अर्थशास्त्र + ०१ सिद्धान्त=३३० १ आर्थिक सिद्धान्त

३२० राजनीति विज्ञान + ०९ इतिहास=३२० ९=राजनीतिविज्ञान का इतिहास

१८१ प्राच्य दर्शन + ०४ भाषण=१८१ ०४=प्राच्य दर्शन पर भाषण

इस प्रकार इन सामान्य विभाजनों से प्रत्येक विषय, उपविषय और विषयांशों से सम्बन्धित प्रत्येक अध्ययन सामग्री यथास्थान पहुँच जाता है। इन प्रतीकों को जोड़ते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि यदि दशमलव के दोनों ओर शून्य हो तो दाहिना ओर का शून्य हटा दिया जाता है जैसा कि ऊपर ३३० १ और ३२०९ में किया गया है। यदि बाईं ओर दो शून्य (००) हों और दाहिनी ओर भी एक शून्य हो तो बाईं ओर का एक शून्य और दाहिनी ओर का शून्य दशमलव सहित हट जाता है।

जैसे —

४०० भाषा शास्त्र + ०१ सिद्धान्त=४०१ भाषा शास्त्र सिद्धान्त

कहीं-कहीं पर इन्हीं ०१ से ०९ की संख्याओं को सामान्य विभाजन के प्रतीक से भिन्न रूप में भी उपयोग में ले लिया गया है। ऐसे स्थलों पर सामान्य विभाजन के लिए अन्य प्रकार की व्यवस्था का निर्देश किया गया है।

जैसे :—

(क) ६२० ०२ परिभाषा और व्यय
०३ संविदा और स्पष्टीकरण
०४ रूपरेखा और खाका
०७ नियम और उपनियम
०९ रिपोर्ट

(ख) ८२१ अंग्रेजी काव्य
०२ नाटकीय कविता
०३ रोमाटिक और महाकाव्य
०३ गीत, वैलेड्स
०५ उपदेशात्मक
६ वर्णनात्मक
०७ हास्यात्मक एवं व्यंग्यात्मक

'ख' में ये अंक काव्य के प्रकार सूचक हैं और इसमें इनका उपयोग किया गया है।

इतिहास वर्ग में देशों के इतिहास को काल-क्रम से सूचित करने के लिए भी ०१— ०९ का प्रयोग प्राय: किया गया है।

जैसे —

९४२ इगलैंड
१ ऐंग्लोसेक्सन इंगलैंड, १ ६६ तक
९५४ भारत
०८ ब्रिटिश भारत १७६५ १९४७
०९ भारत गणतन्त्र १९४७—

ऐसे स्थानों पर एक शून्य ० और बढ़ा कर 'रूप विभाजन' किया जाता है। जैसे—इंगलैंड सम्बन्धी इतिहास की पत्रिका ९४२ ००५

लेकिन चाहे जिस रूप में हेर फेर करके इनका उपयोग किया गया है पद्धति की विस्तारशीलता में वृद्धि हुई है।

भाषानुसार विभाजन

इस पद्धति में 'भाषा शास्त्र' नामक जो वर्ग है उसमें भाषाओं का एक वैज्ञानिक क्रम रखा गया है। इस क्रम का उपयोग भी इस पद्धति में

विस्तारशीलता लाने के लिए किया गया है। इसका निर्देश पद्धति में भी यथास्थान कर दिया गया है।
जैसे —

०३९ अन्य विश्वकोश
०३९.९५६ जापानी विश्वकोश

यहाँ पर ९५६ जापानी भाषा का सूचक है और ०३९ विश्वकोश के साथ जुड़ने से इसका अर्थ हुआ अन्य भाषाओं के विश्वकोश के अन्तर्गत जापानी भाषा का विश्वकोश।

नोट—'भाषा शास्त्र' के वर्ग में जापानी भाषा का प्रतीक अंक ४९५.६ है। इस अंक को ०३९ के साथ जोड़नेपर ०३९.४९५६ होता है। दशमलव ९ के बाद लगा है अत ६ के पहले का दशमलव हटा दिया गया है। साथ ही चूँकि भाषानुसार विभाजन का निर्देश पद्धतिकार ने कर दिया है अत भाषाशास्त्र वर्ग का सूचक ४ का अंक भी नहीं रखना पड़ता। इस प्रकार केवल ९५६ लिख देने से जापानी भाषा का बोध हो जाता है।

इसी प्रकार २४५.२ अंग्रेजी में बाइबिल के पदों का समूह

यहाँ पर २४५ समगान+२ अंग्रेजी भाषा का वाचक है। भाषानुसार अंग्रेजा को प्रतीक संख्या ४२० है किन्तु चूंकि पद्धतिकार ने २४५ का उप विभाजन भाषानुसार करने का निर्देश किया है, अत ४ का अंक आवश्यक नहीं है और दशमलव के बाद के लगे अंकों के अंत में शून्य का कोई महत्त्व नहीं होता। अत केवल २ का अंक दशमलव के बाद लगाया जायगा।

देशानुसार विभाजन

इस पद्धति में ९४० से ९९९ तक भौगोलिक क्रम से आधुनिक ऐतिहासिक सामग्री रखने की व्यवस्था की गई है। ९३० से ९३९ तक को विश्व के प्राचीन इतिहास के लिए रखा गया है। इसी क्रम पर उपविभाजन का निर्देश इस पद्धति में अनेक स्थलों पर किया गया है। जहाँ ऐसा उपविभाजन आवश्यक और अभीष्ट है, वहाँ '९३०–९९९ की भाँति देशानुसार विभाजन कीजिए', '९४०–९९९ की भाँति देशानुसार विभाजन कीजिए' ऐसे संकेत कर दिए गए हैं।

जैसे —

३२९.९ अन्य देशों में राजनीतिक दल
'इसका विभाजन ९४०—९९९ की भाँति देशानुसार कीजिए'

उदाहरण :—

(i) फ्रांस में राजनीतिक दल ३२९ ९४४

फ्रांस का देशानुसार प्रतीक ९४४ है किन्तु चूंकि देशानुसार विभाजन का निर्देश किया गया है, अत वर्ग सूचक ९ का अंक छोड़ दिया गया केवल ४४ जोड़ दिया गया। दशमलव पहले से मौजूद है, अत' दशमलव लगा कर जोड़ने की जरूरत नहीं है। इसी प्रकार—

(ii) चीनी समाचार-पत्र	०७९५१
(iii) डच दर्शन	१९९४९२
(iv) बेलजियम में प्रकाशित पुस्तकें	०१५'४९३
(v) स्काटलैण्ड में धर्म का इतिहास	२७४'१
(vi) भारत में निर्वाचन मताधिकार	३२४'५४

नोट—जिन देशों का प्रतीक अंक दशमलव के बाद पड़ता है उनका दशमलव हटा कर केवल अङ्क जोड़ दिए जाते हैं, जैसा कि भाषानुसार वर्गीकरण में ०२९ ९५६ में बताया गया है। ऐसा ही सभी स्थलों पर ध्यान रखना चाहिए।

जैसे :—

आस्ट्रिया में राजनीतिक दल	३२० ९४३६
पोलैण्ड में ,,	३२० ९४३८

यहाँ पर आस्ट्रिया और पोलैण्ड के प्रतीक अंक क्रमश' ९४३ ६, ९४३ ८ क्रमश जोड़ दिए गए हैं।

देशानुसार विस्तार के लिए ऐसे निर्देश दशमलव पद्धति में अनेक स्थलों पर किए गए हैं।

इस पद्धति में इतिहास वर्ग में ९४० से ९९९ तक भौगोलिक आधार पर देशों का विभाजन किया गया है। यहाँ पर प्रत्येक महाद्वीप और उनके अन्तर्गत देशों का विभाजन करके उनको प्रतीक संख्या दी गई है। इतिहास वर्ग में देशों के इतिहास को काल क्रम से भी विभाजित किया गया है। इस कार्य के लिए 'स्म विभाजन' के सामान्य प्रतीक अकों का उपयोग किया गया है।

जैसे :—

९४० यूरोप का इतिहास	*९४२ इंगलैण्ड*
९४१ स्काटलैण्ड	०१ ऐंग्लो-सेक्सन इंगलैंड १०६६ तक
९४२ इंगलैण्ड	०२ नार्मन के अन्तर्गत १०६७ ११५४
९४३ जर्मनी	०३ प्लेन्टेजनेट इंगलैण्ड ११५५ १३९९

९४४	फ्रांस	०४ लॉरिस्ट्स और यार्कस के अधीन इंगलैण्ड १४०० १४८५	
९४५	इटैली	०५ ट्युडर इंगलैण्ड १४८६ १६०३	
९४६	स्पेन	०६ स्टुअर्ट के अधीन १६०४ १७१४	
९४७	सोवियट सोशलिस्ट रिपब्लिक संघ(यूरोपीय भाग)	०७ हैनोवेरियन इंगलैंड १७१५ १८३७	
९४८	स्कैण्डेनेविया	०८ विक्टोरियन इंगलैण्ड १८३८ १९००	
९४९	अन्य योरोपीय देश	०८२ बीसवीं शती १९०१	

जीवनी

इतिहास वर्ग में 'जीवनी' विषयक पुस्तकों के वर्गीकरण की ३ विधियाँ बताई गई हैं —

१ जीवनी-संग्रह को ९२० में रखा जाय और व्यक्तिगत जीवनी की पुस्तकों को ९२ या B चिह्न द्वारा अलग वर्गीकृत करके रखा जाय।

२ जीवनी-संग्रह विषयक पुस्तकों का 'वर्गीकरण पद्धति' की पूरी सारणी के अनुसार यदि आवश्यक हो तो विषयानुसार विभाजित करके रखा जाय जैसे साहित्यिकों की जीवनी ९२८, कवियों की जीवनी ९२८ १।

३ विशेष विषय के पुस्तकालयों में तत्सम्बन्धी जीवनी ०९२ जोड़ कर विषय के साथ ही रखी जाय। जैसे ५२० ९२ गणितज्ञों की जीवनी।

सापेक्ष-सूची

टेबुल के अन्त में सम्पूर्ण शीर्षकों की एक अनुक्रमणिका दी हुई है। यह वर्ग संख्या के द्वारा सारणी में प्रत्येक के ठीक स्थान का हवाला देती है। इस अनुक्रमणिका में सारणी के पदों के पर्यायवाची तथा अन्य बहु संख्यक संकेत दिए गए हैं जिनसे वर्गकार को अपना विषय ढूँढने में सुविधा और सरलता होती है। अगर वर्गकार यह जानना चाहे कि अमुक विषय के लिए सारणी में कहाँ देखें तो उसका निर्देश इस अनुक्रमणिका को देखने से मिल जाता है। इस प्रकार वह वर्गकार उस विषय से सम्बन्धित एक ऐसे विस्तृत स्थान पर पहुँच जाता है जहाँ उसका कार्य अधिक सरल हो जाता है।

समीक्षा

दशमलव वर्गीकरण पद्धति का प्रचार और उपयोग लगातार बहुत से पुस्तकालयों में बहुत वर्षों से होता रहा है। इस कारण इसकी बहुत सी त्रुटियाँ भी प्रकाश में आईं। उनको लेकर आलोचनाएँ और प्रत्यालोचनाएँ हुई। इस प्रकार यह पद्धति अन्य सभी पद्धतियों से अधिक आलोचना का विषय रही है। ड्युई दशमलव पद्धति के समर्थकों के अनुसार इस पद्धति में निम्नलिखित गुण हैं —

(१) इस पद्धति ने सबसे पहले पुस्तकों के क्रम-बद्ध वर्गीकरण के लाभ एवं गुणकारिता को बतलाया।

(२) यह ऐसे समय प्रकाशित हुई जब कि पुस्तकों के सूक्ष्म (Close) वर्गीकरण के लिए चर्चा चल पड़ी थी। पुस्तकालयों में मुक्तद्वार प्रणाली (Open Access) की कल्पना भी होने लगी थी जिसमें क्रमबद्ध वर्गीकरण का होना आवश्यक था। इन कारणों से इसको सफलता मिली।

(३) इसका समय-समय पर विशेषज्ञ विद्वानों द्वारा संशोधन करके विस्तार किया जाता रहा जिससे ज्ञान विज्ञान की नवीनतम शाखाओं और प्रशाखाओं से सम्बन्धित पुस्तकों के स्थान निर्धारण के लिए सुविधा होती रही। इस प्रकार यह पद्धति आधुनिक बनी रही।

(४) इस पद्धति में ही सर्वप्रथम दशमलव का उपयोग प्रतीक के रूप में किया गया। स्मरणशीलता के सिद्धान्तों का पूर्ण प्रयोग किया गया और पुस्तक-वर्गीकरण की पद्धति में एक सापेक्ष-सूची को परिशिष्ट के रूप में लगाया गया।

(५) यह सरल रूप में उपयोगार्ह एवं सुसंगठित रूप में प्रकाशित प्रथम प्रणाली थी।

(६) इस पद्धति का आधार 'एमहर्स्ट कालेज लाइब्रेरी' का संग्रह था। अतः यह पद्धति विषयों के अनुभव पर अधिक आधारित है।

(७) इस पद्धति को सफल बनाने में इसके प्रतीक ने बहुत योगदान दिया है। अङ्कों का प्रतीक सरल और व्यावहारिक होने के कारण सर्वप्रिय और मान्य हुआ है।

(८) प्रत्येक मुख्य वर्ग को ९ भागों में तथा प्रत्येक विभाग को ९ उप विभागों में विभाजन का क्रम उपहासास्पद होते हुए भी पद्धति में एकरूपता पैदा करता है।

(६) इस पद्धति की सफलता का सबसे बड़ा कारण यह है कि एक बुद्धिमान लाइब्रेरियन बहुत सरलतापूर्वक इस पद्धति में अपने पुस्तकालय की या समुदाय की आवश्यकता के अनुसार सुधार एवं संशोधन कर सकता है।

दोष

दशमलव-वर्गीकरण पद्धति के आलोचकों का कथन है कि इस पद्धति में निम्नलिखित दोष है —

(१) यह सैद्धान्तिक दृष्टि से अपूर्ण है।

(२) इसमें अमेरिकन पक्षपात अत्यधिक है।

(३) इसमें ज्ञान की नवीन खोजों पर लिखित सामग्री को समाविष्ट करने का सामर्थ्य नहीं है।

(४) इसमें भाषाओं के आधार पर वर्ग विभाजन एकाङ्गी हो गया है। फलतः कुछ इण्डोयोरोपीय भाषाओं को छोड़ कर शेष भाषाओं के साथ घोर अन्याय हो गया है।

(५) इस पद्धति के कुछ प्रसिद्ध आलोचकों के मत इस प्रकार हैं —

(I) श्री० ई० सी० रिचार्डसन महोदय लिखते हैं —

"परिवर्तित अवस्थाओं के अनुसार यथाकाल व्यवस्था कर सकने के अयोग्य होने के कारण आज ड्यूई आधुनिक ज्ञान के सम्पर्क से बाहर है। जिन पुस्तकालयों में इसका उपयोग किया जाता है उनके संग्रह तथा माँग से भी इसका सम्बन्ध टूट गया है।"[१]

(II) पुस्तकालय विज्ञान के भारतीय आचार्य डा० रंगनाथन महोदय लिखते हैं —

"इस पद्धति में अमेरिकन पक्षपात अत्यधिक है। हम यदि इसकी समालोचना करने बैठें तो इसका तात्पर्य यह नहीं कि हम इसे तुच्छ सिद्ध करना चाहते हैं अथवा लोगों की दृष्टि में गिराना चाहते हैं। यह पद्धति सब की अग्रणी है किन्तु इसी कारण से यह स्वभावतः अव्यवहार्य हो गई है। इसका ढाँचा सीमित भित्ति पर अवलम्बित है। इसका अङ्कन पद्धति रूप से स्मृति सहायक नहीं है। ज्ञान के अत्यधिक बढ़ जाने से इसकी समावेशकता नष्ट हो चुकी है। इसके द्वारा किए जाने वाले भाषा शास्त्र और भूगोल के व्यवहार ने इसे और भी अयोग्य सिद्ध कर दिया है। इतना ही नहीं, विज्ञान

के निरूपण ने तो इसे किसी काम का नहीं रखा है। भारतीय शास्त्रों के विषय में इसके द्वारा किए जाने वाले तुच्छ व्यवहार ने तो इसे भारतीय पुस्तकालयों के लिए सर्वथा अयोग्य सिद्ध कर दिया है।

भारतीय शास्त्रों को इसमें बलात् प्रविष्ट करने का यह फल होता है कि यह एक प्रकार की खिचड़ी सी बन जाती है जिसमें नये पुराने की पहिचान ही असम्भव सी हो जाती है। साथ ही यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि जो विभिन्न पुस्तकालय अपनी नई पद्धतियों का आविष्कार करते हैं अथवा विद्यमान मानद्रलित पद्धतियों में मनमाना परिवर्तन करते हैं वे शीघ्र ही विपत्ति में फस जायेंगे। उनकी वही रूपरेखा पुस्तकालय के बढ़ जाने पर भी उसी प्रकार सन्तोषजनक काम करती रहेगी, यह कहा नहीं जा सकता। इस लिए उचित मार्ग तो यह है कि जो पद्धति सुपरीक्षित तथा सुप्रमाणित हो, जिसमें नए नए आविष्कृत विषयों को समाविष्ट करने की अनेक युक्तियाँ विद्यमान हों तथा जिसमें उचित समावेशक्षमता हो उसी का उपयोग करना चाहिए।"

(III) हेनरी एव्लिन ब्लिस इसकी समीक्षा करते हुए लिखते हैं — "निर्माण और कार्य दोनों दृष्टियों से दशमलव पद्धति अयोग्य सिद्ध हो चुकी है। इसमें स्वाभाविक, वैज्ञानिक, न्यायप्राप्त और शिक्षणात्मक क्रमों की कोई व्यवस्था नहीं है। इसमें वर्गीकरण के मौलिक न्यायों को समान रूप से उपयोग किए जाने का कोई लक्षण दृष्टिगोचर नहीं होता। विशिष्ट विषयों के आधुनिक साहित्य को वर्गीकृत करने में यह सर्वथा असमर्थ है। लोग यह कहते हैं कि न केवल पुस्तकाध्यक्षों में, बल्कि वैज्ञानिकों में, तथा व्यापारियों में भी इसका पर्याप्त प्रचार है किन्तु इससे उसके गुणयुक्त होने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। इसका जो कुछ भी प्रचार हो गया है, इसका एक मात्र कारण यह है कि उन उपयोगकर्त्ताओं के सामने और कोई पद्धति उपस्थित न थी। यह एक अप्रचलित, अत्यन्त प्राचीन और यथाकाल व्यवस्था करने के अयोग्य वस्तु है और आज इसका किसी भी प्रकार पुनर्निर्माण नहीं किया जा सकता"।

(२) विस्तारशील वर्गीकरण प्रणाली

श्री चार्ल्स ए० कटर (१८३७-१९०३) बोस्टन एथेनियम पुस्तकालय के पुस्तकालयाध्यक्ष थे। उस समय वहाँ १,७०,००० ग्रंथों का संग्रह था। दशमलव वर्गीकरण प्रणाली में अनेक कमियों का अनुभव करके उन्होंने

१८९१ ई० में अपनी एक नई प्रणाली प्रस्तुत की जिसे विस्तारशील वर्गीकरण प्रणाली या 'इक्सपैंसिव क्लैसीफिकेशन स्कीम' कहा जाता है। श्री कटर महोदय का यह विचार था कि कम या अधिक रूप में संग्रह के अनुरूप वर्गीकरण की विस्तृत प्रणाली की आवश्यकता पुस्तकालयों को पड़ती है क्योंकि पुस्तकों का संग्रह का अनुगमन नहीं कर पाती तो वह अपने उद्देश्य में असफल रहती है। इस विचार को ध्यान में रखते हुए कटर महोदय ने स्वनिर्मित वर्गीकरण को सात भिन्न सारणियों में प्रकाशित किया जिससे छोटे से छोटे पुस्तकालय प्रथम सारणी को अपनाने के बाद संग्रह की वृद्धि होने पर आवश्यकतानुसार क्रमशः अन्य सारणियों को अपनाते जायँ। इस पद्धति का कुछ संशोधनों सहित प्रयोग अमेरिका की २४ और ब्रिटेन की एक लाइब्रेरी में हो रहा है।

रूपरेखा

इस पद्धति में विषयों की प्रतीक व्यवस्था अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षरों पर आधारित है। इसके प्रथम वर्गीकरण में निम्नलिखित मुख्य आठ वर्ग हैं —

A सदर्भ कृतियाँ और सामान्य कृतियाँ
B दर्शन और धर्म
E ऐतिहासिक विज्ञान
H सामाजिक विज्ञान
L विज्ञान और कलाएँ, उपयोगी और ललित
X भाषा
Y साहित्य
YF कथा साहित्य

ऐतिहासिक विज्ञान को तीन उपवर्गों में विभाजित किया गया है —

E जीवनी
F इतिहास
G भूगोल और भ्रमण

पंचम वर्गीकरण में प्रथम बार अंग्रेजी वर्णमाला के समस्त अक्षरों को प्रतीक संख्या के रूप में प्रयुक्त किया गया है :—

A सामान्य कृतियाँ
B दर्शन और धर्म

C ईसाई और यहूदी धर्म
D ऐतिहासिक विज्ञान
E जीवनी
F इतिहास
G भूगोल और भ्रमण
H सामाजिक विज्ञान
I समाजशास्त्र
J नागरिकशास्त्र, सरकार आदि
K विधि
L विज्ञान और कलाएँ
M प्राकृतिक इतिहास
N वनस्पति विज्ञान
O जीवविज्ञान
P प्राणिविज्ञान
Q औषधि
R उपयोगी-कलाएँ, टेक्नोलोजी
S रचनात्मक कलाएँ, इंजीनियरिंग और बिल्डिंग
T तन्तु शिल्प, हस्तशिल्प और मशीन निर्मित
U युद्धकला
V व्यायाम, मनोरंजन, कलाएं
W कला, ललित कला
X भाषा द्वारा आदान प्रदान की कला
Y साहित्य
Z पुस्तक-कलाएँ

इसकी सातवीं सारणी सबसे बड़ी और भि' 'इसमें बड़े टाइप के अक्षरों के साथ छोटे टाइप के अक्षरों को य] के उप विभाग किये ग न्यूनतम विभाजन किया गया है।

प्रतो

कर

अक्षरों के रूप में है।

जैसे —

W	*कला, ललित कला*
Ww	फर्नीचर
Wwb	शय्या
Wwc	केबिनेट
Wwch	कुर्सियाँ
Wwd	घड़ियाँ

रूप विभाजन

१ सिद्धान्त
२ बिब्लियोग्रेफी
३ जीवनी
४ इतिहास
५ कोश
६ हैण्डबुक आदि
७ पत्रिकाएं
८ सभा-समितियाँ
९ संग्रह

स्थानीय सूची

२१ आस्ट्रेलिया
२११ पश्चिमी आस्ट्रेलिया
२१६ न्यू साउथ वेल्स
३० यूरोप
३२ ग्रीस
५ इटली
९ फ्रांस
४० स्पेन
४५ इंगलैण्ड

वर्ग संख्या बनाना

इनका प्रयोग वर्ग संख्या के बनाने में इस प्रकार होता है —

E 45 इंगलैण्ड का इतिहास

G45 इंगलैण्ड का भूगोल

अनुक्रमणिका

प्रथम छः सारणियाँ अकारादि अनुक्रमणिका से युक्त हैं जिनमें विषयों से सम्बन्धित वर्गीकरण की सापेक्षिक प्रतीक संख्या दी हुई है।

समीक्षा

इस पद्धति की प्रशंसा रिचर्डसन, ब्राउन और ब्लिस जैसे वर्गीकरण के आचार्यों ने की है क्योंकि इसमें बिब्लियोग्रैफिकल वर्गीकरण की सम्भावनाएँ विद्यमान हैं। यदि कटर महोदय को अपनी अंतिम सारणी को पूरा करने का और पहले की सारणी का तुलनात्मक परिवर्द्धन एवं संशोधन करने का अवकाश मिला होता—जो उनके असामयिक निधन से न हो सका—तो सम्भवतः यह पद्धति-सर्वोत्तम और सर्वमान्य हो सकती। इसमें विस्तारशीलता संक्षिप्तता और सरलता के गुण पर्याप्त रूप में मिलते हैं जो किसी भी वर्गीकरण पद्धति को सार्वभौम बनाने के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं।

परिवर्द्धन और संशोधन न होने के कारण इन सारणियों का पुनः प्रकाशन न हो सका, जिससे प्रत्येक सारणी दूसरी सारणी से सर्वथा भिन्न है। अन्तिम सारणी तो एक भिन्न कृति ही है। अतः कटर महोदय का यह उद्देश्य है कि पुस्तकालय क्रमिक विकास के साथ साथ एक के बाद दूसरी सारणी को अपनाते जायँ, सफल नहीं हो सका।

(३) लाइब्रेरी आफ कांग्रेस वर्गीकरण पद्धति

लाइब्रेरी आफ कांग्रेस की स्थापना १८०० ई० में कांग्रेस के एक ऐक्ट के अन्तर्गत वैधानिक पुस्तकालय के रूप में हुई थी। १८९७ ई० तक यह अपने पुराने भवन 'कैपिटाल' में थी। तत्पश्चात् नए भवन में जिसका निर्माण वाशिंगटन में किया गया, लाई गई। यह संसार का सबसे बड़ा, सुसज्जित तथा बहुमूल्य भवन है। अनेक संघर्षों से गुजरने के बाद भी इसके संग्रह में शीघ्रतापूर्वक इतनी वृद्धि हुई और साथ ही साथ सेवा क्षेत्र भी इतना विस्तृत हो गया कि सम्पूर्ण संग्रह का पुनर्वर्गीकरण तत्कालीन अधिकारियों के लिए अनिवार्य-सा हो गया। १८९९ ई० में डा० हरबर्ट पुटनम प्रथम प्रशिक्षित पुस्तकालयाध्यक्ष नियुक्त किए गए। उनके सामने

२० लाख ग्रंथों के वर्गीकरण की समस्या थी विषय के आचार्यों और विशेषज्ञों की एक कमेटी बना कर उन्होंने इस कार्य को प्रारंभ किया। उस समय प्रचलित समस्त वर्गीकरण-पद्धतियों को ध्यान में रखते हुए समिति ने एक ऐसी पद्धति का निर्माण करना चाहा जो व्यावहारिक अधिक और सैद्धान्तिक कम हो, जिससे पुस्तकालय का अधिक से अधिक उपयोग किया जा सके। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए समिति ने पद्धति की सैद्धान्तिक पूर्णता की अपेक्षा उसकी उपयोगिता पर अधिक ध्यान दिया। साथ ही प्रतिपाद्य विषयों के भावी विकास की ओर भी समिति का पर्याप्त ध्यान था। भावी विकास योजना को कार्यान्वित करने के लिए उसने अंग्रेजी वर्णमाला के I O W X और Y अक्षरों को रूपरेखा में छोड़ रखा है।

रूपरेखा

इसके वर्गों की रूपरेखा इस प्रकार है —

A सामान्य कृतियाँ, विविध
B दर्शन, धर्म
C इतिहास, सहायक विज्ञान
D इतिहास, भूपरिमापन (अमेरिका को छोड़ कर)
E F अमेरिका
G भूगोल, मानवशास्त्र
H समाज विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र
J राजनीतिविज्ञान
K कानून
L शिक्षा
M संगीत
N ललित कला
P भाषा और साहित्य
Q विज्ञान
P औषधि
S कृषि, पौधे और पशु उद्योग
T टेक्नोलोजी
U सैनिकविज्ञान
V नौ विज्ञान
Z ग्रन्थविज्ञान और पुस्तकालय-विज्ञान

विषयों के अनुसार वर्गों के अन्तर्गत व्यवस्थापन के सामान्य सिद्धान्त साधारण रूप में इस प्रकार हैं —

(१) सामान्य रूप विभाजन, उदाहरणार्थ —पत्रिकाए, सभा-समितियाँ, संग्रह, कोश आदि
(२) सिद्धान्त, दर्शन
(३) इतिहास
(४) प्रामाणिक ग्रंथ
(५) कानून, नियम, राज्य सम्बन्ध
(६) शिक्षा, अध्ययन
(७) विशेष विषय और उनके उपविभाजन (जहाँ तक सम्भव हो तार्किक क्रम से सामान्य से विशेष की ओर)

प्रतीकसंख्या

इस पद्धति में प्रतीकसंख्या अंक और अक्षरों से मिश्रित है। वर्गों और उनके मुख्य विभाजनों के लिए एकहरे बड़े अक्षर और दोहरे बड़े अक्षरों का प्रयोग किया गया है। उनके विभाजनों और उपविभाजनों के लिए साधारण क्रम में अंकों का प्रयोग किया गया है।

Q *विज्ञान*	QC*भौतिकविज्ञान*
QA गणित	१ पत्रिकाएँ, सभा समिति आदि
QB खगोल विद्या	३ संग्रहीत कृतियाँ
QC भौतिकविज्ञान	५ कोश
	५१ शोधशाला
	५३ यन्त्र
	६१ सारणी
	७ इतिहास आदि
	७१ निबंध

इनके अतिरिक्त रूप विभाजन, भौगोलिक विभाजन भाषा और साहित्य तथा जीवनी के लिये पुनः अक्षरों और अंकों के आधार पर इस पद्धति के कुछ अपने सिद्धान्त हैं। ध्यान देने योग्य मुख्य बात यह है कि बीच बीच में

अङ्कों या अक्षरों के क्रम को छोड़ देने से भावी संभावित विकास को पर्याप्त स्थान दिया गया है किन्तु इस उद्देश्य की प्राप्ति में संक्षिप्तता के नियम का उल्लंघन स्वभावत हो गया है। वर्गसंख्या आवश्यकता से अधिक लम्बी हो गई है।

अनुक्रमणिका

प्रत्येक वर्ग की अपनी अलग स्वतन्त्र अकारादि क्रम से व्यवस्थित सापेक्ष अनुक्रमणिका है जिनमें विशेष सदर्भों को छोड़ कर दूसरे वर्गों के विषय सम्बन्ध नहीं दिखाए गए हैं।

समीक्षा

यह पद्धति अपने में एक प्रकार से पूर्ण है। प्रत्येक वर्ग का अलग इन्डेक्स है। धन की कमी न होने से इसके संशोधन और परिवर्द्धन में कोई कठिनाई नहीं होती। इसे अमरीकी सरकार और वहाँ के विशेषज्ञों की सहानुभूति प्राप्त है किन्तु इसकी प्रतीक संख्याएँ बहुत बड़ी हो जाती हैं, वे याद रखने के योग्य भी नहीं है। छोटे पुस्तकालयों के लिए उनकी उपयोगिता नहीं के बराबर हैं। विशेष प्रकार के पुस्तकालय इस पद्धति को अपना सकते हैं। इसमें अमरीकन विषयों पर विशेष जोर दिया गया है। यदि संक्षिप्त और स्मरणीय प्रतीक संख्या का प्रयोग सुलभ हो जाय तो मध्यम श्रेणी के पुस्तकालयों में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है।

(४) विषय वर्गीकरण-पद्धति

श्री जेम्स डफ ब्राउन (१८६२—१९१४) ने अनेकों प्रयोगों के पश्चात् क्रमश १९०६, १९१४ और १९३९ में प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय संस्करण विषय वर्गीकरण में प्रकाशित किए। तृतीय संस्करण डॉ० स्टुअर्ट द्वारा परिवर्द्धित एवं संशोधित किया गया था। दशमलव वर्गीकरण पद्धति में अमरीकन विषयों पर अधिक बल होने से ब्राउन महोदय ने यह पद्धति मुख्यत ब्रिटिश पुस्तकालयों के लिए बनाई किन्तु दशमलव पद्धति की भाँति विस्तारशीलता न होने के कारण यह अधिक लोकप्रिय न हो सकी। ४१ पुस्तकालयों ने इसको अपनाया था, वे या तो इसमें कतिपय संशोधन कर रहे हैं या दशमलव पद्धति को अपना रहे हैं। फिर भी सरल, और व्यावहारिक होने के कारण इसका अध्ययन वर्गकारों के लिए लाभदायक है।

रूपरेखा

इस पद्धति के अनुसार मुख्य वर्गों को निम्नलिखित चार समूहों में व्यवस्थित किया गया है :—

पदार्थ एवं शक्ति	Matter and force
जीवन	Life
मन	Mind
आलेख	Record

समस्त ज्ञान ब्राउन महोदय के अनुसार इन चार समूहों के अन्तर्गत आ जाता है परन्तु यह पुस्तक-वर्गीकरण के अनुसार न्यायसंगत नहीं है। उन्होंने अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षरों को प्रतीक संख्या मान कर निम्नलिखित वर्ग विभाजन किया है —

A	सामान्य
B-C-D	भौतिक विज्ञान
E-F	प्राणि विज्ञान
G-H	जातिगत औषधिविज्ञान
I	जीवविज्ञान और गृहकलाएँ
J-K	दर्शन और धर्म
L	सामाजिक और राजनीति विज्ञान
M	भाषा और साहित्य
N	साहित्यिक रूप
O-W	इतिहास और भूगोल
X	जीवनी

प्रतीक संख्या

यह वर्ग विभाजन अपने में पूर्ण नहीं है। विषय का ज्ञान कराने के लिए अक्षर के साथ अंकों का भी प्रयोग किया गया है। उदाहरणार्थ सामाजिक और राजनीति विज्ञान के विषयों का स्पष्टीकरण निम्नलिखित रूप में किया गया है —

L. सामाजिक और राजनीति विज्ञान

१००	राजनीतिविज्ञान
२०१	सरकार सामान्य
२०२	राज्य (विधान)

२०३	नगर राज्य
२०४	सामंत प्रथा (फ्यूडल प्रणाली)
२०५	सामंत
२०६	राज्य तंत्र

इस विभाजन के अनुसार राजनीति विज्ञान की प्रतीक संख्या L २०० हुई।

सामान्य उपविभाजन या रूप विभाग

सामान्य उपविभाजनों के स्थान पर इस पद्धति में वर्गीकृत सूची में दिए गए टर्म्स का प्रयोग प्रत्येक वर्ग के साथ किया गया है। ये टर्म्स निश्चित स्थान रखते हैं और किसी अंश तक सारिणी की सघनता को विस्तारशील बनाने में सहायक होते हैं। इसके अनुसार स्थापित विषयों की पुस्तकें एक स्थान पर लाने में सुविधा होती है। ये सूचियाँ दो प्रकार की हैं, भौगोलिक विभाजन और विषय के विभिन्न रूपों की तालिका (सब्जेक्ट कैटेगोरिकल)। इस तालिका में ९७३ टर्म्स हैं।

जैसे —

B ३०० स्थापत्य (आर्किटेक्चर), सामान्य
B ३०० १—————बिब्लियोग्रेफी
B ३०० २—————कोश
B ३०० ३————पाठ्यपुस्तकें, क्रमबद्ध
B ३००·४——————————प्रसिद्ध
B ३०० ६————सभा समितियाँ

इत्यादि।

O—W वर्ग में प्रत्येक देश के लिए अक्षरों और अंकों के मिश्रित प्रतीक द्वारा स्थान निश्चित कर दिया गया है।

जैसे —

P	सागरीय प्रदेश और एशिया
P ०	आस्ट्रेलिया
P १	पोलीनेशिया
P २	मलाएशिया

P २९ एशिया
P ३ जापान
P ४ चीन
P ५ सुदूर भारत मलाया स्टेट्स
P ६ भारत
P ८८ अफगानिस्तान
P ९ फारस

इन देशों के साथ भी रूप-विभाजन की तालिकाओं का प्रयोग किया जाता है।

वर्गसंख्या बनाना

जैसे :—

P ३ १ जापान का इतिहास

P ३ ३३ जापान का भूगोल

अनुक्रमणिका

इस पद्धति के अनुसार अनुक्रमणिका विशिष्ट प्रकार के एक स्थानीय सिद्धान्त पर आधारित है। एक विषय तथा उसके अंगों से सम्बंधित विषय अकारादि क्रम से रखे गये हैं और उनके सामने उनकी प्रतीक संख्या दी गई है। दशमलव पद्धति की भाँति एक विषय के अन्तर्गत सापेक्षिक तथा सम्बन्धित विषयों को एकत्र करके नहीं रखा गया है।

समीक्षा

एक पुस्तक, एक विषय, एक स्थान और एक प्रतीक संख्या की प्रणाली के अन्तर्गत विषय वर्गीकरण पद्धति के निर्माता श्री ब्राउन महोदय अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो सके क्योंकि आज के युग में एक पुस्तक में एक विषय का निर्धारण यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। अतः सुविधा का सिद्धान्त इस पद्धति में लागू नहीं हो सकता। सिद्धान्त पक्ष और व्यवहार पक्ष का संघर्ष इस पद्धति के वर्गकार को प्रत्येक पुस्तक के साथ अनुभव करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त विषयों के निश्चित स्थान ने विस्तारशीलता को स्थान न देकर सारणी में संकीर्णता उत्पन्न कर दी है। यही कारण है कि इसके जन्म-स्थान ब्रिटेन में भी इसका पर्याप्त स्वागत न हो सका।

और दिल्ली के विश्वविद्यालयों में पुस्तकालय विज्ञान विभाग के अध्यक्ष रह कर आप निरन्तर पुस्तकालय-जगत् की सेवा करते रहे हैं। आपकी सेवाओं के उपलक्ष में दिल्ली विश्वविद्यालय ने आपको आनरेरी डाक्ट्रेट की पदवी से विभूषित किया है। आपने मद्रास यूनिवर्सिटी को पुस्तकालय विज्ञान की विशेष शिक्षा और खोज के लिए अभी हाल में एक लाख रुपया दान रूप में दिया है। आपको भारत का मेलविल ड्यूई या जेम्स डफ ब्राउन कहना उचित होगा। आप "पद्म श्री" की उपाधि से भी विभूषित किये गये हैं।

पद्धति की रूपरेखा—यह पद्धति सर्वप्रथम १९३३ ई० में 'मद्रास लाइब्रेरी एसोसियेशन' की ओर से प्रकाशित हुई थी। उसके बाद इसके संशोधित संस्करण भी १९३६, १९५० १९५७, ई० में निकले हैं। मूल पुस्तक चार भागों में विभक्त है, प्रथम भाग में वर्गीकरण के नियम दिये गये हैं। दूसरे भाग में वर्गीकरण-पद्धति की सारणी दी गई है जिसमें मुख्य वर्ग, विभाजन के सामान्य वर्ग, भौगोलिक विभाजन, भाषानुसार विभाजन, एवं काल क्रम विभाजन के प्रतीक अक्षर और संख्यायें दी गई हैं। इसी भाग में इन सामान्य वर्ग और मुख्य वर्गों का विस्तृत रूप भी दिया गया है। तृतीय भाग में सारणी की एक अनुक्रमणिका या इन्डेक्स अंग्रेजी वर्णमाला के अनुसार दिया गया है। चौथे भाग में क्रामक संख्या या कॉल नम्बर के उदाहरण दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त लेखक ने इस की भूमिका में कोलन पद्धति की विशेषताओं पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला है। इस पद्धति में दिए गए विषय आदि के प्रतीक अक्षरों और संख्याओं को कोलन चिह्न के द्वारा जोड़ा जाता है। इसलिए इसे 'कोलन पद्धति' कहा जाता है।[१]

१ यह पद्धति भारतीय दर्शन के पंचभूत सिद्धान्त पर आधारित है। वे ये हैं :—

Personality	विषय की परिपूर्णता
Matter	पदार्थ
Time	काल
Energy	क्रिया
Space	आकाश (देश)

इन सिद्धान्तों के आधार पर प्रतिपाद्य विषयों का निर्णय किया जाता है। इन्हीं के आधार पर डा० रंगनाथन ने सम्पूर्ण ज्ञान को दो भागों में विभा

[१] इस पद्धति के १९६० ई० वाले संस्करण में पर्याप्त संशोधन एवं परिवर्द्धन कर दिया गया है। प्रस्तुत परिचय प्राचीन संस्करण पर आधारित है।

चित किया है, शास्त्र और शास्त्रेतर विषय (Sciences and Humanities)। अंग्रेजी वर्णमाला का प्रयोग उन्होंने अपनी पद्धति को अन्तर्राष्ट्रीयता प्रदान करने के दृष्टिकोण से किया है। आध्यात्मिक अनुभूति और गुह्यविद्या के लिये त्रिकोण तथा सामान्य वर्गों के लिए १ से ९ तक प्रतीक संख्याएँ भी प्रयोग की गई हैं। मुख्य वर्गों का विभाजन इस प्रकार है :—

मुख्य वर्ग	Main Classes
१ से ९ तक सामान्य वर्ग	1 to 9 Generalia
१ वाङ्मय सूची	1 Bibliography
२ पुस्तकालय विज्ञान	2 Library science
३ कोश विश्वकोश	3 Dictionaries encyclo-Pedias
४ संस्था	4 Societies
५ पत्रिकाएँ	5 Periodicals
६१ कांग्रेस	61 Congresses
६२ आयोग	62 Commissions
६३ प्रदर्शनी	63 Exhibitions
६४ अद्भुतालय	64 Museums
७ जीवनी	7 Biographies
८ वार्षिक ग्रंथ	8 Year-books
९ कृति	9 Works essays
९८ थीसिस	98 Theses
शास्त्र	Sciences
A शास्त्र (सामान्य)	A Science (General)
B गणित	B Mathematics
C वास्तु शास्त्र	C Physics
D यन्त्रकला	D Engineering
E रसायन शास्त्र	E Chemistry
F रसायन कल्प	F Technology
G प्राकृतिक विज्ञान (सामान्य) और जीव शास्त्र	G Natural Science (General) and Biology
H भूगर्भशास्त्र	H Geology
I उद्भिज्जशास्त्र	I Botany

J	कृषि	J	Agriculture
K	जन्तु शास्त्र	K	Zoology
L	चिकित्सा शास्त्र	L	Medicine
M	उपयोगी कलाएँ	M	Useful arts
Δ	आध्यात्मिक अनुभूति और गूढ़ विद्या	Δ	Spiritual experiences and mysticism
	शास्त्रेतर विषय		**Humanities**
N	ललित कला	N	Fine arts
O	साहित्य	O	Literature
P	भाषाशास्त्र	P	Linguistics
Q	धर्म	Q	Religion
R	दर्शन	R	Philosophy
S	मानसशास्त्र	S	Psychology
T	शिक्षाशास्त्र	T	Education
U	भूगोलशास्त्र	U	Geography
V	इतिहास	V	History
W	राजनीति	W	Political Science
X	अर्थशास्त्र	X	Economics
Y	अन्य समाजशास्त्र	Y	(Others) Social Sciences including sociology
Z	विधि	Z	Law

सामान्य विभाजन

वर्गों के सामान्य विभाजन के लिए पद्धति में अंग्रेजी वर्णमाला के छोटे अक्षरों का प्रतीक दिया गया है जो प्रत्येक विषय के साथ प्रयुक्त हो सकता है। यह विभाजन इस प्रकार हैं :—

सामान्य विभाजन	**Common Subdivisions**
a वाङ्मय सूचि	a Bibliography
b व्यवसाय	b Profession
c प्रयोगशाला, वेधशाला	c Laboratories Observatories
d अजायबघर, प्रदर्शनी	d Museums exhibitions

e यन्त्र, मशीन, फार्मूला	e Instruments machines appliances formulas
f नक्शा, मानचित्रावली	f Maps atlases
g चार्ट, डाइग्राम, ग्रैफ, हैंडबुक, सूचियां	g Charts diagrams graphs hand books catalogues
h संस्था	h Institutions
i विविध, स्मारक ग्रंथ आदि	i Miscellanies memorial volumes Festschriften
k विश्वकोश, शब्दकोश, पदसूची	k Cyclopaedias, dictionaries ; concordances
l परिषद्	l Societies
m सामयिक	m Periodicals
n वार्षिक ग्रन्थ, निर्देशिका तिथि-पत्र	n Yearbooks directories almanacs
p सम्मेलन, कांग्रेस, सभा	p Conferences Congresses, Conventions
q विधेयक, अधिनियम, कल्प	q Bills, Acts, Codes
r प्रशासन का विभागीय विवरण तथा समष्टि का तत्समान विवरण	r Government departmental reports and similar periodical reports of corporate bodies
s संख्यातत्त्व	s Statistics
t आयोग, समिति	t Commissions committees
u यात्रा, सर्वेक्षण, अभियान, अन्वेषण, आदि	u Travels expeditions, surveys or similar descriptive accounts explorations topography
v इतिहास	v History
w जीवनी, पत्र	w Biogrphy letters
x संकलन, चयन	x Collected works selections
z सार	z Digests

वर्गसंख्या बनाने की विधि

प्रत्येक वर्ग के अन्तर्गत पुस्तकों के विषय का निर्णय करने के लिए उसके साथ एक सूत्र दिया गया है जो निश्चित है। प्रत्येक सूत्र के अनेक ढंग हैं

जो मूलभूत पाँच सिद्धान्तों पर आधारित हैं। प्रत्येक अंग कोलन : से संयुक्त हैं। उसके नीचे प्रत्येक अंग के अलग अलग उपविभाजनों का स्थान अंकों के प्रतीकों से निर्धारित किया गया है। उदाहरण —

L औषधि

L(O) (P)

इसका अर्थ हुआ औषधि (L) के दो अंग हैं, आगन (O) और प्राब्लम (P)

इस सूत्र के अनुसार आर्गन मनुष्य के शरीर के विभिन्न अवयव हुए और प्राब्लम, मनुष्य द्वारा उन अवयवों का विभिन्न प्रकार से अध्ययन हुआ।

इन्फेक्शस डिसीजेज ऑफ रिस्पेरेटरी आर्गन्स

L 4 42

इसमें L मुख्य वर्ग औषधि,

4 रेस्परेटरी आर्गन मुख्य वर्ग का आगनिक अंग संयोजक चिह्न जो गुण परिवर्तन का द्योतक है।

42 इन्फेक्शस डिसीजेस मुख्य वर्ग का प्राब्लम अंग

इस प्रकार मुख्य वर्ग के अक्षर प्रतीक के साथ उसके विभिन्न अंगों के विभिन्न प्रतीक मिला कर कोलन से संयुक्त करने पर वर्ग संख्या का निर्माण किया जाता है।

इसके अतिरिक्त इस पद्धति में निम्नलिखित विधियों का प्रयोग वर्ग संख्या निर्माण के लिए किया जाता है —

१ कोलन विधि
२ भौगोलिक विधि
३ काल-क्रम विधि
४ विषय विधि
५ अकारादि क्रम विधि
६ अभीष्ट श्रेणी विधि
७ क्लासिक विधि
८ सम्बन्धीतक विधि
९ अष्टक विधि

विधियाँ	उदाहरण
१ काल विधि	ग्राम्य समुदाय Y 131
	ग्राम्य समुदाय के आभूषण Y 131 85
२ भौगोलिक विधि	S 7 जाति मनोविज्ञान
	S 742 जापानियों का मनोविज्ञान
	S 755 जर्मनों का मनोविज्ञान
	U भूगोल
	U 44 भारत का भूगोल
३ कालक्रम विधि	O 2 J 64 में J 64 शेक्सपियर की तिथि १५६४ का प्रतीक है
	X 3 M 24 में M 24 समाजवाद की उत्पत्ति की तिथि १८२४ का प्रतीक है।
४ विषय विधि	D 6 9 अन्य मशीनरी
	D 6 9 M 14 मिलिंग मशीनरी
	V 258 अन्य अधिकार
	V 258 X व्यापारस्वातन्त्र्य
५ अकारादि क्रम विधि	J 37 Fruit
	J 371 Apple
	J 372 Orange
६ अभीष्ट श्रेणी विधि	J 381 Rice
	J 382 Wheat
	J 383 Oats
७ क्लैसिक विधि	पाणिनि अष्टाध्यायी P 15 C X 1
	पतञ्जलि महाभाष्य P 15 $C_X 12$
८ स्मरणात्मक विधि	मनोविज्ञान शिक्षा के दृष्टिकोण से ToS
९ अष्टक विधि	Y 158 Slums
	Y 1591 Groups arising from tribes
	Y 1592 " " caste

इनमें से भौगोलिक और काल-क्रम विधियों के प्रयोग के लिए चार्ट दिए हुए हैं। इन सब विधियों के प्रयोग के लिए सिद्धान्त दिए गए हैं जिनके अनुसार वर्गसंख्या का निर्णय होता है।

समीक्षा

ब्राउन महोदय के विषय वर्गीकरण और ड्यूई महोदय के दशमलव वर्गीकरण के सिद्धान्तों का उपयोगी समन्वय इस पद्धति की विशेषता है। विश्लेषण और संश्लेषण की सम्भावना इसमें परिपूर्ण है। सूक्ष्मतम विचारों का वैयक्तीकरण और उसका वर्गीकरण इस पद्धति के अतिरिक्त अन्य किसी पद्धति में संभव नहीं हो सका है। अष्टक विधि के प्रयोग ने वर्गीकरण क्षेत्र में नये विषयों के लिए असीमित स्थान दे रखा है। यह डा० रंगनाथन का अपना आविष्कार है।

'यह पद्धति सिद्धान्तमूल न्यायों का अवलम्बन करके बनाई गई है। 'मूलभूत' वर्गीकरण अधिकतम विभागों में न्यायानुकूल है, विवरण में पूर्ण वैज्ञानिक है तथा व्याख्यान में विद्वत्तापूर्ण है।'[1] 'इस पद्धति में भारतीय वाङ्मय को व्यवस्थित करने के लिए अति प्रशंसनीय योजना है।'[2]

खेद है कि इस पद्धति का मूल अंग्रेजी से भारतीय भाषाओं में पूर्ण रूप से अनुवाद नहीं हो सका है। केवल इसके सम्बन्ध में कुछ परिचयात्मक लेख या पद्धति के कुछ अंश ही प्रकाशित हो सके हैं। अतः इसका विशेष प्रचार अभी नहीं हो पाया है।[3]

(६) वाङ्मय वर्गीकरण पद्धति

हेनरी एब्लिन ब्लिस महोदय ने अपनी दो पुस्तकों के आधार पर इस पद्धति का निर्माण किया। दोनों पुस्तकों में लेखक ने वर्गीकरण के सैद्धान्तिक पक्ष की विस्तृत समीक्षा की है और आदर्श वर्गीकरण पद्धति के नियमों का प्रतिपादन किया है। लेखक के मतानुसार वर्गीकरण, मुख्यतः पुस्तक

---

१ ब्लिस महोदय का मत

२ डब्ल्यू० सी० बर्विक सेयर्स महोदय का मत

३ इस पद्धति के अधिक हिन्दी रूप के लिए देखिए —

डा० एस० आर० रंगनाथन की लाइब्रेरी मनुअल का हिन्दी अनुवाद 'ग्रन्थालय प्रक्रिया (अनु० श्री मुरारिलाल नागर)

वर्गीकरण आलोचनात्मक, वाङ्मय और विश्लेषणात्मक होना चाहिए। इसी सिद्धान्त के आधार पर उन्होंने अपना विस्तृत तथा परिष्कृत वर्गीकरण प्रस्तुत किया। इसकी सारणियों को उन्होंने एक ही विषय के अनेक अङ्कों का उपविभाजन करने के लिए तैयार किया और उसे क्रम बद्ध सारणी की संज्ञा दी।

रूपरेखा

निम्नलिखित मुख्य वर्गों में उन्होंने १ से ९ तक वर्गों के बाह्य संख्यकवर्ग (ऐन्टीरियर न्युमरल क्लासेज) बनाए हैं जो निम्नलिखित हैं —

१—वाचनालय संग्रह मुख्यतः सदभ के लिए
२—बिब्लियोग्रैफी पुस्तकालय विज्ञान और इकोनोमी
३—चुने हुये या विशिष्ट संग्रह, पृथक्कृत पुस्तकें आदि
४—विभागीय और विशेष संग्रह
५—अभिलेख और पुरालेख, सरकारी संस्थागत आदि
६—पत्रिकाएँ (संस्थाओं के क्रमिक प्रकाशनों सहित)
७—विविध
८—संग्रह—स्थानीय ऐतिहासिक या संस्थागत
९—ऐतिहासिक संग्रह या प्राचीन ग्रंथ

लेखक ने मुख्य विषय वर्ग को अपने ज्ञान-वर्गीकरण के अनुसार निम्नलिखित रूप में व्यवस्थित किया है —

दर्शन—विज्ञान—इतिहास—शिल्प और कलाएँ

इस पद्धति में विषयों को उपयुक्त समूहों के अन्तर्गत रखा गया है जिनका विस्तार अंग्रेजी वर्णमाला के A से Z तक के अक्षरों का प्रयोग करके किया गया है। जैसे —

A दर्शन और सामान्य विज्ञान (तर्कशास्त्र, गणित, पदार्थविज्ञान, संख्या तत्त्व सहित)
B भौतिकशास्त्र (व्यावहारिक, विशिष्ट, विशेष भौतिक टेकनीलोजी सहित)
L इतिहास (सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, ऐतिहासिक, राष्ट्रीय और जातिगत भूगोल तथा सिक्कों आदि के अध्ययन सहित)
U कलाएँ उपयोगी और औद्योगिक
W भाषा विज्ञान
इत्यादि

इनमें से भौगोलिक और काल-क्रम विधियों के प्रयोग के लिए चार्ट दिए हुए हैं। इन सब विधियों के प्रयोग के लिए सिद्धान्त दिए गए हैं जिनके अनुसार वर्गसंख्या का निर्णय होता है।

समीक्षा

ब्राउन महोदय के विषय वर्गीकरण और ड्युई महोदय के दशमलव वर्गीकरण के सिद्धान्तों का उपयोगी समन्वय इस पद्धति की विशेषता है। विश्लेषण और संश्लेषण की समावना इसमें परिपूर्ण है। सूक्ष्मतम विचारों का वैयक्तीकरण और उसका वर्गीकरण इस पद्धति के अतिरिक्त अन्य किसी पद्धति में सम्भव नहीं हो सका है। अष्टक विधि के प्रयोग ने वर्गीकरण क्षेत्र में नये विषयों के लिए असीमित स्थान दे रखा है। यह डा० रंगनाथन का अपना आविष्कार है।

'यह पद्धति सिद्धान्तभूत न्यायों का अवलम्बन करके बनाई गई है। 'मूलभूत' वर्गीकरण अधिकतम विभागों में न्यायानुकूल है, विवरण में पूर्ण वैज्ञानिक है तथा व्याख्यान में विद्वत्तापूर्ण है।'[1] 'इस पद्धति में भारतीय वाङ्मय को व्यवस्थित करने के लिए अति प्रशंसनीय योजना है।'[2]

खेद है कि इस पद्धति का मूल अंग्रेजी से भारतीय भाषाओं में पूर्ण रूप से अनुवाद नहीं हो सका है। केवल इसके सम्बन्ध में कुछ परिचयात्मक लेख या पद्धति के कुछ अंश ही प्रकाशित हो सके हैं। अतः इसका विशेष प्रचार अभी नहीं हो पाया है।[3]

(६) वाङ्मय वर्गीकरण पद्धति

हेनरी एविलिन ब्लिस महोदय ने अपनी दो पुस्तकों के आधार पर इस पद्धति का निर्माण किया। दोनों पुस्तकों में लेखक ने वर्गीकरण के सैद्धान्तिक पक्ष की विस्तृत समीक्षा की है और आदर्श वर्गीकरण पद्धति के नियमों का प्रतिपादन किया है। लेखक के मतानुसार वर्गीकरण, मुख्यतः पुस्तक

---

१ ब्लिस महोदय का मत

२ डब्ल्यू० सी० बरविक सेयर्स महोदय का मत

३ इस पद्धति के आंशिक हिन्दी रूप के लिए देखिए —

डा० एस० आर० रंगनाथन की लाइब्रेरी मनुअल का हिन्दी अनुवाद ग्रन्थालय प्रक्रिया (अनु० श्री मुरारिलाल नागर)

वर्गीकरण आलोचनात्मक, वस्तुपरक और निरपेक्षवादी होना चाहिए। इन सिद्धान्तों के आधार पर उन्होंने अपना विस्तृत तथा परिष्कृत वर्गीकरण प्रस्तुत किया। इनकी मान्यताओं का उन्होंने एक [illegible] के [illegible] [illegible] का उल्लेखन करने के लिए तैयार किया और उसे [illegible] प्रकाशित किया था।

पूरी सारणी का उपविभाजन इस प्रकार है —

AM—AW	गणित	AN	अंकगणित सामान्य
AM	सामान्य	ANA	प्रारम्भिक प्रश्न
AN	अंकगणित	ANB	व्यावहारिक अंकगणित
AO	बीजगणित	ANC	अंक
AP	समीकरण	AND	दशमलव अंक
AQ	अंक बीजगणित	ANE	ड्यूडेसिमल प्रणाली

इसके अतिरिक्त किसी वर्ग या उपवर्ग, भौगोलिक, भाषागत ऐतिहासिक काल, साहित्य रूप जीवनी, तथा विषय विशेष के विभाजन तथा उपविभाजन के लिए इस पद्धति के अन्तर्गत २० क्रमबद्ध सारणियों का प्रयोग किया गया है। इनमें एक और दो पूरी पद्धति में तीन से सात तक वर्गों के बड़े समूहों में और आठ से बीस तक उच्चतम विशिष्ट विषयों के लिए प्रयुक्त हुई हैं।

प्रतीक संख्या

अंग्रेजी वर्णमाला के बड़े अक्षर, लोअर केस अक्षर और अङ्कों को मिश्र कर बनाई गई है। अङ्कों का मुख्य प्रतीक संख्या—जो अक्षरों में है—के साथ मिला दिया जाता है। दोहरे या तेहरे अक्षरों को भी प्रयोग में लाया गया है। जैसे T 52 बिब्लियोग्रैफी आफ इन्श्योरेंस, OJ8I 'हिस्ट्री आफ द पोलिटिकल हिस्ट्री आफ जापान आदि। इस प्रकार की प्रतीक संख्याओं की विशेषता यह है कि विषयों के भाषा, साहित्य के रूप, इतिहास तथा अन्य रूप विभाजनों के अनुसार वर्गसंख्या बनाने में सरलता रहती है।

अनुक्रमणिका

इस पद्धति की अनुक्रमणिका सापेक्ष है।

समीक्षा

इस पद्धति में विषयों का सूक्ष्म वर्गीकरण बिना विषयों की शृंखला को तोड़े हुए किया जा सकता है। विषयों का विश्लेषण और संश्लेषण पूर्ण रूप से प्राप्त हो सकता है। वर्गीकरण की आल्टरनेटिव व्यवस्था इस पद्धति की अपनी विशेषता है जिसके द्वारा नवीन विषयों को स्थान प्राप्त करने में किसी भी प्रकार की कठिनाई नहीं होती। व्यावहारिक दृष्टिकोण से पुस्तक-वर्गीकरण के लिए यह पद्धति उपयुक्त और उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकी क्योंकि इसमें सैद्धान्तिक पूर्णता की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। केवल आलेखों के सारांशीकरण और उनके वर्गीकरण के लिए ही इस पद्धति का प्रयोग किया जा सकता है।

पुस्तक वर्गीकरण का प्रयोग-पक्ष

क्रियात्मक वर्गीकरण

वर्गीकरण के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य और क्रियात्मक पहलू योग्य और समर्थ वर्गीकारों को पैदा करना है। यहाँ कुछ ऐसे मुख्य सिद्धान्तों का जानना आवश्यक है जो क्रियात्मक वर्गीकरण में, विशेष तौर से प्रारम्भिक वर्गीकारों के लिए, अत्यन्त सहायक सिद्ध हो सकें। इसलिए यहां बहुत ही आवश्यक कुछ प्रारम्भिक नियमों को सरल ढंग से दिया जा रहा है —

किसी पुस्तक के वर्गीकरण से क्या अभिप्राय है ?

वर्गीकरण की चार क्रमिक अवस्थाएँ होती हैं—

(१) अपनी नियत वर्गीकरण पद्धति के अनुसार दी हुई पुस्तक का विषय एवं वर्ग निश्चित करना तथा उचित वर्गसंख्या उस पर लगाना।

(२) यदि आवश्यक हो तो वर्ग संख्या में सामान्य रूपविभाजन की संख्या लगाना।

(३) पुस्तकसंख्या नियत करना।

(४) *अलमारियों में यथास्थान रखने के लिए आवश्यक हो तो अनुक्रम संख्या* (Sequence No) लगाना।

यहाँ प्रथम अवस्था ज्ञान वर्गीकरण के क्षेत्र से सम्बद्ध है, तथा अन्य तीनों अवस्थाएँ पुस्तक वर्गीकरण के क्षेत्र में आ जाती हैं।

वर्गीकार को प्रारम्भ में साधारणतः पहली दो ही अवस्थाओं को सीख कर उनका अभ्यास करना पड़ता है। अतः आगे सर्वप्रथम इन्हीं दो अवस्थाओं से सम्बन्धित कुछ सिद्धान्तों को विस्तार से दिया जा रहा है।

विषय निर्धारित करना तथा उपयुक्त वर्ग, उपवर्ग व सामान्य रूप विभाजन आदि की संख्याएँ नियत करना—

वर्गकार के अल्पतम कार्य की परिधि—

एक वर्गकार को इस विषय में कम से कम इतना कार्य कर सकने योग्य तो होना चाहिए—

(१) दी हुई पुस्तक का पहले प्रधान विषय जान कर मुख्य वर्ग निश्चित कर सके।

(२) तदुपरान्त उसमें वर्णित अन्य विषयों को पूरी निश्चितता के साथ निर्धारित करके नियत वर्गीकरण पद्धति में उनके पूर्णतः उपयुक्त व उपयोगी स्थान का निर्णय कर सके।

(३) प्रतीक चिह्नों का तथा सामान्य रूपविभाजन आदि वर्गीकरण पद्धति के सहायक तत्त्वों का यथाविधि ठीक ठीक प्रयोग कर सके।

सामान्य आवश्यकता

इस कार्य में दक्षता निम्न बातों पर आश्रित है—

(१) नियत वर्गीकरण पद्धति की पूरी जानकारी।

(२) तद्विषयक सम्मत सिद्धान्तों तथा कार्य पद्धतियों का सम्पूर्ण ज्ञान।

(३) *एक विस्तृत साधारण ज्ञान। वर्गीकरण सारणियों के पारिभाषिक* ज्ञान के न होने से उतनी गलतियाँ नहीं होती हैं जितनी कि विषय निर्धारण में साधारण अज्ञानता से हो जाती हैं। व्यक्ति जितना अच्छा चलता फिरता विश्व कोश बन सकेगा वह उतना ही अधिक सफल वर्गकार हो सकेगा।

वर्गीकरण की प्रक्रिया को इस प्रकार के प्रश्न पूछ कर प्रारम्भ कीजिए—

(१) पुस्तक का विषय क्या है?

(२) वह रूप कौन सा है जिसमें कि वह विषय उपस्थित किया गया है?

सारणियोंका विचार —

(३) सारणियों में उस विषय के लिये मुख्य शीर्षक (मुख्य वर्ग) कौन सा हो सकता है?

(४) मुख्य वर्ग का विभाग (Division) कौन सा होगा?

(५) अन्त में बिल्कुल निश्चित विषय क्या होगा?

तीन कार्य

प्रथम अवस्था में वर्गसंख्या नियत करने में हमें दो बातों पर विचार करना पड़ता है —

(१) पुस्तक की वर्गसंख्या के लिए मुख्य वर्ग के पहले अङ्क को चुनना।

(२) तदुपरान्त अगले अंकों को क्रमशः चुनते जाना, जब कि अन्त में साधारण रूपविभाग की संख्या लगाने का समय आ जाता है।

(३) तत्पश्चात् द्वितीय अवस्था में साधारण रूपविभाग आदि के अंक लगा कर वर्गसंख्या को आवश्यकतानुसार अधिक से अधिक सूक्ष्म और निश्चित कर दिया जाता है।

वर्गीकरण के कुछ क्रियात्मक नियम

(क) सामान्य नियम

(१) मुख्य नियम : सुविधा और उपयोगिता का नियम—

वर्गीकरण का सारा कार्य पुस्तकालय के उपयोक्ताओं (पाठकों) की 'सुविधा' के लिए ही होना चाहिये। अर्थात् किसी एक पुस्तक को *ऐसे स्थान पर रखिए जहाँ वह अधिक से अधिक उपयोगी हो सके।* ऐसा होने पर पाठक उसे अधिक से अधिक सरलता से प्राप्त कर सकेंगे। साथ ही ऐसा करते हुए उसका कारण भी बता सकना चाहिए।

(२) सामान्यकृति और साहित्य वर्गों के अलावा दूसरे वर्गों में किसी पुस्तक का पहले उसके *विषय* के अनुसार वर्गीकरण कीजिए और बाद में उस 'रूप' के अनुसार—जिसमें कि वह विषय उपस्थित किया गया है। (रूप की अपेक्षा विषय प्रधान होता है)। 'सामान्यकृति' और 'साहित्य वर्ग' में रूप की प्रधानता रहती है।

'रूप' के लिए रूपविभाजन या सामान्य रूपविभाजन के अंकों की आवश्यकता होती है।

(३) पुस्तकों का वर्गीकरण करते हुए सुविधा के नियम के अनुसार ही पुस्तकालय के स्वरूप, आवश्यकता तथा प्रकाशन के प्रकार का भी ध्यान रखना चाहिए। विशेषकर तब जब कि पुस्तकें संगृहीत कृतियों के रूप में हों या किसी विद्वत् परिषद् का कोई प्रकाशन हों।

किसी प्राचीन 'इंगलिश टैक्स्ट सोसाइटी' के प्रकाशित ग्रन्थों को एक साथ रखना उपयोगी हो सकता है, पर लाइब्रेरी एसोसिएशन के ग्रन्थों को एक ही स्थान पर वर्गीकृत करना उपहासास्पद ही होगा।

(४) ऐसे वर्गीकरण से सदा ही बचना चाहिए जो विवाद का या आलोचना का विषय बन सकता हो। किसी विषय के पक्ष और विपक्ष की पुस्तकें एक ही साथ रखी जानी चाहिएँ।

(ख) विषय निर्धारित करने के लिए—

(१) पुस्तक की मुख्य प्रवृत्ति या उसका स्पष्ट उद्देश्य तथा उसके लेखक की इच्छा को जानना चाहिए और इसे ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित साधनों को अपनाना चाहिए—

(१) पुस्तक का नाम
(२) पुस्तक की विषय सूची
(३) अध्यायों के मुख्य तथा अन्तवर्ती शीर्षक
(४) भूमिका, प्राक्कथन आदि
(५) अनुक्रमणिका
(६) पुस्तक में दी हुई सहायक पुस्तकों की सूचियाँ
(७) पुस्तक के वास्तविक पाठ्यभाग का विषय
(८) अन्य विशेषज्ञ

(ग) वर्गसंख्या नियत करना

(१) पुस्तक की वर्गसंख्या उसके सम्पूर्ण विषय की सूक्ष्मतम निर्देशिका होनी चाहिए।

(२) न केवल पुस्तक के विषय क्षेत्र एवं रूप को ही देखना चाहिये साथ ही सम्बद्ध पुस्तकालय की प्रकृति और विशेषताओं का भी विचार करना चाहिये (जिससे कि पुस्तक अधिक से अधिक सुविधापूर्वक उपयोग में आ सके)।

(घ) एकरूपता एवं अविरोध के लिए

(१) सब कठिनाइयों का एवं किसी समय किए गए निर्णयों का यथा स्थान सुविधाजनक समुचित लेखा रखना चाहिये जिससे कि भविष्य में भी सम्बद्ध विषयों की पुस्तकें एक साथ [redacted] रखी जा सकें।

(ङ) अन्य क्रियात्मक नियम

(१) जब किसी पुस्तक में दो या दो से अधिक विषयों का या एक विषय के अनेक उपविभागों का विचार किया गया हो तो—

१ जो सबसे प्रमुख विषय हो पुस्तक को उसमें रखना चाहिये।

२ यदि सब विषय एक सी प्रमुखता के हों या काफी सम्बद्ध हों तो साधारणतः जिसका पहले विचार किया गया हो उसमें रखना चाहिये।

जैसे :—प्रकाश और ताप ५३५

३ अथवा, जब दो से अधिक विषयों का विचार एक ही पुस्तक में किया गया हो तो उसको सामान्य विषय में रखना चाहिए जिसमें वे सभी विषय अन्तर्गत हो जाते हों। या उसे सबसे अधिक उपयोगी विषय में रख सकते हैं।

जैसे —ताप, प्रकाश और ध्वनि ५३० २७ यदि सबका विचार समान हो तो ५३०।

४ जब किसी पुस्तक में किसी विभाग के बहुत से उपविभागों का विचार हो तो उसे सामान्य विभाग में ही रखना ठीक है। पर उसमें यदि किसी उपविभाग का बहुत ही प्रमुखता से वर्णन हो तो पुस्तक की उपयोगिता के अनुसार उस उपविभाग में भी रखा जा सकता है।

जैसे —चीन, तिब्बत, भारत और आसाम ९१५

(२) यदि पुस्तक का विषय कुछ ऐसा नया हो जिसका सारणियों में कोई स्थान नहीं रखा गया हो तो सारणी में खोज करके पुस्तक को अधिक से अधिक सम्बद्ध विषय के शीर्षक में रखना चाहिए।

(३) किसी पुस्तक विशेष के अनुवाद, उस पर सम्मतियाँ, उसकी कुंजी, प्रश्नोत्तर, विश्लेषण और व्याख्या आदि रूप में दूसरी पुस्तकें मूल पुस्तक के साथ ही रखनी चाहिये।

जैसे —मेन कैम्प की एक व्याख्या ९४३ ०८५

(४) जिन पुस्तकों में स्थान विशेष के साथ साथ किसी विषय की ओर झुकाव हो तो उन्हें विषय के साथ ही रखना चाहिये।

जैसे —प्लांट हन्टर इन तिब्बत ५८१ ९५१५
ज्यालोजी आफ पीकशावर ५५४ २७४

(५) किन्हीं विषयों पर पुस्तकें यदि किसी देश, व्यक्ति, या दूसरे विषय का विशेष विचार करते हुए लिखी गई हों तो उन्हें अधिकतम सूक्ष्म या निश्चित विषय में रखना चाहिये।

जैसे—स्ट्रक्चरल ज्योलोजी विद स्पेशल रेफ्रेंस टु इकोनोमिक डिपोजिट्स ५५१ ८

(६) जब कोई विषय दूसरे विषय को प्रभावित करता हो तो पुस्तक को प्रभावित विषय में रखना चाहिये जो कि साधारणतः उसका अधिक निश्चित विषय होता है।

जैसे —इरेस्मस और नोदन रेनेसां ९४० २१

(७) जब कोई विषय विशेष दृष्टिकोण से लिखा गया हो तो उसे

दृष्टिकोण के बजाय विषय में रखना चाहिए। ड्युई ने कभी कभी अपने देश [redacted] भाषा को प्रधानता भी दी है। जैसे :—

ऐञ्जीनियरिंग और साइन्स के विद्यार्थियों के लिये गणित ५१०१
ड्युई की प्रधानता, जैसे विदेशियों के लिये इङ्गलिश
पढ़ने की पाठय पुस्तकें ४२८·२४

(८) पुस्तकें हमेशा ही पहले विषय के अनुसार और फिर बाद में रूप के अनुसार वर्गीकृत की जाती हों ऐसा नहीं है। कुछ अवस्थाओं में वे अपनी जिल्द (जब विशेष सरकरण हों), अपने पाठक विशेष (जैसे बच्चे, या नेत्रहीन पाठक हों), अपने आकार (जैसे समाचार-पत्र), अपने काल (तिथि) (जैसे इन्क्युनेबुला) और कुछ सचित्र पुस्तकों में वे अपने चित्रों के विशेष प्रतीक के अनुसार भी व्यवस्थित और वर्गीकृत की जाती हैं।

(९) सब को अन्तर्भूत करनेवाला नियम है कि पुस्तक को ऐसे स्थान पर रखिये जहाँ वह अधिक से अधिक उपयोगी हो सके और इसके लिए कारण भी बता सकना चाहिये।

(१०) क्रियात्मक तौर पर किसी वर्ग संख्या की समुचितता की परीक्षा इसी बात से होती है कि वह उस पुस्तक के लिए विषय शीर्षक (Subject headings) तथा सूची अनुक्रमणिका संलेखों (Index Entries) के चुनाव में कहाँ तक सहायक होता है।

(११) सदा यह ध्यान रखना चाहिए कि वर्गीकरण का अभ्यास करते हुए अनुक्रमणिका से वर्गीकरण कभी नहीं करना चाहिये, सदा सारणियों से ही वर्गीकरण करना चाहिए तथा अनुक्रमणिका से उसकी जाँच कर लेनी चाहिए।

इसके अतिरिक्त यदि अनुक्रमणिका से किसी विषय का निर्धारण किया गया हो तो भी सम्बद्ध सारणियों को अवश्य देखना चाहिये।

(१२) सारणियों में वर्ग संख्या स्थिर कर लेने के बाद भी उससे आगे और पीछे के शीर्षकों पर एक दृष्टि डाल लेनी चाहिये उससे गलती की सम्भावना काफी कम हो जाती है।

रूपविभाग आदि के लिये

(११) सारणियों से वर्गसंख्या जहाँ तक बन सकती है वहाँ तक बना लेने के बाद रूपविभाग के अङ्कों का प्रयोग करना चाहिये।

पर इनका प्रयोग यन्त्र की भाँति बिना विचारे नहीं करना चाहिये। परीक्षा में गलत प्रयोग करने की अपेक्षा इनका प्रयोग न करना अधिक अच्छा है।

यदि प्रयोग में कोई सन्देह हो तो इनका (रूपविभागों का तथा भौगोलिक अङ्कों का) प्रयोग तभी कीजिए जब सारणियों में या कहीं भी निश्चित निर्देश प्रयोग के लिये दिये गये हों।

(१४) पुस्तक के शीर्षक में ' का इतिहास', ' पर निबन्ध', या ' की एक रूपरेखा' आदि देखने मात्र से रूपविभागों का प्रयोग नहीं कर देना चाहिये। ' के इतिहास पर निबन्ध' देखने से ०९०४ का प्रयोग कर देना गलत होगा।

(१५) पुस्तक के विषय को पूरा-पूरा व्यक्त करने के ख्याल से चिह्नों के असंभव सयोगों का आविष्कार नहीं करना चाहिये।

सदा ध्यान रखिए कि—

(१६) दशमलव का प्रयोग एक ही बार करना चाहिये, आगे कहीं हो तो उसे हटा कर अङ्कों को एक साथ ही लिख दिया जाता है। कोलन पद्धति में कोलन का प्रयोग कितनी ही बार किया जा सकता है।

(१७) जहाँ 'Divide like' (९४०–९६९ इत्यादि) निर्देश दिया हो, वहाँ इन अङ्कों से पहले ० का प्रयोग नहीं किया जाता है, बल्कि उनमें से भी पहला अङ्क (जैसे ९४२ का ९) और कभी कभी दूसरा अङ्क (जैसे ४) भी प्रयुक्त नहीं होता है।

पर जहाँ 'Divide like' निर्देश न हो तथा दूसरी सारणियों में से अङ्कों का प्रयोग करना आवश्यक हो तो ० लगाकर पूरे पूरे अङ्कों का ही प्रयोग करना चाहिये।

(१८) जहाँ 'Divide like whole classification' का निर्देश हो वहाँ भी निर्देश होने के कारण ० का प्रयोग तो होगा ही नहीं, पर सारणियों के अङ्कों में से कोई अङ्क छूटता नहीं है, सारे ही अङ्कों का प्रयोग करना चाहिये।

(१९) सामान्य रूपविभाग के अङ्कों से पहले एक ० का प्रयोग करना चाहिए, पर यदि सारणियों के विभागों पर एक ० का (या दो ०० का) प्रयोग कर लिया गया हो तो सामान्य रूप विभाग के अंकों से पहले ०० का या ००० का प्रयोग करना चाहिये।

(२०) १००, २०० आदि दो शून्यों वाले वर्गाङ्कों के साथ सामान्य रूपविभाग का पहला अङ्क इनके तीसरे अङ्क के स्थान पर आ जाता है, यदि १२०, ५६०, ९५० आदि एक शून्य वाले वर्गाङ्क हों तो दशमलव के बाद

सामान्य रूप विभागों का एक शून्य कम हो जाता है। साधारणतः उनमें एक ही शून्य रहता है अतः उनका दशमलव के बाद बिना शून्य के ही प्रयोग कर दिया जाता है। पर सारणियों आदि को देख कर सोच समझ कर प्रयोग करना चाहिए। किसी विषय का दूसरे विषय से सम्बन्ध दिखाने के लिए ०००१ को लगाने के बाद सम्बद्ध सारणियों से नियत अङ्क पूरे रूप में वहाँ जोड़ दिये जाते हैं।

किसी पद्धति के अभ्यास और परिचय के लिए—

(१) अपनी नियत वर्गीकरण पद्धति की सारणियों को बार-बार पढ़ना चाहिए। विशेष तौर से 'वर्ग संख्या बनाने की विधि' को समझना चाहिए।

(२) अपने पुस्तकालय के संग्रह की (विशेष तौर से) नई पुस्तकों के वर्गीकरण को ध्यान से देखते रहना चाहिए।

(३) जहाँ तक सम्भव हो पुस्तकों, आलोचनाओं और विभिन्न लेखों के वर्गीकरण में अपना अधिक से अधिक समय लगाना चाहिए और अपने निर्णयों की परीक्षा ऊपर की ओर के मुख्य वर्गों तथा अनुक्रमणिका (Index) से कर लेनी चाहिए।

(४) काफी अच्छा अभ्यास वर्गीकृत सामयिक सूचियों के देखने से तथा उनमें परीक्षा करने से हो सकता है।

(५) पर सदा यह ध्यान रखिए कि अनुक्रमणिका से कभी भी वर्गीकरण नहीं करना चाहिये, उससे अपने नियमों की केवल जाँच करनी चाहिए।

(६) पद्धति में दी गई भूमिका तथा प्रारम्भिक नियमों एवं निर्देशों को बार-बार पढ़ते रहना चाहिए।

००० सामान्य कृति वर्ग

इसमें इस प्रकार की पुस्तकें आती हैं जो विविध विषयों से इतनी मिश्रित और सामान्य प्रकृति की होती हैं कि वे विशेष विषयों के किसी भी वर्ग में नहीं रखी जा सकतीं।

(१) ००० का प्रयोग साधारणतः नहीं हो होता क्योंकि सभी प्रकार की पुस्तकें प्रायः इसके अगले उपविभागों में रखी जा सकती हैं। सब विषयों को सम्मिलित करने वाले विश्वकोश, शब्दकोश आदि ०३०–०३९ में आ सकते हैं।

(२) ०४ में विविध विषयों के बहुत-सी मिश्रित प्रकार के पैम्फलेट्स तथा निबन्ध आदि आते हैं।

जैसे :—जनरल पैम्फलेट्स इन फ्रेंच ०४४

(३) इस वर्ग में साधारणतः ०१० (वाङ्मय सूची विज्ञान) ०९० (पुस्तकीय दुष्प्राप्यताएँ), ६५५ १ (प्रिंटिंग का इतिहास) ये एक दूसरे को व्याप्त करने वाले होने से इनमें काफी संदेह हो जाता है। इस विषय में सेयर्स महोदय का मत इस प्रकार है—

०१० में जनरल बिब्लियोग्राफी के सिद्धान्त रखिये।

जैसे —ईजडेल, मैन्युअल आफ बिब्लियोग्राफी ०१०। डैवन्पोर्ट, दी बुक इट्स हिस्ट्री एण्ड डेवलप्मेन्ट ०१० ९ पुस्तक का साधारण इतिहास ०१० में रखो, प्रिंटिंग का इतिहास ६५५ १ में।

(४) ०१६ विशेष विशेष विषयों की बिब्लियोग्राफी के लिये है, और 'सारे वर्गीकरण के अनुसार', इसे 'विभक्त' किया जा सकता है।

जैसे —०१६ २१ टाइबल की बिब्लियोग्राफी, ०१६ ३४ कानून की बिब्लियो०, ०१६ ९४२१ लन्दन की बिब्लियो०।

०९० ये इस प्रकार की पुस्तकों के लिए हैं जिन्हें किन्हीं भी कारणों से 'म्यूजियम की वस्तुएँ', कहा जा सकता है। अर्थात् जो विषय की अपेक्षा ऐतिहासिकता या उत्सुकता के दृष्टिकोण से अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इस प्रकार की पुस्तकों के विषय में लिखी गई पुस्तकें भी इसी के अन्तर्गत आती हैं।

१०० दर्शन वर्ग

(१) ११० १२० और २३० २६० में कुछ गलती हो सकती है। पर पुस्तकें जो धार्मिक ढंग से नहीं लिखी गई हैं उन्हें दर्शन में रखिए। जैसे, डैलेनीज की 'ऐविडेन्स फॉर ए फ्यूचर लाइफ' १२८ में, पर वर्गर की इटर्नल होप २३७ में रखी जानी चाहिये।

(२) साधारण १५० में मानसिक शक्तियाँ (मेंटल फैकल्टीज), तथा दूसरे मन और शरीर के विषय १३० में आ जाते हैं। पर थेरापेटिक्स और शरीर से सम्बद्ध रोगों को ६०० में रखना चाहिए। जैसे, सजेशन इन ब्रेन ट्रबल १३१, ट्रेनिंग ▮ क्योर पैरेलिसिस ६१७५१।

इसके अतिरिक्त 'ऐप्लिकेशन्स आफ साइकोलोजी' अपने सम्बद्ध विषयों के ही साथ रखने चाहियें। (१३ में संस्करण की १५९ ९ वाली वैकल्पिक पद्धति भी अपनाई जा सकती है)।

जैसे —साइकोलोजी आफ ऐडवर्टाइजिंग ६५९ १

अथवा वैकल्पिक पद्धति में, जैसे—

साइकोलोजी आफ ऐजुकेशन	१५९ ९८३७
" " मेडिसिन	१५९ ९८६१

(३) दार्शनिक पद्धतियों को १४० में न रखकर १८० १९० में सम्बद्ध दार्शनिकों के ही साथ रखना चाहिये।

(४) १०९ तथा १८०–१९० के प्रयोग में सावधानी रखिए। १०९ दर्शन के सामान्य इतिहास के लिए है, विशेष इतिहासों के लिए नहीं। लेवी की 'हिस्ट्री आफ फिलोस्फी' १०९ में की जा सकती है, पर जेलर की 'हिस्ट्री आफ ग्रीक फिलोसफी' १८० वाले वर्ग में आयगी।

२०० धर्म वर्ग

इसे ४ निश्चित भागों में बाँटा जा सकता है—

२००–२१६	सामान्य धर्म
२२०–२२९	हिन्दू और ईसाई धर्म ग्रंथ (स्क्रिप्चर्स)
२३०–२८६	ईसाई धम
२९०–२९९	गैर ईसाई धर्म और धम ग्रंथ

पहले और तीसरे विभागों में भेद का ध्यान रखना चाहिये। ईसाइयत से सम्बन्धित पुस्तकें २३०–२८९ में जानी चाहियें, पर खास ईसाइयत से सम्बन्ध न रखने वाली सामान्य धर्म की पुस्तकें २००–२१६ में रखी जायेंगी। जैसे, 'गॉड इन नेचर' २११, न कि २३१। पर प्यूरिटेस्टांट के धम ग्रन्थों के या ईसाई चर्च के दृष्टिकोण से परमात्मा पर विचार करने वाली पुस्तकें २३१ में जायँगी, २११ में नहीं।

२२०–२२६ का विभाग सरल ही है। यह ध्यान रखना चाहिए कि पुस्तक-विशेष के बारे में कोई पुस्तक उसी मूल पुस्तक के साथ रखी जायगी।

२९९ में यह ध्यान रखें कि यहाँ ईसाई के अलावा गैर ईसाई विषय आयगा तो गलती की कम सम्भावना होगी।

साधारण नियम है कि—सब धर्मों से समान रूप से सम्बद्ध दार्शनिक विषयों को दर्शन में रखिए—जैसे अच्छाई और बुराई की वास्तविक प्रकृति, मूल कारणों का विचार इत्यादि जब तक कि उनमें सीधा कोई धार्मिक विश्वास या उसकी आलोचना न हो।

३०० समाजशास्त्र

वर्गकार को चाहिए कि वह कम से कम ऊपर की ओर पढ़ कर जाँच कर ले कि पुस्तक मुख्य वर्ग में तो आती है या नहीं। ऐसी दशा में उसका वर्गीकरण सम्भवत ठीक हो सकता है। जैसे—क्रियात्मक इन्जीनियरिंग की

पुस्तकों को ३८० (टेलिग्राफ, रेल रोड्स आदि) में गलती से रख दिया जाय तो ऊपर की ओर मुख्य वर्ग का विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि यह स्थान इस पुस्तक के लिए ठीक नहीं हो सकता क्योंकि इस वर्ग में तो आर्थिक, राजनैतिक और प्रशासनात्मक पहलुओं वाली ही पुस्तकें आनी चाहियें। 'यान्त्रिक' या 'उपयोगी' दृष्टि से विविध प्रक्रियाओं को बताने वाली पुस्तकें यहाँ नहीं वल्कि ६०० आदि में जा सकती हैं।

३१० का विभाग—यहाँ ३१० सामान्य स्टेटिस्टिक्स, स्टेटिस्टिक्स की टैकनीक और जन संख्या की स्टेटिस्टिक्स के लिये है। जैसे—'ए स्टेटिस्टिकल रिकोर्ड आफ इङ्गलैण्ड ३१४'२। पर विषय विशेष का संख्या तत्त्व (स्टेटिस्टिक्स) अपने विषय के ही साथ रखा जायगा। (यदि स्टेटिस्टिक्स का ही विशेष पुस्तकालय न हो तो)। जैसे—स्टेटिस्टिक्स आफ काटन मैनुफेक्चर्स इन इंगलैण्ड ६७७ २।

३३१—मजदूरों के जीवन, उनके कार्य की परिस्थितियों तथा मालिकों के साथ प्रत्येक प्रकार के आर्थिक सम्बन्ध के लिये है। ध्यान रखना चाहिए कि ३२५ और ३२३ केवल अमेरिकनों के लिये हैं। ऐमिग्रेशन को जो देश छोड़ा जाता है उनमें तथा इमिग्रेशन को जिस देश में पहुँच जाते हैं उसमें रखिये विदेशों से सम्बन्ध ३२७ में रखते हैं। इसके बाद जिस देश से सम्बन्ध होता है उसका नम्बर लगा देते हैं। इसे भली प्रकार समझ लेना चाहिए। जैसे—रिलेशन्स आफ ब्रिटेन विद स्पेन ३७२'४२ नहीं)।

४०० व ८०० भाषाशास्त्र और साहित्य

भाषा साहित्य का आधार है। साहित्य किसी भाषा में ही गूँथा जाता है। दोनों परस्पर अत्यन्त सम्बद्ध हैं साहित्य की रूपरेखा भाषा शास्त्र की रूपरेखा पर आश्रित है। ८९० (दूसरी भाषाओं के साहित्य) में साहित्य वर्ग के रूप विभागों १ कविता आदि के बाद आगे विभाजन के लिए ४९० के ही उपविभागों का प्रयोग किया जाता है।

भाषाशास्त्र और साहित्य वर्ग में अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी साहित्य का विस्तार से विभाजन किया गया है। तथा विशेषकर भाषाशास्त्र में दूसरी भाषाओं के लिये इंगलिश के उपविभागों की ही तरह विभक्त करने के लिये कहा गया है। जैसे—४२६ ८ इंगलिश में पद्य-रचना की पाठ्य पुस्तक, ४३६'८ जमन में पद्य-रचना के लिए पाठ्य पुस्तकें। ४९१७६८ रशियन में पद्य-रचना के लिये पाठ्य-पुस्तकें।

साहित्यवर्ग डयूई में शुद्ध साहित्य (बेलीज-लटर्स) तक ही सीमित है, तथ्य विषयक जानकारी इसमें नहीं आती है। साहित्य वर्ग में विभाग इस प्रकार किया है :—

१ भाषा

२ रूप, तथा

३ लेखकों का कालक्रम

विदेशी भाषाओं के ग्रन्थों के विषय में कुछ कठिनाई हो सकती है। *सर्व सामान्य नियम यह है कि किसी पुस्तक के विषय में लिखी गई पुस्तकें,* पाठान्तर, विभिन्न रूप, अनुवाद या उसके चुने हुए स्थल, उसकी पदानुक्रमणिकाएँ आदि उस मूल पुस्तक के साथ ही रखे जाते हैं। यदि पुस्तक नौन फिक्शन कथा-साहित्य न हो तो सूची में भाषा के लिए अन्तर्निर्देश करके उस विषय के अनुसार वर्गीकरण कीजिए।

ब्रैडले की शेक्सपीयरन ट्रेजेडी, शेक्सपीयर के नाटक, लैम्ब की टल्स फ्रोम शेक्सपीयर, बार्टलेट की कौन्कौर्डेंस टु शेक्सपीयर—ये सब ८२२ ३३ में ही रखी जाती हैं।

एक लेखक या साहित्य, जब दूसरे लेखक या साहित्य को प्रभावित कर रहा हो तो पुस्तक प्रभावित विषय में रखी जाती है। पर यदि किसी एक लेखक का किसी साहित्य पर प्रभाव वर्णित हो तो पुस्तक को उस लेखक की पुस्तकों के साथ रखा जाता है। जैसे—'बायरन का जर्मन-साहित्य पर प्रभाव' पुस्तक बायरन के साथ रखी जायगी।

साहित्य के सामान्य वर्णन और सिद्धान्तों की पुस्तकें ८०१ में रखी जाती हैं। जैसे हीलिग्स बग की 'प्राइमर आफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म'। लिखने की, उद्धरण की ओर वक्तृत्व-कला की पुस्तकें (जिनमें कुछ चुनी हुई कविता आदि के उद्धरण हो सकते हैं, पर केवल कविताओं, नाटकीय उद्धरणों आदि के संग्रहमात्र न हों) ८०८ में रखी जाती हैं। जैसे केर की 'आर्ट आफ पोयट्री ८०८·१, इर्विन की 'हाउ टु राइट ए प्ले' ८०८·२, नाइट की 'गाइड टु फिक्शन राइटिंग' ८०८·३ इत्यादि। ८०८८ में केवल सामान्य संग्रह ग्रन्थ (ऐन्थोलोजीज) तथा उद्धरणों की पुस्तकें आती हैं। विशेष विषयों की ऐन्थोलोजीज और निबंध-संग्रह अपने विषयों के ही साथ रखे जाते हैं।

८९० के विभाग में वर्गीकरण बिल्कुल ४९० की ही तरह होता है, केवल ४ की जगह ८ रख दिया जाता है। जैसे—

पर्शियन भाषाशास्त्र	४९१.५५	केल्टिक साहित्य	८९१.६
पर्शियन साहित्य	८९१.५५	रशियन साहित्य	८९१.७

इनमें तथा सारे साहित्य वर्ग में साहित्य वर्ग के केवल रूप विभाग ही और बढ़ा दिये जाते हैं। जैसे—

८९१.६ केल्टिक साहित्य	८९१.६२ केल्टिक नाटक
८९१.६१ केल्टिक काव्य	८९१.६३ केल्टिक कथा-साहित्य

वैयक्तिक लेखकों की पुस्तकें जिन्होंने साहित्य के दो रूपों में लिखा हो उनके अधिक प्रसिद्ध एक ही रूप में रखना चाहिये। जैसे—शेक्सपीयर की सब पुस्तकें प्रायः ८२२.३३ में और टेनीसन की सब पुस्तकें प्रायः ८२१.८१ में रखी जायेंगी।

५०० विशुद्ध विज्ञान

इसे दशमलव पद्धति में चार भागों में बाँटा गया है—

सामान्य विज्ञान
गणित विज्ञान
भौतिक विज्ञान
प्राकृतिक-विज्ञान

वर्गकार को वर्गीकरण में काफी सहायता मिलेगी यदि वे इस वर्ग के पारिभाषिक शब्दों से भलीभाँति परिचय प्राप्त कर लें। विशेष तौर से रसायन, प्राणि विज्ञान और वनस्पति विज्ञान में। निम्न कुछ बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए—

(१) यह विशुद्ध विज्ञान का वर्ग है। विज्ञान के क्रियात्मक (प्रयोगात्मक) भाग से इसमें भेद रखना चाहिये जैसे यहाँ गणित की पद्धतियाँ, सिद्धान्त और समस्याएँ आ सकती हैं, पर 'इंजीनियर्स के लिए गणित' इंजीनियरिंग में जायगी।

इसी प्रकार ५२९.७८, ६८१.१११ तथा ७४९ ये तीनों घड़ियों के लिए प्रयुक्त होते हैं। पर ५२९.७८ में घड़ियों के सिद्धान्त का, ६८१.१११ में निर्माण का तथा ७४९ में उनकी सजावट का वर्णन रहेगा।

(२) ५०८.३ में पूर्णतः वैज्ञानिक भ्रमण (जो कम या अधिक सारे विज्ञानों से सम्बद्ध रहते हैं) आते हैं। इन्हें ९४०-९९९ की भाँति विभक्त कर दिया जाता है। सन्देह होने पर ९१४-९१९ में रख सकते हैं।

(३) प्राणि विज्ञान में प्राणि विशेष सम्बद्ध पुस्तकें उस प्राणी के साथ रखी जाती हैं। जैसे, 'इन्स्टिन्क्ट आफ बीज', 'बीज' में रखी जायगी, 'इन्स्टिन्क्ट' में नहीं।

६०० उपयोगी कलाएँ या क्रियात्मक विज्ञान

दशमलव पद्धति में ६० का यह वर्ग बड़ा ही मिश्रित-सा है। इस वर्ग में सब निर्देशों को पढ़ने में बहुत सावधानी रखनी चाहिए। एक बार वर्ग की विशेषताएँ भलीभाँति समझ लेने पर मुख्य कठिनाइयाँ दूर हो जायँगी।

६०० में किसी विषय के प्रयोगात्मक पक्ष ही रखे गये हैं।

६५८ को विशेष ध्यान से पढ़ना चाहिए।

औषधि विज्ञान में किसी अङ्ग विशेष के किसी रोग का अध्ययन उस अङ्ग के साथ ही रखा जाता है। इसी प्रकार किसी अङ्ग विशेष की शल्य चिकित्सा (सर्जरी) भी उस अङ्ग के ही साथ रखी जाती है न कि उस सिस्टम के साथ जिसका कि यह अङ्ग एक भाग है। औजार उस क्राफ्ट के साथ रखे जाते है जहाँ उनका प्रयोग होता है।

उद्योग विशेषों का लेखा (एकाउन्टिंग) विज्ञापन इत्यादि एकाउन्टिंग इत्यादि में जाना चाहिये और फिर उसे उद्योगों से विभक्त कर देना चाहिये (वर्गीकरण के अनुसार)। पर सेयर्स के अनुसार इस प्रकार के विषयों को उद्योग विषयों में ही रखना अधिक अच्छा है।

६७० में एक मुख्य निर्देश है, उसे ध्यान से पढ़िये।

७०० ललित कलाएँ व मनोरञ्जन

(१) ७०८ में केवल 'आर्ट म्यूजियम' ही स्थान पायेंगे। साधारण म्यूजियम्स विशेष तौर से ०६९ में रखे जाते हैं, साइन्स म्यूजियम्स ५०७ में, दूसरे वर्गों के म्यूजियम्स को अपने अपने विषयों में रखना चाहिये। जैसे, डोमेस्टिक इकोनोमी का म्यूजियम ६४०·७४। सामान्यरूप में कलाकृतियों का संग्रह ७०८ में आता है। पर विशेष विषयों के पदार्थों का संग्रह अपने अपने विषय के साथ ही वर्गीकृत किया जाता है।

(२) ध्यान रखना चाहिए कि थियेटर और नाटक की पुस्तकों में भेद है। थियेटर, उसके बनाने और खेलने की कला विषयक पुस्तकें ७९२ में रखी जाती हैं। पर नाटकों, तथा उन पर आलोचना आदि की पुस्तकें साहित्यवर्ग में जाती हैं।

९०० इतिहास और इसके अन्तर्भूत विषय

यह काफी प्रमुख वर्ग है और बहुत से उपवर्गों से बहुत भारी हो गया है। मोटे तौर पर इसमें ३ विषय हैं—भूगोल, जीवनी, और इतिहास। ९०० इतिहास सामान्य (भूगोल, यात्रा, एवं जीवनी सामान्य इसमें नहीं आती हैं)।

९१० भूगोल एवं यात्रा विवरण
९२० जीवनी
९२९ वंशविद्या एवं कुलविद्या
९३० प्राचीन इतिहास
९४०–९९९ आधुनिक इतिहास

यहाँ निम्नलिखित कुछ मुख्य बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए :—

(१) किसी देश के इतिहास के एक भाग को उसके वर्णित काल में रखना चाहिए न कि उस देश के सामान्य इतिहास में।

जैसे —गार्डिनर की हिस्ट्री आफ द ग्रेट रिबोल्युशन ९४२०६ (९४२ नहीं)।

(२) यदि कोई पुस्तक इतिहास के दो कालों को आत्मसात् करती है तो उसे प्रथम काल में रखना चाहिये जब तक कि द्वितीय काल पहले की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण न हो। यदि इसमें अनेक कालों का वर्णन हो तो पुस्तक को सामान्य शीर्षक में रखना चाहिये।

(३) द्वीपों को उनके निकटवर्ती देशों के साथ रखना चाहिये।

(४) बहुत से देशों में गुजरती हुई नदियाँ उस महाद्वीप में रखी जाती हैं।

(५) यात्राओं में यदि वैज्ञानिक दृष्टिकोण महत्त्वपूर्ण हो तो ५०८१–९ में रखना चाहिए। यदि संदिग्ध हो तो यात्रा में भी रख सकते हैं।

(६) जब किसी यात्रा विवरण में यात्रा की अपेक्षा व्यक्ति अधिक महत्त्वपूर्ण हो तो उसे व्यक्ति की जीवनी में रखना चाहिए। जैसे प्रिंस आफ वेल्स की यात्राएँ, नेहरू की रूस एवं अमेरिका यात्राएँ।

(७) किसी देश के इतिहास की प्रतीक संख्या में ९ के बाद १ लगा दिया जाय और दशमलव बिन्दु को एक अंक बाईं ओर हटा दिया जाय तो वह उस देश के भूगोल का प्रतीक बन जाता है। जैसे ९५४ भारत का इतिहास ९१५.४ भारत का भूगोल।

जीवनी

दशमलव-पद्धति में जीवनी को उसके रूप की दृष्टि से दो भागों में बाँटा जा सकता है। (१) स्थान की दृष्टि से सामान्य और संगृहीत जीवनियाँ (२) विषय विशेष की दृष्टि से वैयक्तिक और संगृहीत जीवनियाँ। प्रथम प्रकार की जीवनियों को ९२० सामान्य में रख कर उसे देश या स्थान के प्रतीकों से विभक्त कर लिया जाता है।

जैसे :—

प्रमुख अंग्रेज लोग	९२ ०४२
प्रसिद्ध इटालियन्स	९२०·४५

दूसरे प्रकार की जीवनियों को जो विषय से सम्बन्धित रहती हैं ९२०–९२८ के उपशीर्षकों में रखा जाता है।

जैसे :—

पेंटर्स की जीवनी	९२७५
माइकेल ऐंजेलो की जीवनी	९२७ ३

साहित्यिक महत्त्व वाले पत्रों को साहित्य के साथ रखा जाता है न कि जीवनी में।

जैसे :—

हॉरेस वाल पोल के पत्र

परन्तु सामान्य प्रकृति के वैयक्तिक पत्रों को लेखक की जीवनी के साथ और विशेष विषयों से सम्बन्ध रखने वाले पत्रों को विषय के साथ रखना चाहिए। ऐसी दशा में अन्य सम्बन्धित विषयों से उसका अन्तर्निर्देश सूचीकरण में कर देना चाहिए।

इस प्रकार उपयुक्त विधि से वर्गसंख्या निश्चित करने के बाद उसे उस पुस्तक में, तथा उसकी पीठ पर लगे हुए लेबुल पर लिखा जाता है। उसके सम्बन्ध में यह ध्यान रखना चाहिए कि यह वर्गसंख्या अधूरी रह जायगी यदि इसके साथ किसी प्रामाणिक विधि से अन्य सहायक प्रतीक संख्यायें न लगाई जायँ। इसके सम्बन्ध में इस पुस्तक में पृष्ठ ३३ ३८ पर लिखा गया है। किसी भी विधि से वर्गसंख्या के साथ अन्य आवश्यक प्रतीक संख्यायें लगा देने पर जब क्रामक संख्या पूर्ण हो जाती है तो उसे रख-रखाव और उपयोग की सुविधा के लिए पुस्तक की पीठ पर लगे हुए एक लेबुल पर भी लिखा जाता है।

परिशिष्ट (क)

पारिभाषिक पदावली

हिन्दी	*अंग्रेजी*
अंक	Digit
अकारादि क्रम	Alphabetical order
अन्तर्निर्देश	Cross reference
अन्त्य जाति	Infima species
अनुकूल क्रम	Helpful order
अनुक्रमणिका	Index
अनुविन्यास	Array
अनुविन्यास में ग्राह्यता	Hospitality in array
अभ्यानति अंक प्रक्रिया	Bias number device
अमूर्त	Abstract
अवशिष्ट सत्त्व वर्ग	Residual class
अवस्था	State
अविरुद्ध क्रम	Consistent order
अविरोध	Consistency
अव्यवहित	Immediate
अष्टक विधि	Octave device
आंशिक समवबोध	Partial comprehension
आनुतिथि क्रम	Chronological order
आप्त क्रम	Canonical order
आभिधार्मिक विभाग	Metaphysical division
आसन्न उपजाति	Proximate species
आसन्न जाति	Proximate genus
इयत्तात्मक क्रम	Quantitative order
इकाई	Unit
उद्देश्य	Subject
उद्विकासी क्रम	Evolutionary order
उपजाति	Species
एक सत्त्वीय वर्ग	Unitary class
ऐकान्तिकता	Exclusiveness

कर्म	Possivity
काल	*Time*
कृत्रिम	Artifical
कृत्रिम वर्गीकरण	Artifical classification
क्रम	Order
क्रम संख्या	Ordinal number
क्रामक संख्या	Call rumber
क्रिया	Action
क्षेत्र	Universe
गुण	Quality
गुरुत्व क्रमबद्धता	Filiatory arrangement
ग्राह्यता	Hospitality
जटिलता वृद्धिक्रम	Increasing complexity
जाति	Genus
ज्ञान वर्गीकरण	Knowledge-classification
तार्किक विभाग	Logical division
तार्किक वर्गीकरण	Logical classification
दशमलव वर्गीकरण	Decimal classification
दार्शनिक वर्गीकरण	Philosophical classification
दिशा	Place
दूरस्थ उपजाति	Remote species
दूरस्थ जाति	Remote genus
द्रव्य	Matter
द्रव्य बोध	Denotation
द्विबिन्दु वर्गीकरण	Colon Classification
दृष्टिकोण	Viewpoint
धर्म	Attribute
निर्देशन	Enumeration
निःशेषता	Exhaustiveness
पक्षपोषित	Favoured
पद	*Term*
पद की गहनता	Intension of the term

पद का विस्तार	Extension of the term
पदार्थ	substance
पद्धति	scheme
परिमाण	Quantity
परिस्थिति	situation
पारिभाषिक पद	Terminology
पुस्तक संख्या	Book number
पुस्तक-वर्गीकरण	Book classification
पुस्तक-वर्गीकरण के विशेष तत्व	—Special feature
पुस्तकालय विज्ञान	Library Science
पृथक्करण	Differentiation
प्रक्रिया	Process
प्रचलन	Currency
प्रतिपाद्य विषय	Subject matter
प्रतीक	Notation
प्रयोग पक्ष	Practical side
प्रसंग	Context
प्राप्तिसंख्या	Accession number
बहुस्तरीय वर्ग	Multiple class
भागात्मक विभाग	Division of dichotomy
भौगोलिक क्रम	Geographical Order
महाजाति	Summum genus
मानसिक प्रक्रिया	Mental process
मिश्रित प्रतीक	Mixed notation
मुख्य	Main
मूर्त	Concrete
मूर्तवृद्धि	Increasing Concreteness
मूल	Origin
रूप	Form
रूप वर्ग	Form Classes
रूपविभाजन	Form division
लक्षण	Definition

वंश वृक्ष (पारफिरी)	Tree of porphyry
वरिम	Spatial
वर्ग	Class
वर्गकार	Classifier
वर्ग संख्या	Class number
वर्गाचार्य	Classificationist
वर्गीकरण पद्धति	Classification scheme
वाङ्मय वर्गीकरण	Bibliographical classification
वाङ्मय सूची	Bibliography
वितति	Extention
वितति अवरोह	Decreasing extension
विधि	Device
विधेय	Predicate
विभाग	Division
विभाजक धर्म	Characteristic
विस्तारशील वर्गीकरण	Expansive classification
विशिष्ट विषय	Specific subject
विशेष	Specific
विषय वर्गीकरण	Subject classification
वैज्ञानिक वर्गीकरण	Scientific classification
व्यक्ति-बोध	Denotation
व्यवच्छेदकता	Distinctiveness
व्यवस्थापन	Arrangement
व्यष्टिकरण	Individualisation
शारीरिक विभाग	Physical division
शीर्षक	Heading
श्रृंखला	Chain
श्रृंखला में ग्राह्यता	Hospitality in chain
श्रेण्य ग्रन्थ	Classical books
संयतता	Reticence
संयोजक	Copula
सलेख	Entry

सजाति	Co-ordinate species
सत्व	Entity
समस्त	Aggregate
समावेशकता	Modulatnon
सम्बद्ध अनुक्रम	Relevant sequeuce
सहगामिता	Concomitance
सहायक प्रतीक सस्यायें	Auxiliary Notations
सापेक्षता	Relativity
सापेक्षिक क्रम	Relative order
सामान्य उपभेद	Common subdivision
सामान्य वर्ग	General works
सामान्य सिद्धान्त	General theory
सामान्याभिधान	Intension
सारणी	Schedule
सार्वभौम दशमलव पद्धति	Universal decimal classification
सुनिश्चितता	Ascertainability
सुसंगति	Relevance
सूक्ष्म	Close
सूची	Catalogue
स्थानीय भेद	Local variation
स्थायित्व	Permanence
स्थूल	Broad
स्मरणशीलता	Mnemonic
स्वभाव धर्म	Property
स्वभाव बोध	Connotation
स्वाभाविक	Natural
स्वाभाविक वर्गीकरण	Natural classification

अनुक्रमणिका
